

# BHASHASAR

PART I

OR

A GOOD READER OF THE HINDI LANGUAGE  
COMPILED FROM THE BEST WORKS IN HINDI,

BY

SAHAB PRASAD SINHA

*Manager, Khaddavilas Press and Kshatriya Patrika, and Harish Chandra  
K. offices and author of Guruganit Satak, Ganit Battisi  
annilas, Karyakala, Strishiksha, Bhasha-tatwa-bodh,  
Sutaprabodh, Manaspathantar, Manasmayanka,  
Pahora Prakash, and Ras Rahasya.*

## भाषा-सार

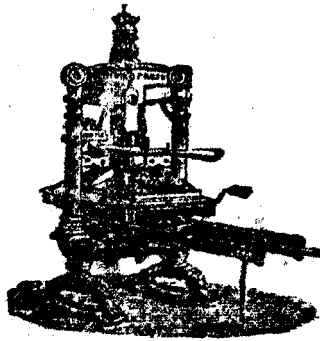
अर्थात्

हिन्दी भाषा की एक उत्तम पुस्तक ।

जमु के खड्गविलास प्रेस, और क्षत्रिय-पत्रिका, हरिश्चन्द्रकला के मनेजर  
और गुरुगणितशतक, गणितवत्तीसी, सज्जनविलास, काव्यकला,  
शिक्षा, भाषातत्त्वबोध, सुताप्रबोध, मानसपाठान्तर,  
मानसमयंक, पहाड़ाप्रकाश, और रसरहस्य के संग्रहकर्ता

साहब प्रसाद सिंह ने

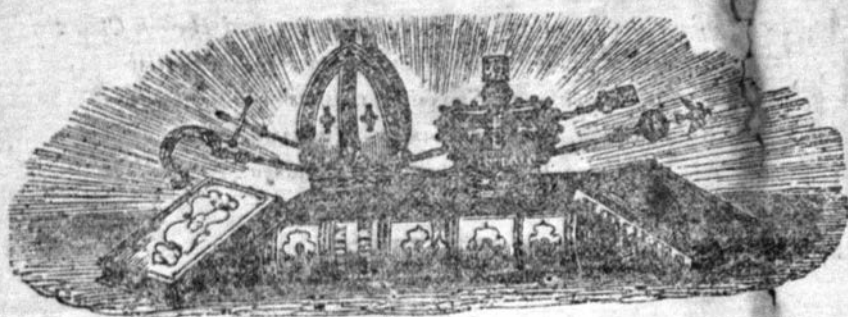
अनेक उत्तम हिन्दी ग्रन्थों से संग्रह कर छपाया ।



पटना—“खड्गविलास” प्रेस—बांकीपुर ।

साहब प्रसाद सिंह ने छाप कर प्रकाशित किया ।

१८९०.



PRINTED & PUBLISHED BY SAHAB PRASAD SINHA,  
AT THE KHADGAVILAS PRESS, BANGKIPUR.

1890.

## PREFACE.

---

Some years ago, I had compiled a Hindi Reader entitled the "*Bhashasar*". It will be presumptuous on my part to say any thing as regards the merits of the book. According to the well-known Hindi proverb, "no one calls his own curdled milk sour." The fact of its meeting with the approval of an ardent promoter of Hindi literature like Mr. S. Pope, late Inspector of Schools, Behar Circle, and of its being selected as a text book of the Middle Vernacular Scholarship Examination testifies to its usefulness.

I tender my sincerest thanks to those gentlemen who have, at the instance, of Mr. Pope reviewed and reviewed favourably this my humble compilation and especially to G. A. Grierson, Esq., B. A., C. S., who has been pleased to take rather a more favourable view of the merits of the book than it actually deserves.

The book has undergone several editions and every time that it was published, it underwent some modification both in the matter and in the manner of its arrangement. Mr. Pope had suggested that new extracts which are actually good ones and which had not found a place in the book should be incorporated in it; while the others which were selected in the first instance for want of better ones and which can now be advantageously replaced by those of a superior kind should be abstracted from it. These suggestions have been kept in view in issuing this the 6th edition of the book.

Last year when Mr. Pope was going to England, he had impressed upon me the desirability of making amendments in the next edition of *Bhashasar* in consultation with a Hindi scholar like Mr. Grierson and of not allowing such matters to remain in it as may be got by heart parrot-like by the school pupils, but such as may give its readers a decent knowledge of the Hindi language and make them sufficiently proficient in it to be able to understand the other books of that language and also to write it correctly.

I have accordingly consulted Mr. Grierson and have effected improvements in the book on the line indicated by that gentleman.

The present Inspector of schools Dr. Martin, has kindly selected this the 6th edition of the book as a text book of the Middle Vernacular Scholarship Examination and I take this opportunity of thanking him for this favor and also of thanking those gentlemen who, at his instance, have passed favourable remarks on the compilation.

I have also to tender my acknowledgments to Babu Kali Cumar Mitter, B. A., Head Master, Patna Normal School, for suggesting selections from Tapasi Ram's Prem Gang Tarang and Tulsi Das' Ramayan.

Although the book has increased in volume, it is offered to the public at its original price, as my intention in compiling it is not to make a capital out of it but to benefit the Hindi-reading public of the province.

It is requested that I may be communicated with, if for any reason, any selection is considered as unsuitable. I shall give my best consideration to the communication when issuing the next edition of the book.

SAHAB PRASAD SINHA.





## भूमिका.

दोहा ।

सुमिरि गजानन पद पदुम, उर धरि सीताराम ।

पवन सुअन को सुरति करि, बरनत गूथ ललाम ॥

कई वर्ष हुए मैंने हिन्दी में अनेक उत्तम विषयों का एक संग्रह किया था और उस का नाम भाषासार रक्खा। इस पुस्तक के विषय में मेरा कहना सुनना व्यर्थ है क्योंकि अपने दही को कोई भी खटा नहीं कहता ; परन्तु विद्यानुरागी तथा विज्ञतम मिस्टर पोप की न्यायदृष्टि में इस का जंचना और कुछ दिन से बराबर बिहार प्रान्त के मिडिल वर्णकुलर और जिला स्कूलों में “ कोर्स ” की पुस्तकों में रहना ही इस की यथार्थकता के सूचित करने को बहुत है। मिस्टर पोप के उत्साह बढ़ाने पर जिन लोगों ने कृपापूर्वक इस की समालोचना कर के मेरे श्रम को सुफल किया उन को मैं चित्त से धन्यवाद देता हूँ। विशेषतः मिस्टर ग्रियर्सन साहब बहादुर धन्यवादार्ह हैं।

यह ग्रंथ कई बार छप चुका है. परन्तु मिस्टर पोप की सम्मति से इस के विषय बराबर बदलते रहें. क्योंकि उक्त महाशय की आज्ञा थी कि जो २ उत्तमोत्तम

सकें और शुद्ध २ हिन्दी लिख पढ़ लें । आप इस का तृतीय चतुर्थ भाग भी बनाइए. वह यथावसर नार्मल स्कूल के कोर्स अथवा प्राइज़लिस्ट अर्थात् परितोषिक के निमित्त रक्खा जायगा ।

इंस्पेक्टर साहिब के आज्ञानुसार मैंने जी० ए० ग्रीयर्सन साहिब बहादुर से सम्मति ली और उन्हीं के कहने के अनुसार विषय क्रमशः रखे गये और उस में हर प्रकार की भाषा दिखलाई गई है ।

भाषासार में इस नूतन परिवर्तन होने का कारण मैंने वहाँ के वर्तमान इंस्पेक्टर डाक्टर सी० ए० मार्टिन साहिब बहादुर को लिखा तो उन्होंने कृपा पूर्वक इस को स्वीकार करके ६ ठें संस्करण को स्कूल कोर्स में रक्खा । मैं उन महापुरुषों का भी अन्तःकरण से बाधित हूँ कि जिन्होंने इंस्पेक्टर साहिब के पूछने पर भाषासार की सराहना की और मेरे उत्साह को बढ़ाया । हिन्दी भाषा के रसिक तथा सज्जनशिरोमणि बाबू कालीकुमार मित्र हेडमास्ट पटना नार्मल स्कूल से भी इस संस्करण के अदल बदल करने में सम्मति ली और उन से बहुत सहाय्य मिला । विशेष कर आपने रामायण और भक्तभूषण तपस्वीराम के ग्रंथों की अनुरोध की ।

यद्यपि भाषासार का आकार सज्जनों के उत्साह दान से बहुत बढ़ गया है परन्तु मूल्य उस का वही है जो पहिले था, क्योंकि मेरा लक्ष्य इन पुस्तकों के प्रचार से व्यापार का नहीं है बरञ्च बालकों के लाभ और भाषा वृद्धि से ।

सज्जनों से प्रार्थना है कि यदि इस में कोई विषय ऐसे छप गये हों जो कनुचित हों तो अनुग्रह करके मुझे लिख भेजें दूसरे संस्करण में उस पर विचार कर के दूसरा रख दिया जायगा ।

प्रकाशक ।

## सूचीपत्र ।

| नं०. | विषय.   | पृष्ठ. |
|------|---|--------|
| १    | प्रेमसागर. ( ललूलाल कवि. )  | १      |
| २    | वर्षा. ( भारतेन्दु हरिश्चन्द्र )  | ६      |
| ३    | प्रेमपथिक. ”  | ७      |
| ४    | कादम्बरी. ( हरिश्चन्द्रचन्द्रिका )  | ११     |
| ५    | रामकथा. ( पंडित छोटूराम त्रिपाठी )  | १३     |
| ६    | रामचरितमानस. ( गोस्वामी तुलसी दास जी रचित. और<br>जी० ए० ग्रियर्सन साहिब सम्पादित. ) | २९     |
| ७    | गवाल कवि की कविता. ( शिव सिंह सरोज. )   | ४०     |
| ८    | सुन्दरीतिलक. ( भारतेन्दु हरिश्चन्द्र. )   | ४१     |
| ९    | रसिकविनोद. ( महाराजाधिराजकुमार लालखन्नावहादुरमल्ल. )                                | ४९     |
| १०   | विष्णुपद युवराज. ( हरिश्चन्द्रचन्द्रिका. )  | ४९     |
| ११   | कवितावली. ( पं० रामगुलाम द्विवेदी )   | ४८     |
| १२   | उर्दू मिश्रित कविता. ( पं० संतोष सिंह और साहिबजादे सुमेर सिंह साहब. )               | ४९     |
| १३   | भाषा का लाभ. ( पं० व्यासराजशंकर शर्मा )   | ५०     |
| १४   | मित्रता. ”  | ५४     |
| १५   | चतुर्दा और चालाकी. ”  | ५८     |
| १६   | ईर्ष्या. ”  | ६२     |
| १७   | उपदेश करना. ”   | ६४     |
| १८   | प्रशंसा. ”  | ६७     |
| १९   | परिश्रम. ”  | ६८     |
| २०   | बदला. ”   | ७०     |
| २१   | राजनीति. ( मनोहरशतक. )  | ७२     |
| २२   | कविता. ( भारतेन्दु हरिश्चन्द्र. )   | ७३     |
| २३   | मैथिली रामायण. ( पं० वरचन्दा झा महाराज दरभंगा के सभासद. )                           | ८१     |

| नं०. | विषय.  | पृष्ठ. |
|------|--|--------|
| २४   | पृथ्वीराजरासौ. ( चंद कवि, पं० मोहनलालपंड्या सम्पादित. )  | ८३     |
| २५   | संदेह. ( पं० व्यासरामशंकर शर्मा. )   | ८५     |
| २६   | बैतालपच्चीसी. ( लल्लूलाल कवि. )  | ८६     |
| २७   | भूगोलहस्तामलक. ( राजा शिवप्रसाद सितारै हिंद )  | ८८     |
| २८   | विद्या. .... " ....  | ९३     |
| २९   | कविता. (खानखानानवाब अब्दुल रहीम बादशाह अकबर के सभासद.)   | ९४     |
| ३०   | सूरसागर. ( भारतेन्दु हरिश्चन्द्र संग्रहित सूरशतक पूर्वार्द्ध सटीक. )   | १०३    |
| ३१   | श्रीमती महारानी इंगलैंडेश्वरी } (काशीराज महाराज ईश्वरीप्रसाद<br>कीनविकटोरिया यात्रा. } नारायण सिंह देव बहादुर. ) | १०५    |
| ३२   | वृन्द की कविता. ( वृन्द कवि. )   | १२९    |
| ३३   | प्रेमगंगतरंग. ( भक्त भूषण श्री तपस्वीराम. )  | १३७    |
| ३४   | प्रासङ्गिक कविता. ( पंडितवर दुर्गादत्त कवि. )  | १४१    |
| ३५   | कविता. ( महामहोपाध्याय कविराजश्यामलदास मेम्बर इजलास<br>खास महाराणा उदयपुर. )                                     | १४६    |
| ३६   | जानकीमंगल. ( पंडित वर शीतलप्रसाद त्रिपाठी )  | १४७    |
| ३७   | ऋणी होने का दुख. ( पं० वर व्यासरामशंकर शर्मा. )  | १६७    |
| ३८   | कनरपी घाट लड़ाई. ( जी० ए० प्रियर्सन साहिब बहादुर. )  | १६९    |
| ३९   | कवित रामायण. ( गोस्वामी तुलसीदास. )  | १७६    |
| ४०   | आर्यावर्त्त का विलाप. ( बाबू लक्ष्मीप्रसाद )   | १८२    |
| ४१   | मेघदूत. ( राजा लक्ष्मण सिंह बहादुर. )  | १८३    |
| ४२   | रुक्मिणी परिणय. ( महाराज रघुराज सिंह बहादुर )  | १८५    |



# EXTRACT FROM THE REMARKS

OF

MR. G. A. GRIERSON M. R. A. S.  
IN HIS "SOME USEFUL HINDI BOOKS."

I should advise persons in want of Hindi books to put themselves in communication with Babu Sahib Prasad Sinha, Khadga Vilas Press, Bankipore (Patna.) This gentleman, and his partner Babu Ram Din Sinha, are extensive publishers, and can direct the inquirer as to the most likely places for finding printed books. Amongst books published by this firm, I may mention the *Kshatriya Patrika*, a monthly magazine in Hindi, containing a great deal of original matter by writers of repute. It often contains instructive articles on the Hindi language, and not seldom is very pugnacious on the subject. The subscription to this magazine is Rs. 6 as. 6 per annum. Those who wish to familiarize themselves with the Kaithi \* character, now much used in Bihar, cannot do better than buy the *Suta-Prabodh* (price 4 annas, say 6 d.), published by the same. It is a reading book for girls, in simple Hindi. I would also draw particular attention to a work entitled *Bhakha Sar* (part II), which comes from these publishers. In my opinion it is the best Hindi reader for advanced students extant. Besides the usual and proper extracts from the *Prem Sagar* and the *Ramayan* of *Tulsi Das*, it contains selections from the writings of nearly all the best modern Hindi writers. Chief among the authors laid under tribute is *Harish-Chandra*, whose late lamented death at an early age has been a severe blow to the progress of Hindi literature. Amongst writings by him here given may be mentioned extracts from the *History of Kashmir* (*Kashmir Kusum*), founded principally on the *Raja Tarangini*, the *History of Maharastra*, the *Nil Devi* (a play, in which the language and customs of Musalmans and Hindus are well contrasted), and the *Purna-Prakash-Chandra-Prabha* (a well-known and much-admired novel. *Harish Chandra's* unique and most valuable essay, entitled *Hindi Bhakha*, on the different dialects of Hindi known to him, is given in full. In this essay, after a note on the various dialects current in the city of Benares, including that of the thieves, he gives samples of a great number of local dialects and of various local songs sung to peculiar melodies with the legends connected with them. He shows how utterly unsuited modern Hindi is for poetry, and vindicates triumphantly the claim of poets to write in their own dialects, till something better is produced as a standard. He then gives examples of the modern style of prose Hindi, written and spoken.

\* I should mention that many of the above books can also be had in the Kaithi character.



Of this he describes six kinds; 1) that full of pure Sanskrit words; 2) that containing a few Sanskrit words; 3) that containing no Sanskrit and only pure Prakrit words; 4) that in which words from foreign languages are admitted; 5) that which is full of Persian words; and 6) that which admits English words. He states that he himself prefers the 'second and third styles, and I fancy that in this every European scholar will agree with him. It will be observed that he calls all these, even the fifth style, Hindi. As will be seen hereafter, amongst natives, the true criterion between Hindi and Urdu is not vocabulary, but idiom and order of words. I may add that the sixth style is that in general use at the present day amongst educated Hindus of Hindustan. English words are used much as the words 'jockey' or 'a shake-hands' are used in French. After some examples of the bad Hindi used in various localities, he winds up this part of his essay, in a grim humour, with samples of three new kinds of Hindi, the Hindi of the Bengali Babu, the Hindi of the English Sahib, and the Hindi of the Railway companies. In these, the first two especially, the faults of the nationalities of the speakers are most cleverly hit off. The essay concludes with specimens of the writings of English Hindi scholars. Foremost honour is given to the Christian hymns by Mr. John Christian, lately deceased, '*Jan Sahib*', as he is affectionately called by the natives. He is the only European I have ever met who has achieved any success as a Hindi writer; and the best native scholars admit that many of his hymns are faultless compositions so far as their language goes. Natives of India much admire his works, and they have had a strange fate, for, in addition to being put to their legitimate purposes, they are sung by *nach* girls all over Bihar together with Vaishnava songs of Bidyapati and Sur-Das. The expressions in the songs are so truly native, and Mr. Christian has so cleverly caught the style of these old masters, that these girls have no idea that they are singing Christian hymns.

There are also given copies of letters in Hindi, written in England to native friends in India, by Messrs. Nicholl and Pincott. I suspect that they were hardly intended for publication. I say this, judging from their contents, and not from the Hindi style, which, it is needless to say, I do not criticize here.

The book also contains the well-known "*Kahani Thenth Hindi men*" (Tales in pure Hindi), which should be studied by every European student for two purposes: *firstly*, to master its wonderfully pure vernacular vocabulary; and *secondly*, to learn what is not Hindi. This set of stories is a veritable *lusus naturæ*. It contains only the purest Hindi vocabulary, *id est* words derived only from Prakrit sources; not a single Arabic or Persian

word finds entrance into it, and yet it is not Hindi, but Urdu. The work is continually referred to by native Hindi scholars as showing how impossible it is for a Musalman (for such was its author) to write in that language, and the very first sentence, *sir Jhuka kar nak ragar'ta hun us ap'ne bananewale ke samh'ne*, bowing my head, I show my humility before my Creator,' is often quoted for that purpose. Here the verb is in the middle of the sentence ; and in Hindi narrative prose it *must* come at the end. The quotation, in spite of its vocabulary, is very good Urdu, but it is very bad Hindi.

The *Kahani Thenth Hindi men* is followed by an appropriate antidote, extracts from the elegant *Ram Katha* of Pandit Chhotu Ram Tiwari, Professor of Sanskrit at Patna College. In this work the old familiar story of Ram is told again in mingled prose and verse. It is universally recognized as a model of pure Hindi, written in a flowing and not too learned style. So highly appreciated is the book, and so great was the demand for it, that I believe there was actually a large sale of the proof sheets before it could be completely printed off.

Selections from Baital, Kabir, and other poets make up this really excellent reading-book. I hope that a new edition will soon be called for, and that, encouraged by the sale of the first, the publishers may see their way to printing it with better type, on better paper.

A member of the same firm Babu Ram Din Singh, published a useful *Bhakha Byakaran*, a work written by Gir'dhar Das, the father of Harishchandra. It is the only native work which deals with the grammar of Tul'si Das, and is well worthy of attention. I have myself found it very useful. To the European student, its style may be found difficult, as it is written in verse. As at present published, it only goes down to the end of nouns.



the English language and literature yet the vernacular Bengali hastened to keep pace with its Western rival, and a really valuable vernacular literature has been called into existence during the last forty years. The Wave of intellectual light is now passing westward, and we find the press of the contiguous province of Bihar is becoming year by year more active and more worthy in its literary productions. Foremost among the pioneers of progress is the Khadga Vilas, Press, at Bankipore, which sends forth with startling rapidity a series of works in the Hindi language, steadily rising higher in the scale of improvement.

At the end of 1884 the Bhashasar was produced, a work in two parts containing a selection from the best writers in Hindi Part I. contains specimens from Lalu Lal, Raja Siva Prasad, Babu Harishchandra, Sri Gridher Das, Chhotu Ram Tiwari and Babu Gadadhar, all of whom have made their mark as writers of the great vernacular of the north. This really good book happily contains a large proportion of prose, and shows that Indians are now wisely giving their attention to the cultivation of manly prose in preference to effeminate Poetry. In a few more year Hindi will have passed from its childhood of sickly Poetry, through its youth of translation, and will have reached its manhood of original composition.

#### THE OVERLAND MAIL.

February. 9, 1885, LONDON.

#### OUR BOOK NOTICE.

THE HINDI LANGUAGE. \*

We have just received a copy of the Bhashasar, which is put forth as a compilation from the "best Works in Hindi." It is really a very worthy attempt on the part of patriotic Indians to present numerous specimens of the great vernacular of their country in a manner calculated to show that it is deserving the recognition they demand for it. It is certainly remarkable in these days of boasted social and political liberty that sixty or seventy millions of people under English rule should still be ineffectually pleading to be allowed to use their own vernacular in the transaction of public business and in official communications and legal pleadings.

The compiler begins with a selection from the Prema Sagar, illustrating the curious metric prose of Lalla Lal. This is followed by historical sketches of Kashmir and Maharastra, by Babu Harishehendra in his best style. These two pieces are written in good Practical Hindi prose, Selections

\* "Bhasha-sar" Part I. A Hindi Reader, compiled from the best works in Hindi by Sahib Prasad Singh

from the famous poem of Tulsi Das, and a few verses of Baital a poet of the last century, are followed by a good specimen from the work of the peasant-poet Kabir. Some pages of Babu Harishchandra's pleasing verses are followed by two scenes from his drama called ' Nila Devi. ' A long story in what is called Thenth, or " pure " Hindi follows and it would puzzle some of the people who talk so flippantly about Hindi to read this specimen of the pure language. A prose tale in a fluent style by Chhotu Ram Tiwari is succeeded by some pages of the " literary " form of Hindi—the Puran-prakash Chandra-prabha, and then we have an essay on the various dialects of the language, with specimens of each. This is by Babu Harish Chandra, and it does him much credit, and is singularly interesting. The twelve methods now practised in different places of writing Hindi deserve attention. These are followed by specimens of Hindi by Englishmen who are esteemed model writers of the language. The gentlemen selected for this compliment are Mr. John Christian ( four pages ) Professor Nicholl of Oxford seven pages and Mr. Frederic Pincott ( twenty pages ) selections from the very valuable works of Mr. Grierson, giving illustrations of the Eastern dialects of Hindi, bring to an end this really good book.

It is very pleasant to find Indian gentlemen taking so intelligent a view both of the importance of their vernacular and of the proper method of cultivating it. It is only by a careful study of the dialect that the eclectic form the language will be evolved which will command general assent, and secure for Hindi the high position which its richness and its flexibility so eminently qualify to attain.

---

## भाषा-सार ।

### प्रेमसागर ।

उत्तरार्द्ध—५१ अध्याय ।

श्री शुकदेवजी बोले, कि महाराज ! जो श्री कृष्णचन्द दत्त समेत जरासन्ध को जीत, काशयवन को मार, वृज को तब, द्वारका में जाय वसे सो मैं सब कथा कहता हूँ, तुम सचेत हो चित लगाय सुनो, कि राजा उपसेन तो राजनीति लिये मथुरापुरी का राज करते थे, और श्री कृष्ण बलराम सेवक की भांति उन के आज्ञाकारी, इस से राजा राज प्रजा सुखी थी, पर एक कंस की रानियां ही अपने पति के शोक से महादुखी थीं, न उन्हें नौद पातो थी, न भूख प्यास लगती थी, आठ पहर उदास रहती थीं ।

एक दिन वे दोनों बहन अति चिन्ता कर आपस में कहने लगीं कि जैसे नृप बिना प्रजा, चन्द्र बिन यामिनी शोभा नहीं पातो तैसे कान्त बिन कामिनी भी शोभा नहीं पातो । अब अनाथ हो यहाँ रहना भला नहीं इस से अपने पिता के घर चल रहिये सो अच्छा महाराज वे दोनों रानियां ऐसे आपस में सोच विचार कर, रथ मंगवाय, उस पर चढ़ मथुरा से चलीं मगध देश में अपने पिता के यहाँ आईं, और जैसे श्रीकृष्ण बलरामजी ने सब असुरों समेत कंस को मारा, तैसे उन दोनों ने रो रो समाचार अपने पिता से सब कह सुनाया ।

सुनते ही जरासन्ध अति क्रोधकर सभा में आया, और जगा कहने कि ऐसे बली कौन यदुकुल में उपजे, जिन्होंने असुरों समेत महाबली कंस को मार मेरी बेटियाँ भी बाँड दिया, मैं अभी अपना सब काटक ले धाऊँ, और सब यदुवंशियों समेत मथुरापुरी को जलाय राम कृष्ण को जीता बांध लाऊँ, तो मेरा नाम जरासन्ध, नहीं तो नहीं ।

इतना कह छुट नै तुरन्त ही चारी ओर के राजाओं को पत्र लिखे कि तुम अपना दल ले ले हमारे पास आओ, हम कंस का पकटा ले यदुवंशियों को निर्बंश करेगी, जरासन्ध का पत्र पाते ही सब देश देश के नरैय अपना

अपना दस साय ले, भोट चले जाये भी यहाँ जरासन्ध ने भी अपनी सब सेना ठीक ठाक बनाय रखी, निदान सब असुरदस साय ले जरासन्ध ने जिस समय नगध देश से मथुरापुरी की, प्रस्थान किया, तिस समय उस के संग तेईस अश्विणी थी। इकोस सहस्र पाठ से सत्तर रथ, और इतने ही गज पति, एक साय भी सहस्र साढ़े तीन से पैदल, और पैंसठ सहस्र घोड़े दस अश्वबलि, यह अश्विणी का प्रमाण है।

ऐसी तेईस अश्विणी उस के साथ थीं, और उन में से एक एक राखस जैसा बनी था, सो मैं वर्णन कहाँ तक करूँ महाराज ! जिस काक जरासन्ध सब असुर सेना साथ ले धौसा दे चला, उस काक दशों दिशा के दिक्पात्र कभी धर धर कांपने, और गृष्ठी ग्यारी ही शीघ्र से जगी छात से जिसने निदान कितने एक दिनों में चला चला जा पहुँचा और उस ने चारों ओर से मथुरापुरी की घेर लिया, तब नगर निवासी पति भय खाय श्रीकृष्णचन्द के पास जा पुकारे, कि महाराज ! जरासन्ध ने पाय चारों ओर से नगर घेरा अब क्या करें और किधर जाय।

इतनी बात के सुनते ही हरि कुछ सोच विचार करने लगे, इस में बल-राम जो ने पाय प्रभु से कहा, कि महाराज ! आपने भक्तों का दुःख दूर करने के हेतु अवतार लिया है, अब अग्नि तन धारण कर असुर रूपी वन को जलाय भूमि का भार उतारिये यह सुन श्रीकृष्णचन्द उन को साथ ले उपनेन के पास गये, और कहा कि महाराज ! हमें तो कहने की आज्ञा दी है और आप सब यदुवंशियों को साथ ले मद को रक्षा कीजै।

इतना कह जो मात पिता के निकट जाये, तो सब नगर निवासी घिर जाये, और कगे पति व्याकुल हो कहने कि हे कृष्ण हे कृष्ण ! अब हम असुरों के हाथ में कैसे रहें तब हरि ने मात पिता समेत सब को भयातुर देख समझा के कहा, कि तुम किसी भांति चिन्ता मत करो, यह असुर दस जो तुम देखते हो सो एक भर में यहाँ का यहीं ऐसे बिछाय जायगा, कि जैसे घानी के बूँद पानी में बिछाय जाते हैं, यों कह सब को समझाय, बुझाय टाढ़स बंधाय उन से बिदा हो गङ्गा भरे रथों में बैठ लिये।

निकसे होऊ यदुराय, पहुँचे मुदल में जाय।

जहाँ जरासन्ध खड़ा था, तहाँ जा निकले, देखते ही जरासन्ध श्रीकृष्णचन्द से पति अभिमान कर कहने लगा अब तू मेरे सौदों से भाग जा मे-

तुमि क्या माऊं तू सेरो सामान का नहीं जो में तुम पर संज बकाऊं, भका बकराम जो में देख लेता हूं ओ अण्णचन्द बोले परे मूर्ख अभिमानी तू यह क्या बकता है, जो मूर्खा होते हैं, सो बड़ा बोक किसी से नहीं कोसते, सब से दानता करते हैं, काम पड़े अपना बक दिखाते हैं और भी अपने कुंठ अपनी बड़ाई मारते हैं, सो क्या कुछ मजे कहाते हैं। कहा है कि गरजता है सो बरसता नहीं, इस से क्या बकवाद क्या करता है।

इतनी बात की सुनते ही जरासन्ध ने जो क्रोध किया तो श्रीकृष्ण बकदेव बक पड़े हुए इन की पोछे बह भी अपनी सब सेना को धाया, और उसने यों प्रकार की कड़ सुनाया, परे दुष्टो ! मेरे चागे से तुम कहाँ भाग जाओगे, बहुत दिन जोते बचे। तुम ने अपने मन में क्या समझा है, जब जोले न रहने पाओगे, जहाँ सब असुरों समेत कंस गया है, तहाँई सब यदुवंशियों समेत तुम्हें भी भेजूंगा। महाराज ! ऐसा दुष्ट बचन उस असुर की सुख से निकलते ही, कितनी एक दूर जाय दोनों भाई फिर पड़े हुए। श्रीकृष्णचन्द जी ने तो सब ग्रन्थों लिये और बकराम जी ने हत सुमन, जो असुर हत इन को मिकट गया, तो दोनों गोर लककार के ऐसे टूटे जैसे हाथ्यों के यूथ पर सिंह टूटे और जगा लोहा बाजने।

उस काह माऊं जो बाजता था, सो तो मेघ सा गरजता था भी चारों ओर से राजसी का दल जो घिर आया था, सो दल बादल सा छाया था, भी ग्रन्थों की भङ्गी सी लगी थी, उस के बीच श्रीकृष्ण बकराम युद्ध करते ऐसे श्रीभावमान लगते थे, जैसे सचन घन में दामिनी सुहावनी लगती है।

इतनी कथा सुनाय श्रीकृष्णदेव जी बोले, कि पृथ्वी नाथ ! जब लड़ते लड़ते असुरों की बहुत सी सेना कट गई, तब बकदेव जी ने रथ से उतर जरासन्ध को बांध लिया, इस में श्रीकृष्णचन्द जी ने जा बकराम जी से कहा, कि भाई इसे जीता छोड़ दो, मारी मत, क्योंकि यह जीता जायगा तो फिर असुरों की खाव को आवेगा, तिनहे मार हम भूमि का भार उतारेंगे और जो जीता न छोड़ेंगे सो जो राजस भाग गये हैं सो हाथ न आवेंगे, ऐसे बकदेव जी की समझाय प्रभु ने जरासन्ध की छुड़ाय दिया, वह अपने विन कोनों में गया जो रथ से भाग के बचे थे।

चढ़ दिशि चाहि कहे मसुभाय । सिमरी सेना गई विजाय ।

भयो दुःख अति कैसे जीजे । जब घर छाड़ि तपस्या कीजे ॥

मन्त्री तबै कहै समझाय - तुम सी आनी कहीं पछिताय :

कवचुं हार जित पुनि होइ - राज देश छाड़े नहिं कोइ ॥

क्या हुआ जो अब को सफ़ाई में हारे फिर अपना दम जोड़ लावेंगे जो सब यदुबंधियों समित कृष्ण बलदेव को स्वर्ग पठावेंगे, तुम किसी बात को चिन्ता मत करी महाराज ! ऐसे समझाय बुझाय जो असुर रथ से भाग के बचे थे, तिनहें भी जरासन्ध को मंत्री ने घरसे पहुँचाया, भी यह फिर वही कटक जोड़ने लगा । यहाँ श्रीकृष्ण बलराम रथ भूमि में देखते क्या हैं, कि कोहू को गदी बड़ निकली है, तिस में रथ बिना रथी नाव से बड़े जाते हैं, ठौर ठौर टाकी मरे पहाड़ से पड़े टूट जाते हैं, उन के घाघी से रक्त भरनों को भांति भरता है, गोड़ गोड़ काग कोथी पर बैठ बैठ मांस खाते हैं, भी आपस में लड़ते जाते हैं ।

इतनी कथा कह श्री शुकदेव जी बोले, कि महाराज ! जितने रथ हाथी घोड़े भी राक्षस उस खेत में रहें थे, तिनहें पवन ने तो समेट इकट्ठा किया, भी अग्नि ने पक्ष भर में सब को जलाय भस्म कर दिया पांच तत्व, पंचतत्व में मिश्र गये, उन्हें पाते तो सब ने देखा घर जाते किसी ने न देखा कि किधर गये । ऐसे असुरों को मार, भूमि का भार उतार श्री कृष्ण बलराम, भक्त हितकारी, उपसेन के पास पाय दण्डवत कर हाथ जोड़ बोले, कि महाराज ! आप के पुण्य प्रताप से असुर दम मार भागया, अब निर्भय राज किजै, भी प्रजा को सुख दीजै । इतना बचन इन के मुख से निकलते ही राजा उपसेन ने अति आनन्द मान बड़ी बधाई की, भी धर्मराज करने लगे । इस में किन्हीं एक दिन पीछे फिर जरासन्ध इतनी ही सेना ले चढ़ि आया, भी श्रीकृष्ण बलदेव जो ने पुनि त्योंही मार भगाया । ऐसे तेईस तेईस अच्छीहिणी ले जरासन्ध सत्रह बेर चढ़ि आया, और प्रभु ने मार डटाया ।

इतनी कथा कह श्री शुकदेव मुनि ने राजा परीक्षित से कहा, कि महाराज ! इस बीच नारदमुनि जो के जो कुछ जी में आई तो येँ एकाएकी उठकर ज्ञानयवन के यहाँ गये उन्हें देखतेही बड़ सभा समेत उठ खड़ा हुआ, भी उस के दंडवत कर, कर जोड़ पूजा कि महाराज, आप का आना यहाँ कैसे भया ।

मुन के नारद कहै बिचार । मथुरा में बलभद्र मुरारि ।

तो बिन तिन्ह हतै नहिं कोई । जरासन्ध सों कहु नहिं होई ॥

त है असुर और अति बली : बालक है बलदेव भी हरी ॥

यों कह फिर नारद जी बोले, कि जिसे तू मेव वरन, कमल नैन, चति सुन्दर बदन, पिताम्बर पहिरे, पीतपट ओढ़े देखे, तिस का तू पीका बिन मारे मत छोड़ियो। इतना कह नारदसुनि तो चले गये और काकयवन अपना दस जोड़ने लगा, इस में कितने एक दिन बीच उस ने तीन करोड़ महा मल्लोच्छ प्रतिभयावने एकट्टे किये ऐसे कि जिन के मोटे भुज, गले बड़े, दांत, मै लीमेव, भूरे केश, नैन काक घुंघुंसी से तिन्हें साय ली, उंका रे, मथुरापुरी पर चढ़ि आया औ उसे चारों ओर से घेर लिया। उस काल श्रीकृष्णचन्द जी ने उस का व्यवहार देख अपने जी में विचारा कि सब यहां रहना भला नहीं, क्योंकि आज यह चढ़ आया है औ कल जी जरासंध भी चढ़ि आवे तो प्रजा दुःख पावेगी॥ इस से उत्तम यही है कि यहां न रहिये सब समेत अनत जाय बसिये महाराज ! हरि ने विचार कर, विश्वकर्मा को बुलाय समभाय बुझाय के कहा कि तू अभी जाके समुद्र के बीच एक नगर बनाव, ऐसा जिस में सब यदुवंशी सुख से रहैं, पर वे यह भेद न जाने कि यह हमारे घर नहीं औ एक भर में सब को वहां ली पहुंचाव ।

इतनी बात के सुनते ही, जा विश्वकर्मा ने समुद्र के बीच सुदर्शन के ऊपर बारह योजना का नगर जैसा श्री कृष्ण जी ने कहा था तैसा ही रात भर में बनाव, उस का नाम द्वारका रख आ हरि से कहा, फिर प्रभु ने उसे आज्ञा दी, कि इसी समय-तू सब यदुवंशियों को वहां ऐसे पहुंचा दे, कि कोई यह भेद न जाने जो हम कहां आये औ कौन ली आया ।

इतना बचन प्रभु के सुख से जो निकला, तों राती रात ही लघुसेन बसु-देव समेत विश्वकर्मा ने सब यदुवंशियों को ली पहुंचाया, औ श्री कृष्ण बल-राम भी वहां पधारे। इस बीच समुद्र की लहर का शब्द सुन सब यदुवंशी

• बिहारी सतसई सटीक में देखो।—

होहा—दुमद दुराज प्रजान को, क्यों न बढै दुख दुन्द ।

अधिक अंधिरो जग करत, मिलि मावस रवि चन्द ॥ ७९० ॥

बवैया—एक रजार्ह समै प्रभु है सु तमो गुन को बहु भांति बढ़ावत ।

जोत महा दुख दुंद प्रजान को और सबै सुभ काज बजावत ॥

कृष्ण कहैं दिननाथ निराकर एकही मंडल मै- जव आवत ।

देखो प्रतप अमावस को अंधियारी कितौ जग में सरजावत ॥ ७९० ॥



वीन पड़े वी क्षति प्रचरण कर पापस में कहनी लगी, कि संसार में समुद्र कहाँ से आया, यह भेद कुछ जाना नहीं जाता।

इतनी कथा सुनाय श्री कृष्णदेव जी ने राजा परीक्षित से कहा कि पुष्पी-नाथ ! ऐसे सब यदुवंशियों को शारणा में बसाय, श्री कृष्णचन्द जी ने बलदेव जी से कहा, कि भाई ! अब चल के प्रजा को रक्षा कीजै, श्री कृष्णचन्द जी का बच। इतना कह दोनों भाई वहाँ से चल मजमण्डल में आये।

## वर्षा ।

सृष्टियों देखो तो बरसात जैसे धूम धाम से आ पहुँची और मिर्ची के देह में से लोगों का चित्त कैसा प्रसन्न हो गया जैसा सज्जनों के मिलने से चित्त प्रसन्न होता है ये मेघ निमग्न हो सज्जन हैं क्योंकि दानी हैं और भरे हैं तब भी मुँह रहते हैं और जो बरसते हैं वह प्रायः नहीं गरजते। विजली कौसी चंचला है कि इधर चमका करती है कभी स्थिर नहीं रहती इसी से जिस जीव से उसका संग हो जाता है उस का बुराहा होता है। जल बढ़ने से नदियों ने मर्यादा छोड़ दी है इसी से मनुष्य लोग आज जल सनका संग नहीं करते बरन उनका जल तक नहीं पोते और नदियों को आश्रित जीव कैसे अपनाय हो कर इधर बहते फिरते हैं जैसे स्वामी को मर्यादा छोड़ने से सेवकों की दुर्दशा होय और कुछ नदियाँ तो ऐसी डमढ़ बही है जैसे थोड़े धन वा बल रूप वा योग्यता वा अधिकार से छोटे मनुष्य डमढ़ा बहै। सखी ये सब चार दिन के चोचले हैं चाब बड़ काम की जो सदा निवहै क्योंकि छोटी नदियाँ कौसी जल्दी सूख जाती हैं जैसे कुचाच चलने वालों के धन जीवन सब अधिकार जल्दी नाश हो जाय। जल के प्रवाह से पुल सब टूट जाते हैं। जैसे मा-स्त्रियों के बाद से ज्ञान और भक्ति के मार्ग टूट जाते हैं। जो नदियों के ऐसे प्रवाहों के मिलने पर भी समुद्र नहीं बढ़ता जैसे जितेन्द्रियों को सम्यक्त-मं बिकार नहीं वैसेही पहाड़ों पर इतनी पानी धारा प्रकृता है। पर वे बाधित नहीं होते जैसे साधुओं की व्यसन नहीं बाध्ना करते हरी हरी सास से सारे मार्ग जागृत हैं कहीं राह नहीं दिखाती जैसे पाखंडी लोग ईश्वर के प्रेम मार्ग को अपने बाहों से छिपा देते हैं, पहाड़ों पर भी दूब जल गई है जैसे संगत से साधुओं के, मन में भी बिकार हो जाते हैं सर्व इत्यादिक विषयों की ओर

बहुत ही गंवा है जैसे बुरे राजा के राज्य में ठग और चोर लोग बढ़ जायें । कच्चे घर गिरे जाते हैं जैसे कच्चे चित्त को लोग थोड़ी सी संमति बिपत्ति में भूख जाते हैं । पानी का वेग रोके भी नहीं सकता जैसे जिन के चित्त बुरे व्यसनों में फँस जाते हैं वे मोति नहीं सुनते । जिन चिट्ठियों ने शीश में अम करके खाने की बटोर रक्खा है वे सुख से बरसात बिताती हैं जैसे परिश्रमी लोग जमाने को उपार्जित धन को बुढ़ापे में सुख से खाते हैं जुगनू चारो ओर चमकते हैं जैसे बुद्ध लोग इधर उधर चमका करते हैं । और करोड़ों जीव इस वर्षा में उत्पन्न होते हैं और करोड़ों ही नाश भी होते हैं मानो ईश्वर ने इसे अपनी सृष्टि का नमूना बनाया है । मक्काओं को चन्दास शिकार मिल जाता है जैसे घर के लोग छितर बितर हो जाने से खल लोग वैश्यास उनकी मार लेते हैं । मच्छर और पतंग इत्यादि बहुत से दुःखदाई जन्तु बढ़ गए हैं जैसे इस काल में निन्दक सोलुप और बंचक बढ़ गए हैं अह ! सखी भगवान ने केवल हम लोगों को शीघ्रा देने की यह बरसात बनाई है जो अच्छे लोग हैं वह इसे यह सब शीघ्रा सीखते हैं पर जो सदोन्मत्त हैं भूख कर उल्टा इस चतुर् में और भी उड़ण्ड हो जाते हैं और व्यर्थ के सैर समायी में इसे बिताते हैं ।

## प्रेमपथिक ।

( मार्ग में श्रीघ्न—राम सीता )

राम—प्यारी मेरे हेतु तुम्हें कैसे कष्ट सहने पड़ते हैं, कहां यह और बन जिस में बाघ चोते रीछ चरने गेंडे इत्यादि भयावने वनैले जोव इधर उधर फिरते हैं और कुब्र काटे कंकड़ पत्थर पहाड़ नाली नदी रेतो और पेड़ों की सघन कतार से रस्ता नहीं चला जाता, और कहां तुम्हारे कोमल चरण जिम्हें मखमल के बिछौने भी गड़ते थे । हा ! प्यारी तुम ने इस दोन के कारण इतना दुःख क्यों सह्य, पिता ने तुम्हें वनवास नहीं दिया था ।

सीता—प्राननाथ ! रानी कैकेयी ने मेरे ही उपकार के हेतु महाराज से यह माँगा कि आप वन जाय और मेरे ही भाग्य से आप ने सुम्नि संग लेकर वन यात्रा की है । मेरे भाग्य कहां कि मैं आप की छोड़ी चल् । और खी जाया होती है इस कहानी को सखी कर ।

राम—प्यारी कुछ पुरुषों का यह धर्म नहीं कि तुम ही कुलीन स्त्रियों

को तनिका भी दुःख दें, इन विपत्तियों को भेकने की पुष्प का शरीर बना है, स्त्रियां सुख भोगने की है : पुरुष लोग जो संसार के विषयों के उपार्जन में अनेक परिश्रम करते हैं वह केवल इसी हेतु कि वे कुछ बंधुओं का उस से परितोष करें और उस परिश्रम से उपार्जन किए हुए विषयों में कुछबधू जन की सुख को सब सामग्री सिद्ध करें न कि कुछ की शोभा स्वरूप बंधुओं को क्लेश दें।

सीता—नाथ ! सुख किसे कहते हैं और परितोष किसका-नाम है ? यह सब बातें चित्त से सम्बन्ध रखती हैं, यदि कल्पवृक्ष के नीचे और स्वर्ग में भी बैठे हैं और अपना चित्त नहीं प्रसन्न है वह किस काम का, और धूस में भी कोठते हैं और अपना चित्त प्रसन्न है तो वही स्वर्ग है। ज्ञानियों को अनेक दुःख भोगने पर भी क्यों नहीं कष्ट होता ? क्योंकि उन का सुख दुःख का भोग करनेवाला मन उधर प्रवर्तनी नहीं होता, वह आनन्दही में तन्मय रहता है। पिता जनक के कपड़े में एक धर आग लाग गई और इस से उनका शरीर जलने लगा, पर वह जिस काम में लगे थे उन्होंने ने उधर से रुख फिर कर इधर तनिका भी लक्ष न दिया, और जब नीकरी ने पुकार किया और बुलाया तब उन्होंने ने जाना वरंच इसी से उन का नाम भी विदेह है।

राम—प्यारो ! ये ज्ञान की बातें हैं स्त्रियों से इन बातों से क्या सम्बन्ध, ये विचारो तो निरो अवकाश होती हैं और छोड़े दुःख सुख में घबड़ा जाती है भला ये ऐसे ऐसे कष्ट कैसे सह सकेंगे।

सीता—प्यार ! यह ठीक है पर स्त्रियों का दुःख सुख तो पति के अधीन है, पति के बिना स्त्री को बैकुंठ भी तुच्छ है और पति के संग निर्जन वन भी हजार बैकुंठ से अधिक है।

राम—पर प्यारी दुःख सुख सब की अवधि होती है इस कठोर धूप और इस कटोले वन के योग्य तुम्हारा सुकमार तन नहीं है।

सीता—नाथ यह वन तो सुम्मे फूँगी की सेज से अधिक कोमल और यह धूप सरद रितु की चाँदनी से भी ठंडी मालूम होती है। मेरे भाग नहीं कि आप की सेवा सुम्मेसे हो। ये वन और पहाड़ सुम्मे जनकपुर और अयोध्या के मरुत और बगीचों से बढ़कर सुहाने और प्यारे मालूम होते हैं, और ये वन के जीव सुम्मे अपने सगे सम्बन्धियों से भी अधिक सुख देने वाले हैं। नाथ ! सुम्मे तो चाहिये कि जहाँ आप वसे वहाँ मैं अपने नेत्र बिछाती बसूँ, पर अब

सुझे निश्चय है कि मेरे सब मनोरथ सिद्ध होंगे, जब धूप में चकतीर पाप दफा कर किसी हरे भरे पेड़ की ठंडी छाया में विश्राम करनी की बैठ जायगी तो पसीने की बूंद से शीतल भाप का सुख कामल देख कर अपनी नेची की में छतार कछंगी, और अपने पांचव से उसे पोंछ कर उसी पांचव की बहार से जिस समय आप का तम दूर कर सकूंगी उस समय अपना जीवन जन्म छतार समझूंगी। बरसात में पानी के छर से हम आप किसी पेड़ के नीचे वा भीपड़ी में जब पास पास बैठें या कोटे रहेंगे और आपस में एक दूसरे की पानी के टपक से बचावेंगे उस समय में उस स्थान को स्वर्ग से बढ़ कर समझूंगी और इस कहावत की सत कर मानूंगी।

बरवा—टूट खाट घर टटिहरटटियोटूट। पिय की बांह उसीससवां सुख की कूट।

राम—प्यारी। तुम्हारी इन बातों से मेरे नेत्र में जल भरा आता है और गला भी फूँटा जाता है धन्य हो! जिस कुल में तुम्हारे ऐसी कन्या उत्पन्न हो और जिस कुल में ब्याही जाय वह दोनों कुल धन्य हैं, ऐसे ही पतिव्रताओं के सत पर पृथ्वी थंभी है, तुम्हारा शील और चरित्र दूसरी स्त्रियों के हेतु दृष्टान्त और नमूना होगा और तुम्हारी रहन सहन से दूसरी स्त्रियाँ शिक्षा पावेंगी, तुम्हारा नाम पतिव्रताओं की मण्डला में सूर्य चन्द्र की भाँति चान्द-व्याप्त प्रकाशित रहेगा। सच है पतिव्रता स्त्री का यही धर्म है कि पति के सुख में सुख मानना, तुम्हारी ऐसी गृहणी से हमें अभिमान है।

सीता—गाय बहुत भई अब बस करो। स्त्री शिष्य और पुत्र सराहने के योग्य हों तो भी बुद्धिमान लोग उन के गुंड के सामने उन की प्रशंसा नहीं करते, इन बातों की जाने दीजिए इस पथ की शोभा देखिए।

राम—प्यारी इस मृमि की की शोभा है वह तुम्हारे कारण है, जहाँ २ तुम चलती हो वा ठहर जाती हो वा बैठ जाती हो उतनी दूर की पृथ्वी समाय सी दिखाने लगती है।

सीता—सच है जिस का आप ऐसा नाय हो वह स्त्री निःसंदेह पृथ्वी की समायकर सकती है। देखिए धूप इस समय केसी नाच रही है और गरमी से सब जीव कैसे थके से हो रहे हैं, पक्षी हवा पर एक स्थान पर स्थिर होकर कैसी बोलियाँ बोलते हैं, कोइल और हल्ले प्यास से भुँह खोले एक पट सी लगा रहे हैं, बीच में कठफुड़वा का मध्व पीड़ों में मंजता देखा समार देता है मानों कहीं संमतराज लोग पत्यन्त गढ़ते हैं।

राम—सच है, यह देखो घाट में तो कुत्ते और बनों में मोर हरने कैसे जीम निकाले जाकर रहे हैं, और जहाँ कुछ भी शक का संभर्ग होता है वहाँ कौसा लोटने लगते हैं, पीसों के गिरे हुए पानों को चिड़िया बेर २ पीती और सिर उठा कर इधर उधर देखती जाती हैं, बैल ऐसे बड़े जीव तो जहाँ बैठे हैं वहाँ से मानीं हिल ही नहीं सकते। और जहाँ कोई मछन हल्ल बा किसी प्रकार की छाया हो जाते हैं, वहाँ सब चकनेवाले पथिक विश्राम के हेतु कैसे एकत्र और विश्राम कर कर के अपना परिश्रम प्राप्त करते हैं, कोई गठरो कोई बाँह की तनिया बना कर सोते हैं, कोई इधर उधर की बातें करन लगते हैं, छोटी छोटी छाया के मोचे की टुकानों से कुछ मोल ले कर कोई जलपान करते हैं कोई दवा के रख बैठ कर शरीर ठंडा करते हैं।

नदियों और तालों के जल सूर्य की चमक मिल कर यद्यपि आँखों की दुखद भासूम होते हैं और ऊपर से गरम भा हो रहे हैं पर तो भी उन्ही में लोग नहा कर और पानों पी कर सन्तुष्ट होते हैं, और जब कभी दवा के भोके में उमी जल के कण मिल जाते हैं तो कैसे सुखद हो जाते हैं कहीं कहीं दवा से जल ऐसा भिन्न भिन्न करता हुआ बहता है कि देखते ही वन जाता है।

सोता—और नाथ इन ग्रामबधुओं की चितवन और व्यवहार सब कैसे सीखे हैं, देखिए निष्कारण से हम से कौसा हित करती हैं, कोई हमें पंखा भक्तने लगती हैं, कोई बैठने की स्थान संवारने लगती हैं, कोई बड़े प्रेम से हमारे निकट आ कर संकोच से रुक २ पूछती हैं कि तुम कौन हो, ये तुम्हारे कौन हैं, कहां जाओगी, अपने कीमत शरीर को इस धूप में क्या कष्ट देती हो।

राम—सच है इन गंधारों के व्यवहार सब ऐसे ही सज्ज और निष्कल हैं, इन के चित्त स्तब्ध और इन का प्रेम बहुत सच्चा है, नगर निवासियों में यह बातें कहां, उनके तो काम व्यवहार प्रीति सब में कुछ कल रहता है, पर ये लोग ता कल का नाम नहीं जानते, आपो इस बड़ की छाया में इस कच्चे चौतर पर बैठ के दो घड़ी इन की बातों से जो बहलावे, जब तक लक्ष्मण कहीं से ठंडा जल ले आवेंगे तो हम लोग पी कर राखी का परिश्रम और प्यास बुझावेंगे और फिर चकने का बल आ जायगा तब तक यह कठिन दो पहर भी ठक जायगा।

## कादम्बरी

एक दिन राजकुमार शुकनास के घर किसी काम के लिये गए तो उन्होंने ने कहा कि “तुम ने सब शास्त्र पढ़ा और सम्पूर्ण विद्या अभ्यास किया और सम्पूर्ण कला सीखी पर्याप्त संसार में जन्म लेकर जो २ वस्तु सीखना उचित था सो तुम ने सीखी और अब तुमको कुछ सीखना नहीं है। अब तुम युवा हुए इससे महाराज ने तुमको अभिषिक्त करके धन सम्पत्ति का स्वामी बनाने की इच्छा की है। अब तुम यौवन धन और प्रभुत्व तीनों के अधिकारी हुये, परन्तु यौवन काळ बड़ा विषम है। इस वन में पड़कर लोग बमैकी हो जाते हैं। युवा लोग काम, क्रोध, क्रोध इत्यदि पशुधर्म की सुखमूल जानते हैं और यौवन प्रभाव से जो एक प्रकार का अन्धकार मन में छा जाता है उस के मोचनार्थ उपाय नहीं करते। इस अवस्था के कारण में बड़ी निर्मल बुद्धि भी पावस को नदी की भांति गडगड़ हो जाती है और विषय रूपी तृष्णा सब इन्द्रियों को दुष्ट देने लगती है। इस समय दुष्कर्म भी सुकर्म जान पड़ता है और दुराचरण में लब्धा नहीं होती। इस समय मद्य पान न भी करने से घनघोर यौवन के सद से लोग चूर रहते हैं और हिताहित और अदासद का कुछ विचार नहीं करते। धन से गर्भ उत्पन्न होता है और अहंकारी लोग मनुष्य को जीव नहीं समझते और उनका स्वभाव उस समय ऐसा हो जाता है कि अपने हित की बात को छोड़कर और बातों पर लोभित होते हैं। इस विषय का कोई औषध नहीं है। अपने सुख में किसी को दुष्ट और संतोष को कुछ सम्भावना नहीं होती वरन् लोग अकारण भी “दहीने बांये” होने लगते हैं। यौवन, युवराज और ऐश्वर्य यह सब क्षण कालीन हैं। केवल बुद्धिमान लोग इस प्रवृत्ति तरङ्ग में बचते हैं। यदि बुद्धि रूपी नौका न हो तो यह प्रवाह बिना रुकावट न छोड़े और एक बेर डूबने से फिर कौन बच सकता है।

यह कोई प्रमाण नहीं है कि जो बड़े कुल में उत्पन्न होता है वह अच्छा स्वभाव और नम्र होता है। क्या अच्छी भूमि में कांटे का वृक्ष नहीं उत्पन्न होता है? क्या चन्दन के लकड़ों में अग्नि निकलती है वह क्या जलाती नहीं? आप ऐसे बुद्धिमान पुरुष को उपदेष्टा देना उचित है। सुख को उपदेष्टा

दीनों कार्गों में काले सर्पों का बाजा, और हाथ में काली रुद्राक्ष की माळा माळा ले, मृगछाका छात एक विशाल बट हथ को छात तले बैठ गये । उस समय शीतल मन्द सुगन्ध वायु चल रही थी, ऐसी कुछ समावन्ध रही थी, जिस का वर्णन नहीं हो सकता, मनीहरता आप पाय श्री महादेव जी की सेवकाई में खड़ी हो सब प्रकार की मनभाई सुघराई बड़ी चौकसी से दिखला रही थी उस समय जटा मुकुट बांधे, पङ्क में शीत विभूती धारे, मस्तक में चन्द्रमूषण संवारे श्री महादेव जी ऐसी शोभा पाते थे कि मानों ग्रान्तरस मूर्ति धारण कर आप बैठा हो । आनंद को वैसे समा और मुचित से बैठे शिव जी को देख श्री पार्वती जी महारानी भी वहां हीं पा बैठों, और हाथ जोड़ सिरनाथ मोठे बचन से यह कहने लगीं कि हे प्राणनाथ भजा यह हो सकता है कि कोई नासो गंगा जी में भिजने पर भी अपवित्र रहे वा जिस के पांगन में कल्पवृक्ष हो वह भी दरिद्र रहे या सूर्य के घर अंधकार रहे, सो हे ज्ञाता निधान यह उचित नहीं कि आप की चरण को इस दासी के मन में कोई अज्ञान वा उदासी रहे, हे नाथ मेरे मन में यह बड़ा संदेह है कि शेष सारदा वेद पुरान और आप भी दिन रात राम नाम जपते हैं, वह राम कौन हैं क्या अवध के राजा जो राम हुए, वही हैं, कि राम यह नाम असख अगुन परब्रह्म का है ।

श्रीपाई—जो यह राम अवध के राजा । तो इन के जप से क्या काजा ॥

जो प्रभु राम असख की नामा । तो करि दया कहहु अभिरामा ॥

श्री पार्वती जी के सुख से इतना बचन सुन देवन की देव श्री महादेव रुन ही मन श्री रामचन्द्र जी का भैव समझ, मगन हो दो टण्ड तक कुछ न बोले, पांखें बन्द करलिये अंग पुनकित हो गये कन कन पर कुछ उमग उमग के भ्रूमने लगी मानो आनंद के समुद्र में डूब मारने लगी, थंभ थंभ कर कांसो सांभे खींचने लगी, और ओह ओः ऐसे शब्द सुख से बार बार निकालने लगी, निदान इस प्रकार कुछ काल आनंद रस चाख श्री महादेव जी ने पांख खोली, और अमृत सनो सी मीठी बोली बोले, कि हे प्राणपियारी गिरिराज कुमारी तुम्हारी यह बात सुन सुके परम आनंद हुआ श्री रामचन्द्र के गुण और चरित अपार हैं वेद गाते गाते थक गये पर तौ भी इस को एक सहस्रांश का भी मीद न पाया, तुम्हारा यह पूछना सुके बहुत भाया, इस कारण मैं राम को दया से कुछ राम यश गाता हूँ, सुनो, हे पार्वती जी तुम ने



कहा कि जो यह राम अवध के राजा का नाम है तो इस के जप से क्या फल केवल इतना सुझे न सुझाया ।

“जाके प्रिय न रामधैदेहो, तजिय ताहि कोटि वैरी सम यद्यपि परम सनेही”

“कहहिं सुनिहिं अस अधम नर      ऐसे जे मोह पिन्नाच ।

पाखण्डो हरि पद विसुख      जानहिं भूठ न सांच” ॥

हे पार्वती राम यह नाम अवध के राजा दशरथ के पुत्र हो का है किसी दूसरे का नहीं, वे ही परब्रह्म जगदीश्वर भूभार उतारने और निज भक्तों के लिये पृथ्वी में मनुष्य रूप धर अवतरे थे ।

सीरठा—अस निज हृदय विचारि • तजि संशय भजु राम पद ।

सुनु गिरि राज कुमारि • भ्रम तम रविकर बचन मम ॥

चौपाई—सब कर परम प्रकाशक जोई • राम अनादि अवधिपति सोई ।

जहि श्रुति गाव धरहिं सुनिध्याना • दशरथ तनय सोई भगवाना ॥

हे पार्वती तुम को दशरथ तनय राम और परब्रह्म में कुछ भेद न मानना चाहिये, जो तेजस्वरूप सच्चिदानन्द विन पद सब चक्षुर्मेवालों से कहीं बढ़कर चक्षता हाथ नहीं रखता पर तो भी सब हाथवालों से कहीं बढ़कर काम करता, विन जीभ के सब रस चाखता और भाखता, आंघ नहीं रखता तो भी दूर और पास का और आगे और पीछे का सब देखता, इस प्रकार जिस को सब महिमा अपार है, और जिस को माया के बल यह सब असार चराचर संसार सब प्रकार सार पदार्थों से देख पड़ता है, वही परमब्रह्म दशरथ के नन्दन राम हुए, कि जिनकी मन मोहनी मूर्ति देख काम को भी लाज आवे और जिनके हाथ पांव आदि अंगों की निकाई उपमा के सब पदार्थों को निचार्ने दिखता है। जिन प्रभु ने भक्तों के हित इस पृथ्वी में सम्पूर्ण लोका मनुष्यों की सी और पिता का बचन मान बन वास किया और त्रिभुवन के हितलिये रावन का नाश किया, वे कौशल्या के दुलारे जग के रखवारे कोई दूसरे नहीं, वेई मेरे प्राण पियारे जग से न्यारे अलख गतिवारे मेरे प्रभु हैं, ऐसा कह श्रीराम जी के मनोहर रूप का ध्यान कर शिवजी ने मस्तक नवाय प्रणाम किया ।

“पुरुष प्रसिद्ध प्रकाश निधि • प्रगट परावर नाथ ।

रघुकुलमनि प्रनमामि सोइ • कहि सिव नाएउ माथ ॥”

और आंखें बंद कर मन ही मन रघुपति की भक्ति रस चाखने लगी ।

श्री महादेव जी के मुख से यह वचन सुन पार्वती जी हाथ जोड़ कर नाथ भक्ति विनती कर बोलीं ।

श्रीपार्वी—नाथ मुनत तब वचन उदारा, भयङ्क' सुखी गयो संसय भारा ।

दशरथ मुत जे राम भु प्राप्ता, सोई निर्गुन परब्रह्म ज्ञापना ॥

अब प्रभु यह संसय जिय रहेऊ, किंचि कारण तिनि गरतनु धरेऊ ।

मोहि समझाऊ कहहु यह भेदा, जाते दूर होई मग खेदा ॥

श्री पार्वती जी को भक्ति रस सानो यह बानी सुन, परम ज्ञानी श्री महादेव जी यों कहने लगे कि हे भवानो तुम्हारे मन सानो बात मैं कहता हूँ चित्त दे के मुनो, परब्रह्म के अवतार लेने का कारण वेहो परब्रह्म जाने दूसरे को क्या शक्ति कि इस सारे में कुछ ठोक उल्लिख करे, पर हां सुनि ज्ञानी लोग कुछ अपने मन को अनुमानो कहानी इस विषय में यों कहते हैं, कि जब जब इस संसार में धर्म ढूँ, हानि होती है और पाप के व्यवहार बढ़ते हैं और गौ ब्राह्मणों को चरती और नीच हथारों की बढ़ती बढ़ती होती है, वैदिक धर्म गुप्त हो जाने लगे नये धर्म पाखण्डो लोग बना बना चलाते, यज्ञ दान व्रत सब छूट जाते, देवताओं को पूजा और मंदिर मिट जाने, साधु सज्जन नियम धर्म करनेवाले नहीं रहने नहीं पाते, जहाँ कहीं जाय वहाँ धक्के खाते, और पापो अधर्मों लोग अनेक प्रकार के अत्याचार और हथारपन करने लगते तब अभुवन हितकारी सुरागी शरीरधारी हो जगत में आते हैं और पापाचार का नाश कर धर्म का प्रचार करते हैं और अपने भक्तों को दुःख नाश प्रकार से करते हैं । पीछे से भी प्रभु की वैसी करनी इस धरती में गाय गाय कर भक्त लोग भवसागर पार उतरते हैं । इस प्रकार अनेक बार अवतार लेते हैं, उन में एक बार अवतार लेने का यह व्यौरा सुना है, कि नारद ऋषि ने क्रोध कर जन को आप दिया इस कारण प्रभु ने जग में अवतार लिया । श्री महादेव जी के मुख से इतना वचन निकलते हो पार्वती जी परम विस्मित हो हाथ जोड़ बोलीं कि हे प्राणनाथ नारद ऋषि तो परमेश्वर के परम अनुकूल भक्त हैं, हरिभजन में लग्न मन से लवलीन रहते हैं आठो नाम राम नाम जपते जगत में बिचरते हैं मैं हाथ जोड़ती और रोम रोम आप की बलैया लेती हूँ दयाकर कहिये, और मन का संदेह दूर कीजिये, कि नारद ऋषि ने कहा, जहाँ किस किये, और किस प्रकार श्री भगवान

को जाप दिया, चपयन और पाप की नाँठ जाप चपने फिर किया, प्रसन्न होकर ज्ञानी भगवान् मुनि होके अभिमानों पापों सरीखा काम किया। पार्श्वों को का यह वचन सुन श्री महादेव की बोली, हे मानवियारी !

होइ—“नहिं ज्ञानी नहिं मूढ़ कोइ . सुनहु उमा करि रेत ।

जस प्रभु जेहि चाहत करन . जनमइ तस करि देत ॥”

एक समय नारद मुनि राम नाम जपते २ हिमाक्ष नाम यज्ञ के एक चरम मुहावन मनभावन स्थान में जा निकले उस स्थान की निकाई देख मुनि बाय के चित्त में यह बात समझी, कि यहाँ बैठ, चपने राम की सेवकाई कर, यह मोक्ष मुक्तिका डाल, हाथ में माता ले, भव दुख मोचन कामज मोचन में ऐसी गाढ़ी समाधि लगाई कि कोई हजार बरस बीत गये, पर दाढ़ी का एक बाल भी न हिजा और दूसरे पाहार व्यवहार की कौन कहे। इन का ऐसा कठिन तप देख मन ही मन चपरेख इन्द्र ने सोचा, कि कदाचित्त इस तप के बल नारद ऋषि मेरा इन्द्रासन छीन मुझे राजकीन न कर दें, सो किसी कल से इन का योग बल नाश हो तो बचने की चास हो, नहीं तो सब नाश भया, मेरा बना बनाया घर यों ही गया, यों मन ही मन सोच इन्द्र गोच ने कामदेव का आवाहन किया, उस के साथ ही मोहनी मूर्ति धारि त्रिभुवन के मोहनहार कामदेव वहाँ आ पहुँचे इन के आते ही इन्द्रदेव ने निहानन पर से कुछ उमुक सुमुकुरा कर कहा, चारण मेरे पास ही बैठ जाइये, कहिये कुछक छेम है भेट हुए बहुत दिन हुए चित्त बहुत कसा या किसी से आप की परिश्रम दिया। इन्द्रदेव के सुन से यह बात निकलती हो कामदेव निरनाथ हाथ जोड़ कहने लगा कि आप ने जो मुझे बुलाया यह सुझाव बड़ा अनुग्रह दिखलाया, अब मैं बैठने के पक्षसे आप की कोई आज्ञा याच, और उसे भट कर साथ इस आप के अनुग्रह की चपने घर पीर बढ़ाने चाहता हूँ । यह मन की वास रूपी व्यास गुह्यार्थवादी कामदेव के वचन सुन चरित की वृष्टि से इन्द्र का कुलकाया मन कामज का चित्त उठा, और ने परम कुलस का बोले, कि हे भाई काम, तुम मेरे बड़े सहाई हो, तुम्हारी बड़ाई कहीं तक करूँ सब कुछ करने की समझ भयवान ने तुम्हें दी है, इसी कारण मुझे जन जन ऐसा माड़ लड़का कि जो दूसरी से नहीं चपता देख पड़ता-तब तब मैं तुम्हें जोड़ और किसी दूसरी की पाइ नहीं बकता, जो हे भाई इस बड़ी सुझा पर एक बड़ी बड़ी विपत्त आ पड़े है नारद मुनि-

राज हिमाशय में जाय समाधि लगाय मेरा इन्द्रासन लेने को ठहराय बैठे हैं,  
 जो तुम जाय तुम उन का शासन कर उद्धारन करो तो मेरे मन का पश्चासन हो।  
 दोहा—देवराज के बचन सुन . सोखो काम रिसाय ।

आजुहिं मैं नारद मुनिहिं . अरुहीं नाच नचाय ॥

ज्ञान ध्यान सब छोड़ के . पस जै हैं बीराय ।

कि बन के बनितान पनु . घै हैं लाज गंवाय ॥

इन्द्रदेव से यह बचन कह कामदेव मस्तक नवाय अपने मित्र वसन्त ऋतु  
 को साथ ले जिस स्थान पर नारद महान ध्यान बांध बैठे थे वहां जा पहुंचा,  
 जाते ही वहां वसन्त ऋतु छा गई, शीतल मन्द सुगन्ध वायु बहने लगी, सूखे  
 काठ भी हरिया गये, और पक्षव फूलों से भर गये, मृतकों में भी जो सा  
 आगया, और सब स्थानों में आनंद छा गया, जीवधारियों का कौन कहै सता  
 वृक्षों का मन भी चञ्चलता देख पड़ने लगा, सता सहक सहक पेड़ों और पेड़  
 भुक्त भुक्त सताओं से क्षिपटने लगे, कोयलों की कुहूक बियोगी जोगियों के  
 हिय में झूकसी लगी सब बेबस हो योग छोड़ सगोड़ हो गये, पर कामदेव  
 ने हजार की एक भी नारदमुनि पर न चला, उन का आसन तनक भी  
 न हिजा तब काम हार मान भट उन के चरणों पर जा गिरा और मनुहार  
 करने लगा, सब समाचार कह चमा मागी, नारद मुनि ने कामदेव का बचन  
 सुन मगन हो उस को विदा किया, और अपने मन में यह विचार किया कि  
 इसी कामदेव ने चराचर संसार को बस किया, पर तो भी इस का किया मेरा  
 कुछ न हुआ, मुझे तो इस का पाना और बान चलाता कुछ भी न मालूम  
 हुआ। जब इस ने आप आकर कहा तो मैं ने जाना, ऐसे सोच विचार नारद  
 मुनि वहां से उठे, और चले चले इन्द्र को सभा में जा अपना यह सब हतान्त  
 बर्णन किया, नारद जी के उन गुण को सुन इन्द्र ने उन को बढ़ाई की और  
 कहा कि जिस कामदेव ने शिव के आसन को डिगाया, उसे भी आपने हराया,  
 धन्य हो धन्य हो, नारद मुनि इन्द्र के मुख से श्रानो पर्यन्त सुन ऐसे फूले  
 कि तन में नहीं समाते थे, हरि गुन गाना भूत पाप का मूल, अहंकार का  
 एक तूल बांध मिथूनधारी विपुलारी के पास जाय अपनी मन भाई बात सुनाई,  
 और प्रभुनाई बनाई। श्री शिव जी ने उन का बचन सुन मगन हो मितार्ई  
 की रोति से समझाया, कि हे भाई नारद तुम्हें मेरी दोहाई, मुझ से यह बात  
 बजाई पर त्रिभुवन नाथ के पास यह बात न कहियो नहीं तो अच्छा न होगा,

पर शिव जी का उपदेश नारद मुनि के मन में न पाया, वे वहाँ से उठ भट वेङ्कटनाभ के पास प्रार्थना सुनने की यात्रा से पड़च ही गये और वहाँ जाय कामदेव के जीतने की बात चलाय सिर उठाय बैठे। श्री हरि ने नारद मुनि की अभिमान मानी बानी सुन जाना, कि नारद ज्ञानी अभिमानी हो चले, तो अब इस का यत्न शीघ्र करना चाहिये, ऐसा मन ही मन विचार नारद जी का सतकार कर बिदा किया और उन की राह में यह कीला ठानी, कि नारद मुनि की एक परम सुहावन नगर देख पड़ा जिस के प्रांगे इन्द्रपुरी की शोभा फीकी पड़ जाय, वहाँ के राजा की चौदह बरस की एक कन्या जिस के रूप के प्रांगे रति भी कुरूप देख पड़े। नारद मुनि उस कन्या की देख मोहित हुए, वह तो सपने घर चली गई पर मुनि के शरीर में काम की आग व्यापी, ध्यान ज्ञान सब भूल गया काम भुग्न का विष नख शिख ही गया, तब तो लगे उस नगर की गलियों में धूल खानने कभी २ चेत आवे तो समझी और कहें कि मेरे मन की क्या हो गया।

सवैया—जपजाप जगोरन सो जकखो जुलमी तक ऊधम ठानतु हैं।

गुरजान महाबत एङ्ग की पांखुस ताहू की पान न मानतु हैं ॥

भुक्ति भूमे भुक्ते उभक्ते न रुक्ते बड़ि प्रांगिहि की पद धारतु हैं।

उहि बाण की रूप बिलोके बिना मन मेरी मतंग दरावतु हैं ॥

ऐसा सोच बैठ जाते और कहने लगते, कि काम की तो पुष्पबाण सुनते थे पर यह बज्जबाण है, हा ! इस में इतनी गर्मी कहाँ से आई, हो न ही शिव जी की तीसरी पांख की आग इसी में रह गई है, वही सुम्मे जलाए डालती है, शीतल वायु, कमल, चांद खस आदि से और दाह तो कुछ कम होती है, पर यह काम की दाह तो सी गुन और बढ़ती है हा ! क्या करूँ किच से कहूँ, कौन सुने, दूसरा इस दुख को क्या जाने, जिस तन लगे सोई तन जाने। सवैया—जाय न मंत्र ते यंच ते मूरि ते, जाँड कहीं नहीं जात बिधा है।

भुखो कखो तन मूखो फिखो, मन देखि कहें जन बीरो महा है ॥

हाय दर्ई जनु काहू की होय, कहै रिजिनाथ भयही व्यथा है।

बोखो कहा धन बोखो मको, यह कामकथा की कथा चकथा है ॥

फिर कहते हैं कि भय काम। मैंने तेरा क्या बिगारा है जी तू सुम्मे ऐसा खताता है, मेरा मुनि भेष देख सुम्मे शिव तो नहीं जानता कि पिछला बैर चेत बाणों से बेधे डालता है, क्या सब बाण सुम्होपर चला देगा ? एकाद भी

तो उस राजकुमारी पर चला, कि उस का मन मेरी ओर चले, एक बार तो आ कर मुझे देखे, जो वह तेरा बाबू खाय चवराय इस समय मेरे सोही आ जाय तो तेरा मुझे बाबू मारना दुन्दुनी हो जाय ।

नारद जी ऐसे बक भक्त रहे थे कि इतने में यह बात सुनी की राजा उस राजकुमारी का स्वयम्बर करने वाला है, तुरत उकटे पाँव फिरे, हरि के पास जाये और अपने मन की मगन कह हरि से यत्न करने की प्रार्थना की और कहा कि हे महाराज इस मेरे काज में, आज मन्त्राय भूजिये, आप अपना रूप मुझे दीजिये जिस में, स्वयम्बर में ध्यारी राजकुमारी मुझे छोड़ और ओर गोड़ न दे, यह वचन सुन प्रभु मगन हो मुनिकुराय कर बोले, कि हे नारद जिस में तुम्हारा भला होगा, मैं वह अवश्य करूँगा निश्चयेन समाज में जाओ, तुम्हारे रूप देख सब राजाओं का भेष निःशेष हो जायगा, तुम्हारे रूप का रूप न किसी का हुआ, न होमा, ऐसा कह कौतुकी प्रभु ने नारद को सब देह तो अपनी सरोखी और मूँह बंदर का मा कर दिया । नारद मुनि को अपने मूँह की क्या सुध थी देह को शोभा देख भाट उठ स्वयम्बर में जाई वहाँ २ महाराज बैठे थे जा भकड़ के बैठे, इन को कुरूपता देख कोई न हंसा मुनि जान नवीं में प्रणाम किया, कन्या का बाप चाप आ इन के पाँवों पर रखता । उस समय समाज में शिव जी के दो मन ब्राह्मण का भेष धरे बैठे थे, उन्हें शिव जी ने नारद जी का चरित्र जानने की भेजा था वे नारद के विचित्र रूप को देख कूट करने और कहने लगे, कि बाह बाह इस रूप के पागी राजकन्या दूसरे की ओर क्यों ताकीगी, निश्चयेन इन की बरेगी ऐसे कह कुछ हँसने और मुनि के मुख की बार २ ताकने लगे पर नारद मुनि के मन की मगन तो कन्या में ऐसी मगन थी कि उन को अपने में भी अपने बदन की सुधि न हुई, कन्या की ओर एकटक ऐसे देखते थे कि मानों उसे चाँखी हो वे कील लेंगे वह बारी भोरो राजकुमारी इन के बनावट और आँखों की बनावट और आसन में उचकावट देख ऐसी हरो, कि दूरही से दूसरी ओर फिरो, और साक्षात् लक्ष्मोपति हरो बैठे थे वहाँ जा पड़ी और वहीं पड़ी पत्त की वहाँ बाव से उन्हीं की बरा । उस वड़ी नारद मुनि पर ऐसी कड़ी पड़ी कि वड़ी डड़वड़ी में पड़ जल हीन सीन के समान तड़पने लगे । जो दशा देख शिव जी के दो दोनों मन, जिनमें ते इन की भिराओ हो बोले, मुनि जी ! भला अपना मूँह तो किसी गड़हें में जा के देखो, तब राजकन्या

ज्वाहने की भंभी। यह वचन सुन नारद मुनि ने अपना मुँह पापी में देखा तो बानर सा देख परम क्रोधित हुए उन्होंने ने पकड़ी तो शिव की से लग दोनों मनों को शाप दिया कि वे दृष्टी तुमने यह बात मुझे गहने न लगाई, सभा में मेरी हंभी कराई, इस लिये तुम दोनों जा कर दुःखदाई राक्षस कुल में जन्म ले भाई हो, और जब तक रघुराई के हाथ न मरो तब तक तुम्हारी गति न हो, इस प्रकार नारद जी उन दोनों को आप दे आप वैकुण्ठ को ताक जगा चले, प्रभु उस राजकन्या को लिये जाते बाट ही में मिले, उन को देखते ही नारद मुनि का क्रोध और जगा, मानीं बलती आग में घी पड़ा आया से बाहर हो गये, साँखें जाल हो आईं, शरीर कांपने और जोठ फड़कने लगा। इन की यह दशा देख, प्रभु ने मन हो मन अवरेख सुसहस्रा कर पूजा, हे नारदगो कहाँ चले, क्यों चबराये से हो। इतना वचन सुन नारद मुनि प्रभु को और हाथ उठा सुदर और डाट कर बोले, कि तेरा मुँह जारने चले, भले तू राह में मिना, अब अपना करमो ले, मुझे दोष न दे, तू बड़ा कपटो अप-स्वार्थी है, समुद्र मथ कर देवताओं ने रतन निकाले, तब तू ने छल कर असुरों को मद और महादेव की शिव दे आप लक्ष्मी की भली ठगहारी करनी परक गया है, अच्छा आज तू ने भले घर बायन दिया है, अब अपना किया हाथो हाथ ऐमा पाता है, कि फिर किसी को ठगने न जायगा, आज ही से सदा हो के लिये मैं तेरी बान छोड़ाये देता हूँ, मन्थरना, बस चुप खड़ा रह, तू ने मेरा जीवन अन्न भारो किया, मुझे तो बिरह को आग में जब तक जीना है जलना है, अब तू भी ले, तू ने मुझे मानुषीकन्या के लिये ठगा, इस कारण तुझे भी मानुष जन्म ग्रहण करना पड़ेगा, तू ने मेरा मुख बानर सा कर दिया, सो बानरी से ही तेरा काज मरेगा, और तू ने छल कर मुझे पिबारी का बिरय मचाया, इस कारण तू भी पिबारी के बिरह को आग में पड़ेगा और जंगल पहाड़ों में भटकता फिरेगा। नारद मुनि के इस शाप को भगवान ने आप निर माथों पर लिया और नरतन धर देवताओं का काज किया। जब प्रभु ने नारद मुनि पर से अपना साया खोच की, तब उन की आन हुआ आपे में आते हो आखें नीची कर कीं, मारे डर और काज के मज हो गये, काटिये तो कीहु नहीं. "बाहि बाहि प्रभु कृपा निधाना। मम अपराध क्षमी भगवाना।" कह कटे रुख से प्रभु के चरनी पर गिर पड़े। और गिड़गिड़ा बिलखा २ कर कहने लगे, हे प्रभु मेरा आप झूठा हो, श्री भगवान ने नारद जी का वचन सुन कहा।



बौपार्ई—नरतन ग्रहन हेतु मुनि भारी, अतिशय इच्छा रही हमारी ।

सो तब शाप सुनो मुनिवाया, शाप न है बरु मो पर दाया ॥

नरतन ग्रहन करब हम जाई, धरती भार हरब हरखाई ।

मोहि समान शंकर जिय जानी, भजहु तिनहि तुम सहित भवानी ॥

क्रोधित हो दीनेउ जो शापा, सो तब पाप कुटि शिव जापा ।

हृषानिधान श्री भगवान । नारद मुनि को इस प्रकार समझाय दुभाय  
अन्तर ध्यान हुए । तब नारद मुनि भी अति कज्जित हो अपने स्थान को गये ।

इसी बीच स्वयंभुमनु और उस को स्त्री स्वरूपा जिन से इस जगत के  
सब मनुष्य उत्पन्न हुए हैं, बहुत काबू तक राज, और भोगकर विरक्त हो, अपने  
अनुक्त पुत्र को राज दे नैमिषारमिथिक नाम स्थान में गये, और वहाँ दोनों  
स्त्री पुरुष परम अनुरक्ति के साथ जगदीश्वर को भक्ति करने लगे, तीर्थों में  
स्नान किया, ब्राह्मणों को सब कुछ दान दिया और दिन रात भगवान का  
गुनगान किया । इतने में मनु जो महाराज के मन में एक बार यह बात  
समझाई, कि जो परब्रह्म अपने अंश से शिव ब्रह्मा और विष्णु को बनाता है,  
जो सब को देखता है पर किसी को देख नहीं पड़ता, उस का दर्शन हो तो  
जन्म सफल मनोरथ पूरा हो, नहीं तो सब कुछ अधूरा रहता । ऐसा विचार  
मनु जो और उन की स्त्री स्वरूपा तप करने लगे, स्नान पान तज ब्रह्म के  
ध्यान में तन मन से लवलीन हुए और ऐसा तप किया, कि शिव और ब्रह्मा  
अनेक बार उन के पास आए, वर मागने को बहुत लुभाया, पर मनु जो के  
मन में एक भी न समाया, उन्होंने ने यही लव लगायी, कि जब वही प्रभु  
दया करेगा, कि जिस को माया ने सब को लुभाया है, तभी काज सरेगा  
और सोचा कि यद्यपि वेद ने उसे अन्नख अगोचर गाया है, तौ भी भक्तों के  
बस बताया है, सो जो मेरी भक्ति पूरी होगी तो वह अवश्य मेरा मनोरथ  
पूरा करेगा, प्राण रहते रहे जाते जाय, हाय जब मेरे सहाय आय दर्शन देंगे  
और मनोरथ पूरा करेंगे । कभी २ ध्यान कुटता तो कहते कि “ हेरी कल्या  
नैन ते कारुणीक गोविन्द । प्रभु पावन मैं पतित हो, कर्मों अवज्ञा हुन्द । कर्मों  
अवज्ञा हुन्द स्वामी सेवक के नाते, यह सम्बन्ध बिचार देव मैं चाहत बाते ।  
तौ दीन अनाथ सबे बिधि हों तब सेरो । पखो नाथ पद मैं पास दास अपना  
कर सेरो । ”

“दाया घन की गगन है, गुन मन तब न गनाहि, मति अनुमान मुनिन के,

निगमन माहिं जगाहिं । निगमन माहिं जगाहिं जगत ज्यो जगनिधि जग  
जन । बनि बनि बहरि बिलाय जाय जहं नहिं बाणीमन । दुर्गम दीन दयाका  
देव दारुनि तब माया, मोहे सब सुर सिद्ध तउ सेवक सन दाया ।”

इस प्रकार मनु जी के मन का जगन और तप का यतन देख प्रभु मगन  
हुए, आकाश बानो हुई कि बाह बाह मनु तुमने मेरे पर सखी कब जगाई  
और पूरे भक्ति देखाई, मेरी दया तुम पर हुई, मांगो क्या मांगते हो, इस  
बचन के सुनते ही मारे आनन्द के मनु जी का गला भर आया, गद गद हो  
हाथ जोड़ बोले, हे भक्ति हितकारी दुखवागी सुरारी यदि तुम्हारी दया मुझ-  
पर हुई तो पाप का जो रूप सदा शिव सदा ध्यावते और वेद पुरुष जिसे सगुन  
स्वरूप कह गावते, उस अपनी रूप का दर्शन मुझे दीजिये और कृतार्थ कीजिये ।

श्रीपार्ष्ण—मुनत बचन भक्तान हितकारी, प्रगटे रामरूप प्रभु धारी ।

श्याम वरन चमकत मुठि देहा, जस बह नीर भरा नवमेहा ॥

जाजत शरद चन्दमुख देखी, वरनि सकौ नहि रूप विशिखी ।

कंदुप्रोव भुज दण्ड विशाला ॥ उर कौस्तुभ मनि मुन्दर माला ॥

पीत वसन विश्रुत सम छाजे, मुकुट तेज कखि सूरज लाली ।

बाम भाग सोई जगरानी, आदि शक्ति सीता महरानी ॥

प्रभु इच्छा सिर जे जग जोई, वर्णन तामु करे किमि कोई ॥

हे पार्वती प्रभु ने जो रूप धर मनु सत्यरूपा की दर्शन दिया उस भांकी  
के वर्णन करने की सामर्थ्य मुझे नहीं, वह मन्द हास करती प्रभु की मूर्ति  
जब सूरत पातो है तब मुझ बुझ सब जाती रहती है, जो मैं यही पाता है,  
कि बस चुप मार सोचा हो करिये ।

उस मूर्ति के वर्णन करने की सामर्थ्य किस की है, उस समय ब्रह्मा आदि  
सब देवता लोग वहां आ रहे थे, सब दर्शन रस चाखने में गुड़ चिंचटे में  
लगे थे, किसी का तन मन की कुछ मुझ बुझ न थी, उस समय मनु सत्यरूपा  
जी की तो ऐसी दशा हो रही थी कि जैसे कोई रंक बड़ा धन पा बाबखा हो  
जाय, दोनों की हक बकी लग गयी थी । नयनों में प्रेम का आंसू डवडवा  
रहा था, गला भर गया था शरीर पर का बस्त्र कुछ कंप रहा था चाहते थे  
कि कुछ बोलें पर कहां बोला जाता था, दोनों दंडवत करने की प्रभु की  
चरणों के आगे गिर पड़े । तब भक्त बल्लभ प्रभु ने अपने निज कर कमल से  
मनु जी को उठाया, आदि शक्ति भवानी सीता महरानी ने सत्यरूपा की

कहाया, और प्रभु ने कहा कि हे मनु जो तुम्हारी मगन देख हम तन मन से मगन हुए हैं, अब अपने मन की चाह कहो, ऐसी कोई बात नहीं जो मागने पर तुम्हें हम न दे सकें, प्रभु का यह वचन सुन मनु जो मगन हो बोले हे नाथ आपने इस अनाथ के साथ पर हाथ दिया सब तौर मनाथ किया। मेरी सब कामना पूरी हुई, अब क्या वच रही कि मागूं पर हाँ एक बात मन में है, मुँह से कहती नहीं सकुच पाती है छोटे मुँह से बड़ी बात कैसे काटूँ मो दया निधान आप छट छट व्यापी आप अन्तर्यामी स्वामी हैं, मेरे मन की चाह आप से छीपी नहीं रह सकती, यदि पूरी करने याग हो तो पूरी करिय इतना वचन सुन प्रभु मुसकुरा के सतरुपाजो की ओर देख बोले, हे सत्वरुपाजो मनु जो तो यह चाहते हैं कि मेरे समान गुण रूप का निधान सन्तान उग्न की हो अब आप कहिये क्या चाहती हैं, यह बात सुन सत्वरुपाजो बोलीं, कि हे प्रभु इस दासो की भीयही कांछा है, हे भक्त हितकारी मुरारो तुमारी धानिक सोचने से मुझे यह बात तनिक भी कठिन नहीं मालूम होती। सत्वरुपा जो से यह वचन सुन प्रभु ने मन में छन एक कुछ गुण मुसकुरा कर के कहा कि हे मनु जो, अपने समान प्रभाववान् आप सन्तान कहाँ खोजूँ, और कहाँ पाऊँ, सो मैं आप सतरुपा के कोख में जन्म ले आप का पुत्र होऊँगा और मर जीका कहूँगा।

इतनी कथा कह श्री याज्ञवल्क्य मुनि भरद्वाज जो ने कहने लगे, कि हे भरद्वाज अब शिव जी के उन दोनों गर्भों का वृत्तान्त सुनिये जिन्हें नागदजो ने यह शपथ दिया था, कि तुम दोनों राजस होओगे। वे दोनों पुनस्त्य ऋषि के वंश में अवतार ले राजस हुये, ये पुनस्त्य मात्तात ब्रह्मा जो के बेटे थे, इन के वंश चलने का हाल यह है, कि ये महान नगर के समोप एक स्थान में आसन बांध तपस्या करने बैठे थे, वहाँ नगर की लड़कियाँ खेलने आती थीं, और इन को बहुत सताती थीं य कितनाहूँ झिड़कियाँ और झुड़कियाँ देते थे कुछ भी न डेराती थीं, पर अंगुनियाँ नचाय मुँह बिराय उन्हें चिढ़ाती थीं, कभी प्रनादो मांगन के मिस उन के पास जाय मुँह बिराय पातो थीं, और कभी ठीक मजोरग ले उन के पास गाय बजाय धूम मचातो थी, कभी पांचचार गुईया मिस उन के पास जा हाथ दिखाने के बहाने बैठ मन बहकाती थीं, और खिल खिल हँसतो थीं पाँच मिचौवन खेल में कोई उन के पीठ पीछे बैठ गोद्यों की दोठ बचातो थीं, और तब उन के कान में टू

कर के हंसती खुटका छूने भाग जाती थी। जब पुनस्त्य जी की सही ने इस प्रकार बहुत ही बताया तब तो मुनि जी की झोप आया, हाथ में जल किया और सब कन्याओं को सुनाय आप दिया, कि ऐ राखी ! खबरदार रहियो, कल से कोई वहाँ खिलने न आइयो, जो कोई अब वहाँ आवेगी उसे पेट रद्द जावेगा, फिर मेरा दोष न देना। यह आप सुन सब कन्या सुन ही गईं और फिर कौन वहाँ ठहरती है धीरे २ सब के सब एक २ कर विसकन्त हुईं, और फिर कभी वहाँ न गईं परन्तु तृणबिन्दु राजा की कन्या इस आप का हास न जानती थी, वह एक दिन बाप से एक आप से आप पुनस्त्य मुनि के तपोवन में सखियों के खोज में गई, पुनस्त्य ऋषि के सम्मुख हुई, उन के सामने होते ही उस का रंग और का और हो गया, देह भारी हो गई, मूँह पीका हो गया कलेजा बलधकाने लगा, जाँघों में कुछ पोड़ा सी मालूम होने लगी, यह हास देख वह बारी भोरी राजदुखारी चकराई, उसी काल छकटे पाँव फिर बाप के पास आई, सब बात कह सुनाई, यह बात सुन तृणबिन्दु राजा मन में कुछ गुन उस कन्या को साथ ले पुनस्त्य मुनि के पास आये, हाथ जोड़ सिर नाय सुनिराय को उस कन्या का हाथ पकड़ा गये, कुछ दिनों के खीनने पर उस कन्या को एक पुत्र हुआ, मुनि जी ने उस का नाम विश्वा रक्ता, यह बड़ा प्रतापी तेजस्वी ऋषि हुए इसी विश्वा मुनि जी के पुत्र वैश्व-वा हुए जिन को कुबेर भी कहते हैं जिन्होंने तप कर धनराज की पदवी पाय पुष्प विमान पाया और संका में राज करने लगे।

अब एक दिन धनराज जी कानों में कुछ क हाथों में कंठन पहने साथ पर मणि जड़ित ऐसे मुकुट दिये कि जिस की ओत के आगे सूर्य देव की ओत कम पड़ गई थी, पुष्पक विमान में बैठे आकाश मार्ग से पिता का दर्शन करने जाते थे, और दूर से उन के भूषणों की झलक ऐसी मालूम पड़ती थी कि जैसे हूबहू सूर्य देव हों। उसी समय सुमाकी नाम राजस जिस की पह-की राजधानी संका थी और वहाँ से जब भगवान ने मार निकाला तो परताक में जा बसा था, अपनी बेटी कौकसी को रथ पर बिठाये बर के खोज में चला जाता था, उसकी बेटी का रूप ऐसा था कि रीति हार, मानती थी, मानी आघात खझी ही थी। सुमाकी ने धनराज जी को उस ठाठ से जानी संयोगन देखा, देखते ही उस के जी में यह बात समाई कि किसी चतुराई से इस कन्या की सगाई ऐसी बगड़ करनी चाहिये जिस में इस के जी सुझि नारी हो

यह भी देखो सम्यक् पावै जैसी कि धनराज ने पाई है । ऐसा भीच घर कौट गया और संकोच छोड़ अपनी कन्या से यी कहा—कि हे बेटी तेरी अब क्या अब विवाह योग हुई, आज तक राह देखता रहा पर किसी योग वर का दिया व न पड़ा कि पाकर मुझ से तुझे मांगे । अब मैंने तेरे ब्याह के लिये एक बेंबत बनाया है, हे बेटी तू पाप जा धनराज के बाप बिश्वना मुनि को घर, मन में कुछ न डर, मैं भी तेरे साथ साथ चलता हूं पर मैं इधर हो रहूंगा, तू मुनि जी के पास जाना और अपना रूपदिखा उन्हें सुभाना । ऐसा कह कौकसी को रथ पर, बिठाया बिश्वना मुनि के आश्रम के पास जा ; उतार दिया । तब तो वह मुनि के तपोवन की चली उभी समय बिश्वना जी यज्ञ कर रही थे, वह कन्या अपने पिता का वचन मान उसी स्थान बिश्वना के मनमुख जाय पैर के नखों से भूमि की खोदती नीचे की ताकती खड़ी हुई । यज्ञशाला में पैठतेही उस के रूप की नीत की चांदनी छिटक गई, अरुणना आदि सुगन्ध का मंद मोद छा गया, सब अचम्भे में आ गये और उस कन्या की कन्या की देखने लगे । तब बिश्वना जी ने पूछा भाई तुम कौन हो, देव-कन्या वा अप्सरा हो, यहां किस लिये आई हो, यह बात सुन कौकसी कुछ सुमकराई और चुप खड़ी रही ।

दोहा—कहि न सकत कहु काज ते, अकथ आपनी बात ।

ज्यों ज्यों मुनि बलियात है, त्यों त्यों तिय सवरात ॥

कवित्त—आब सजि मुनि रूप पै चली यी मुखचन्द बाकी चन्द चान्दनी की मुख मन्द सी करत जात । कहै गुन नागर त्यों सजन सुगन्ध हो के पुंजन कंजन कंज से भरत जात ॥ घरत जहाँई जहाँ पग है पियारी तहाँ मंजुल मजीठ हो के मांठ से ढरत जात । वारन ते होरा सेत सारी की किनारन ते चारन ते मुकता हजारन भरत जात ॥

यह कह जब मनु जी ने बहुत पूछा तो बोली कि हे महाराज पाप पाप ही सर्वज्ञ है, मेरे जाने का कारण मुझ से क्यों पूछते हैं । तब तो मुनि जी ने नाम भाम और जाने का काम सब अपने ध्यान से जान लिया, और कहा हे प्यारी मैं वन फलखानेद्वारा मुनि हूं और तू दैत्य राजदुखारी मेरा तेरा जोड़ कैसे पड़ेगा पर तू मेरे पास आस लगाकर आई है इस कारण मैं तुझ से मुंह नहीं मोर सकता, मुझ से दो पत्र तुझे होंगे, वे होने की तो बड़े नामी घामी और जगत विजयी होंगे, पर इस के साथ ही बड़े पापों उत्पत्ती राख

होगी। यह बात सुन मन में कुछ गुन कैकसी ने हाथ जोड़ कर कहा, महा-  
 राज आप ऐसे मुनि पति से मैं ऐसे पुत्र नहीं चाहती तब मुनि ने कहा  
 निम्ना मत कर तेरा तीसरा पुत्र जो होगा वह परम गुणी योग्य और रघु-  
 नाथ जी का भक्त होगा, वह दोनों कुछ तारिगा और समर होगा। यह सुन  
 कैकसी मगन हुई और मुनि जी की सेवा में रहने लगी। कुछ काल बीतने  
 पर उस को गर्भ रक्षा दस महीने पर उसे एक पहिलौठा पुत्र हुआ, वह उस  
 शिव जी के गनों में से एक था जिन को नारद जी ने श्राप दिया था और  
 जिन की कथा पड़ते कह चुके हैं।

जनमतेही इस को दश मुंड बीस भुज थे, यही परम डेरावन जग में  
 प्रसिद्ध रावन नाम त्रिभुवन विजयो राक्षस राजा हुआ, इस के जनम के  
 समय आकाश में काखी मेघ घिर आये थे, बहुत भयानक गरजन और बधिर  
 बरसाने लगे थे, सब पृथ्वी डगमगाने लगी थी, और साधु सन्तों का जी आप  
 से आप डराने और बबराने लगा था, जिस घर में उसका जन्म हुआ था उस  
 के चारो ओर सियारिनियां बहुत फेकरने लगी थीं, बड़े जोर से आंधी आई  
 थी, बवंडर उठने लगे थे, देवता लोग कांपने लगे थे, और दुष्ट राक्षसों के मन  
 में आनन्द उमग आया था। इस के थोड़े ही दिनों के पन्तर कैकसी की  
 दूसरा पुत्र कुम्भकर्ण नाम हुआ, इस के जन्म काल में भी सियारिनियां का  
 फेकरना और हवा का चलना सब रावन के जन्म समय सा घनघोर और  
 डेरावन हुआ था।

उस के पन्तर सुपनखा नाम कन्या हुई, रूप गुन और शील में यह भी  
 भाइयों में बहन ही हुई तब तीसरे पुत्र विभीषण उत्पन्न हुये इन के जन्म  
 काल में देवताओं ने दुन्दुभी बना कर फूल बरसाया जगत में आनन्द छा  
 गया, पृथ्वी में कुछ जान सी आ गई और सज्जन साधुओं के जी में आनन्द  
 उमड़ आया।

अब दोनों भाई दिन दूने और रात चौगुने बढ़ने लगे, रावन कुम्भकर्ण  
 ज्यों २ बढ़े त्यों २ इन का उतपात भी बढ़ा। ऋषियों के बालकों को कोन  
 चलावे बढ़े २ तपसियों को भी डेराने और सताने लगे, तपोवन के सृग  
 पक्षियों का गला सुरेर मरार कर ढेर लगा दें और दोनों भाई बैठ मिठाई  
 खा ढेर का ढेर सफाचट कर जावें जो दाव पावें तो मुनि लोग का भी गला  
 दबावें, कभी खेसते २ यज्ञवेदी गिरावें कभी मुनिश्री की कुटिया बड़ेरिठ

खींच की कभी तपोवन के हृत्नों पर चढ़ ऐसा दुमावे कि उन को फन फूँक सब तिर पड़े कभी चक्के और टेले ऐसा चक्कावे कि कितने सुनिचाँच कान खो बैठे, केवल विभीषण इन दोनोंसे दूर रहें “उपजें एक संग जल माहीं। जलज जोक जिमि गुन बिलगाहीं” के समान इन की रहन और गहन भाइयों से बिलग थी।

एक दिन वे तीनों भाई कैकयी के पास गये, वह इन्हें देख ऐसी वृत्तित हुई कि जैसे बहवे को चेतु देख पेन्हा जाती है, उन तीनों को आगि बिठा किया, सुख चूँच खाड़ प्यार किया और सीख दो कि हे बेटे अब तुम सयाने हो चले, ऐसी आन चक्की जिन में अपने भाई धनेश्वर के समान बड़ाई पानी भाई की यह सुखदाई सीख तीनों भाइयों ने कान दे सुनी उन के मन में ऐसी एक आन आई कि उन तीनों ने उसी स्थान प्रतिज्ञा की कि हम लोग धनराज से भी कड़ के होंगे और उसी छन बन में जा तप में मन दिया। फिर तो ऐसा तप किया कि कुछ कहा नहीं जाता कई हजार बरस गिराहार मूर्ख के सान्ने पैर के एक अंगूठे के बल खड़े रहें, ठण्ड काष्ठ में बराबर पानी में पड़े रहें, और गरमी में पञ्चाग्नि तापा किये। इन का ऐसा तप देख देवता सब दंग हो गये। रावन अपने एक २ हजार बरस का तप पूरा होने पर होम करता और पूर्णाहुति के समय अपने हाथ अपना एक माथ काठ अग्निकुण्ड में आहुति देता। ऐसे जब अपने नव माथ अपने हाथ आग में आहुति किये केवल एक माथ रह गया, अन्त की उनकी भी काटने की हाथ लगाया, तो ब्रह्मानी उस स्थान सोन पगट्टुए और रावन के पास आकर बोले कि बाह बहा, अब तुझारा तपपूर्ण हुआ, और शक्ति शमत करो तुम ने जो मस्तक आग में आहुति किये वे सब तुझारे फिर हो जावें, इतना ब्रह्मा जो केबोक्तते ही उस के कटे सब माथ फिर भट निकल आण, तब ब्रह्मा जीने कहा कि बर मांगो क्या चाहते हो, उस ने कहा बाबा जो मुझे अमर कीजिये तब ब्रह्मा जी ने कहा ऐ बेटा यह क्या बरदान मांगा, अमर होना क्या बड़ी बात है और अच्छे २ बर मांगो तब उसने कहा कि अच्छा जो अमर होनेका बरदान नहीं देते तो ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि मुझे देव दानव राक्षस मर्धर्व नाग कोई न मार सके और मनुष्य बानर आदि दूसरे जीवों के किये तो मैं आप ही बहुत हूँ। तब श्री ब्रह्मा जी यह मुँह मांगा बरदान उसे दे उस के भाई कुम्भकर्ष के पास गये और उस से भी बर मांगने को कहा।



ब्रह्मा जी के उस की ओर फिरते हो देवताओं के पेट में और भी हरिन कूदने लगा घबरा गये उन लोगों में सोचा कि इस के मारे यीहीं जगत उबार होगा तिसपर जो बरदान पाया तो सांभल ही बिहान हुआ जैसे बचेंगे ऐसा सोच सरस्वती जी को उस पोच के जीभ पर बिठाया तब तो वह सरस्वती का बी-रायों ब्रह्मा जी से बोला हे दादा जी मैं तप और ब्रह्मचर्य करने में बहुत दिन सोया नहीं अब दया कर यही बरदान दीजिये की जब तक जीकं हः महीना सोकं और एक दिन जागूं ब्रह्मा जी ने यह सुन जी में कहा कि "भइ सहाय सरस्वति हम जाना " और प्रसन्न हो मुंह मांगा वर दिया, और उस के पास से दवे पांव खिसक गये । ब्रह्मा जी के जाते ही सरस्वती जी उस के जीभ पर से खिसकीं तब तो वह अपनी सुध बुध में आया, बहुत पछताया और हाय मारा कि हाय मैंने यह क्या किया मुझे क्या होगया जो आप अपनी पांव में कुल्हाड़ा मारा ब्रह्मा जी का वर तो अब भूठ होने को नहीं, अब क्या करूं अपना हारा किस से कहूं यह देवताओं का काम जान पड़ता है उन्हीं दुष्टों ने मेरी मति फिर मुक्त में यह वर मंगवाया, सो अच्छा जी मैं एक का हूंगा, तो उसे बदला लूंगा । इसी बीच श्रीब्रह्मा जी बिभीषण के पास जा पहुंचे और वर मांगने को कहा बिभीषण जी ने श्री ब्रह्मा जी को धन मान और कहा हे प्रभु कृपा कर इस दीन को यह बरदान दीजिये कि मेरी पटल भक्ति श्री रामचंद्र में हो बस " जिहि योनि जन्मों कर्म बस तहँ राम घद अनुरागज " यह सुन श्री ब्रह्मा जी गदगद हो गये, धन धन कहते बोले एवमस्तु, उसी क्षण आकाश से देवताओं ने धन्य २ कह श्री बिभीषण जी पर फूल बरसाया और दुन्दुभी बजाई ॥

## रामचरित मानस ।

### चौपाई

बंदौ रामनाम रघुवर को . हेतु कसानु भानु हिम कर को ॥ १ ॥  
 बिधिहरिहरमय बेदप्रान सो . अगुन अनूपम गुन निधान सो ॥ २ ॥  
 महामंत्र जोइ जपत महेसू . कासीं मुकुति हेतु उपदेसू ॥ ३ ॥  
 महिमा जासु जान गनराऊ । प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ ॥ ४ ॥

जान आदिकवि नाम प्रताप . भयउ सुद करि उलटा जापू ॥ १ ॥  
 सहस्रनाम सम सुनि भिवानी . अपि जेई यिय संग भवानी ॥ २ ॥  
 हरषे हेतु हेरि हर ही को . किये भूषनु तिय भूषन सी को ॥ ३ ॥  
 नामप्रभाउ जान सिव नीको . काककूट फल दीन्ह अमी को ॥ ४ ॥

दोहा—वरषा रितु रघुपतिभगति, तुलसी साकि सुदास ।

रामनाम वर वरनयुग, सावन भादव मास ॥ १९ ॥  
 अपर मधुर मनोहर दोऊ . वरन बिकोचन जनजिय जोऊ ॥ १ ॥  
 सुनिरत सुलभ सुषद सब काहू . कोकलाहु परलोक निबाहू ॥ २ ॥  
 कहत सुमन सुनिरत सुठि नीके . राम लखन सम प्रिय तुलसी के ॥ ३ ॥  
 वरनत वरन प्रीति बिलगातो . ब्रह्म जीव सम सहज संघाती ॥ ४ ॥  
 नर नारायन सरिस सुभ्राता . जगपालक बिसेषि जनप्राता ॥ ५ ॥  
 भगतिहुतिभ कल करनविभूषन . जगहितहेतु बिमल बिधु पूषन ॥ ६ ॥  
 स्वाद तोष सम सुगति सुधा के . कमठ सेष सम धर बभ्रुधा के ॥ ७ ॥  
 जनमन मंजु कंज मधुकर से . जीह नसोमति हरि हलधर से ॥ ८ ॥

दोहा—एक छत्र एक मुकुटमनि, सब वरननि पर जोउ ।

तुलसी रघुवरनाम के, वरन बिराजित दोऊ ॥ २० ॥  
 समुझत सरिस नाम अरु नामी . प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी ॥ १ ॥  
 नाम रूप दुइ ईस उपाधी . अकथ अनादि सुसामुक्षि साधी ॥ २ ॥  
 को बह छोट कहत अपराधू . सुनि गुनभेद समुक्षिहंदि साधू ॥ ३ ॥  
 देषिअहि रूप नामभाधीना . रूपज्ञान नहि नाम बिहीना ॥ ४ ॥  
 रूप बिसेष नामु बिनु जाने . करतलगत न परहि पहिचाने ॥ ५ ॥  
 सुमिरिअ नामु रूप बिनु देषे . आवत हृदयं सनेह बिसेषे ॥ ६ ॥  
 नामरूपगति अकथ कहानी . समुझत सुषद न परति बषानी ॥ ७ ॥  
 अगुन सगुन बिच नाम सुसाषी . उभयप्रबोधक चतुर दुभाषी ॥ ८ ॥

दोहा—रामनाम मनिदीप धरु, जीह देहरी द्वार ।

तुलसी भीतर बाहर हु, जौ चाहसि उजियार ॥ २१ ॥  
 नाम जीहं जपि जानहि जोगी . बिरति बिरांचि प्रपंच बियोगी ॥ १ ॥  
 ब्रह्मसुषहि अनुभवहि अनूपा . अकथ अनामय नाम न रूपा ॥ २ ॥

जानी चाहिं गूढ गति जेऊ . नाम जीह जपि जानहु तेऊ ॥ ३ ॥  
 साधक नाम जपहि क्य काएं . होहि सिद्ध अनिमादिक पाएं ॥ ४ ॥  
 जपहि नामु जन आरत भारी . मिटहि कुसंकट होहि सुषारी ॥ ५ ॥  
 रामभगत जग चारि प्रकारा . सुकृति चारिउ अनघ उदारा ॥ ६ ॥  
 चहु चतुर कहुं नाम अधारा . ज्ञानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा ॥ ७ ॥  
 चहुं युग चहुं श्रुति नामप्रभाऊ . कलि बिसेषि नहि आन उपाऊ ॥ ८ ॥  
 दोहा—सकल कामनाहीन जे,  
 रामभगतिरसकीन ।

नाम पेमपीयूषहृद, तिन्हहुं किये मन मीन ॥ २९ ॥  
 अगुन सगुन दुइ ब्रह्मसंरूपा . अकथ अगाध जनादि अनूपा ॥ १ ॥  
 मोरें मत बड नामु दुहुं तें . किय जेहि युग निजबस निजबूते ॥ २ ॥  
 प्रौढि सुजन जानि जानाहि जन की . कहउं प्रतीति प्रीति रुचि मन की ॥ ३ ॥  
 एकु दारुगत देखिअ एकु . पावक सम जुग ब्रह्मबिवेकु ॥ ४ ॥  
 उभय अगम युग सुंगम नाम तें . कहेउ नामु बड ब्रह्म राम तें ॥ ५ ॥  
 व्यापकु एकु ब्रह्म अबिनासी . सत चेतन घन आनंदरासी ॥ ६ ॥  
 अस प्रभु हृदय अछत अविकारी . सकल जीव जग दीन दुषारी ॥ ७ ॥  
 नाम निरूपन नाम जतन तें . सोउ प्रगटत जिमि मोळ रतन तें ॥ ८ ॥  
 दोहा—निरगुन तें इहि भांति बड ,  
 मासप्रभाउ अपार ।

कहउं नामु बड राम तें , निजविचारअनुसार ॥ २९ ॥  
 राम भगत हित नर तनुधारी , सहि संकट किय साधु सुषारी ॥ १ ॥  
 नामु सप्रेम जगत अनयासा . भगत होहि मुदमंगलबासा ॥ २ ॥  
 राम एक तापस तिय तारी , नाम कोटि षळ कुमति सुधारी ॥ ३ ॥  
 रिषि हित राम सुकेतुसुताकी . सहित सेन सुत कीन्हि बिबाकी ॥ ४ ॥  
 सहित दोष दुष दास दुरास . दळइ नाम जिमि रवि निशि नासा ॥ ५ ॥  
 भंजेउ राम आपु भवचापू . भवसयमंजन नामप्रतापू ॥ ६ ॥  
 दंडक बन प्रभु कीन्ह सुहावन . जनमन अमित नाम किये पावन ॥ ७ ॥  
 निर्सिंहरनिकर दळे रघुनंदन . नामु सकलकलिकलुषनिकंदन ॥ ८ ॥  
 दोहा—सबरी गीध सुसेविकनि , सुगति दीन्हि रघुनाथ ।  
 नाम उधारे अमित षळ , वेदविदित गुणगाथ ॥ २४ ॥

|                                 |                                     |
|---------------------------------|-------------------------------------|
| राम सुकंठ । बभौषन दोऊ .         | राषे सरन जान सब कोऊ ॥ १ ॥           |
| नाम गरीब अनेक मेवाजे .          | लोक बेद बर बिरद बिराजे ॥ २ ॥        |
| राम भालुकापिकठकु बटोरा .        | सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥ ३ ॥   |
| नाम लेत भवार्थ सुषाहीं .        | करहु बिचार सुजन मन माहीं ॥ ४ ॥      |
| राम सकुल रम राबनु भारा .        | सीय सहित निज पुर पगु धारा ॥ ५ ॥     |
| राजा रामु अवध रजधानी .          | गावत गुन सर मुनि बर बानी ॥ ६ ॥      |
| सेवक सुमिरत नामु सप्रीती .      | बिनु श्रमु प्रबल मोह दलु जीती ॥ ७ ॥ |
| फिरत स्नेहमगन सुष अपने .        | नाम प्रसाद सोच नहि सपने ॥ ८ ॥       |
| दोहा—ब्रह्म राम ते नामु बड,     | बरदायक बरदानी ।                     |
| रामचरित सत कोटि महँ,            | लिये महेस जिय जानि ॥ २९ ॥           |
| नामप्रसाद संभु अबिनासी .        | साजु अमंगल मंगलरासी ॥ १ ॥           |
| सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी .    | नाम प्रसाद ब्रह्मसुष भोगी ॥ २ ॥     |
| नारद अनेउ नामप्रताप .           | जगप्रिय हरि हरिहराप्रिय आपू ॥ ३ ॥   |
| नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसाद .    | भगत सिरोमनि भे प्रह्लाद ॥ ४ ॥       |
| ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनाऊँ .     | पापेउ अचल अनूपम ठाऊँ ॥ ५ ॥          |
| सुमिरि पवनसुत पावन नाम .        | अपने बस करि राषे रामू ॥ ६ ॥         |
| अपरु अजाभिलु गजु गनिकाऊ .       | भये मुकुत हरिनामप्रभाड ॥ ७ ॥        |
| कहउं कहाँ लगि नामबडाई .         | रामु न सकहि नामगुन माई ॥ ८ ॥        |
| दोहा—नाम राम को कलपतरु,         | कलि कल्याननिवासु ।                  |
| जो सुमिरत भयो भांग ते,          | तुलसी तुलसीदासु ॥ २९ ॥              |
| चहु युग तीभि काल तिहुं लोका .   | भये नाम जापि जीव बिसोका ॥ १ ॥       |
| बेद पुरान संत मत एहू .          | सकलसुकृतफल रामसमेहू ॥ २ ॥           |
| ध्यानु प्रथम युग मष बिधि दूजे . | द्वापर परितोषत प्रभु पूजे ॥ ३ ॥     |
| कलि केवल मलमूल मलीना .          | पापपयोनिधि जनमन मीना ॥ ४ ॥          |
| नाम कामतरु काल कराला .          | सुमिरत समन सकल जगजाला ॥ ५ ॥         |
| रामनाम कलि अभिमतदाता .          | हित परलोक लोक पितु माता ॥ ६ ॥       |
| नहि कलि करम न भगतिबिबेक .       | रा मनामअवलंबन एकू ॥ ७ ॥             |
| कालमेमि कलि कपठनिधानू .         | नाम सुमति समरष हनुमानू ॥ ८ ॥        |

दोहा—राम नाम नरकेसरी, कनककासिपु कलिकाल ।

जापक जन प्रह्लाद जिमि, पालहि दलि सुरसाल ॥ २७ ॥

भाय कुभाय अनष आलस हूं . नाम जपत मंगल दिसि दस हूं ॥ १ ॥  
 सुभिरि सो नाम रामगुनगाथा . कर्गै नाइ रघुनाथहि माथा ॥ २ ॥  
 मोरि सुधारहि सो सब भांती . जासु कृपा नहि कृपा अघांती ॥ ३ ॥  
 राम सुस्वामि कुसेवकु मोमां . निज दिसि देखि दयानिधि पोसो ॥ ४ ॥  
 लोकहुं बेद सुसाहिव रीती . बिनय सुनत पहिचानत प्रीती ॥ ५ ॥  
 गनी गरीब ग्राम नर नागर . पंडित मूढ मलीन उजागर ॥ ६ ॥  
 सुकवि कुकवि निजमतिअनुहारी . नृपहि सराहत सब नर नारी ॥ ७ ॥  
 साधु सुज्ञान सुधील नृपाला . ईसअंसभव परम कृपाला ॥ ८ ॥  
 सुनि सनमानहिं सबहि सुबानी . भनिति भगति मति गति पहिचानी ॥ ९ ॥  
 यह प्राकृतमहिपालसुभाऊ . जानि सिरोमनि कोसल राऊ ॥ १० ॥  
 रीझत रामसनेह निसोतें . को जग मंद मलिन मति मो तें ॥ ११ ॥

दोहा—सठ सेवक की प्रीति रुचि, रषिहहि राम कृपालु ।

उपल किये जलजान जेहि, सधिव सुमति कापि भालु ॥

होंहु कहावत सबु कहत, राम सहत उपहास ।

साहिव सीतानाथ सो, सेवक तुलसीदास ॥ २८ ॥

अतिबडि मोरि डिठाई घोरी . सुनि अघ नरकहुं नाक संकोरी ॥ १ ॥  
 समुझि सहम मोहि अपडर अपने . सो सुधि राम कीन्हि नाहि संपने ॥ २ ॥  
 सुनि अबलोकि सुचित चष चाही . भगति मोरिमात स्वामि सराही ॥ ३ ॥  
 कहत नसाइ होइहि अतिनीकी . रीझत राम जानि जन जी की ॥ ४ ॥  
 रहति न प्रभुचित चूक किये की . करत सुरति सय बार दिए की ॥ ५ ॥  
 जेहि अघ बधेउ व्याध जिमि बाली . फिरि सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली ॥ ६ ॥  
 सोइ करतूति भिभीषन केरी . सपनेहु सो न राम हियं हेरी ॥ ७ ॥  
 ते भरतहि भेंटत सनमानें . राम सर्भा रघुबीर बषानें ॥ ८ ॥

दोहा—प्रभु तरुतर कपि डार पर, ते किये आपु समान ।

तुलसी कहूं न राम से, साहिव सीलनिधान ॥

राम निकाई राबरी, है सबही को नीक ।

जौ यह सांची दे सदा, तो नीका तुलसीक ॥

एहि बिधि निज गुन दोष कहि, सबहि बहुरि सिरु नाइ ।

बरनउं रघुवर बिसद जसु, सुनि कलिकलुष नसाइ ॥ २९ ॥

जागबलिक जो कथा सुहाई . भरद्वाज मुनिवरहि सुनाई ॥ १ ॥  
 कहिहौ सोइ संवाद बषानी . सुनहु सकल सज्जन सुपु मानी ॥ २ ॥  
 संभु कीन्ह यह चरित सुहावा . बहुरि कृपा करि डमहि सुनावा ॥ ३ ॥  
 सोइ सिव कागमुलुंडिहि दीन्हा . रामभगत अधिकारी चीन्हा ॥ ४ ॥  
 तोहि सन जागबलिक पुनि पावा . तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा ॥ ५ ॥  
 ते श्रोता बकता समसीला . सबदरसी जानहि हरिलीला ॥ ६ ॥  
 जानहि तीनि काल निज ज्ञाना . करतलगत आमलक समाना ॥ ७ ॥  
 औरौ जे हरि भगत सुजाना . कहाई सुनहि समझहि बिधि नाना ॥ ८ ॥

दोहा—मैं पुनि निज गुरु सन सुनौ, कथा सो सूकरषेत ।

समझौ नहि तमि बालपन, तब अति रहउ अचेत ॥

स्रोता बकता ज्ञाननिधि, कथा राम की गूढ ।

किमि समुझै यह जीव जड, कलिकलप्रसित विमूढ ॥ १० ॥

तदपि कही गुर बारहि बारा . समुझि परा कछु मति अनुसारा ॥ १ ॥  
 भाषावद्ध करवि मैं सोई . मोरे मन प्रबोध जेहि होई ॥ २ ॥  
 जस कछु बुधिबिबेकवल रेरे . तस कहिहौ हिय हरि के प्रेरे ॥ ३ ॥  
 निजसंदेहमोहभ्रमहरनी . करौ कथा भवसरितातरनी ॥ ४ ॥  
 बुधबिश्राम सकलजनरंजनि . रामकथा कलि कलुष विभंजनि ॥ ५ ॥  
 रामकथा कलि वनग भरनी . पुनि बिबेकपावक कहूँ अरनी ॥ ६ ॥  
 रामकथा कलि कामद गाई . सज्जन सजीवनमूरि सुहाई ॥ ७ ॥  
 सोइ बसुधातल सुधातरंगिनी . भयभंजनि भ्रमभेक भुंअगिनि ॥ ८ ॥  
 असुरसेन सम नरकानिकदिनि . नाधुबिबुधकुलहित गिरिनदिनि ॥ ९ ॥  
 संतसमाजपयोधि रमासी . बिस्वभार भर अचल लमासी ॥ १० ॥  
 जमंगन मुह मसि जग जमुनासी . जीवन मुकुति हेतु जनु कासी ॥ ११ ॥  
 रामहि प्रिय पावाने तुलसी सी . तुलसीदास दित हिय हुलसी सी ॥ १२ ॥  
 सिवप्रिय मेकलसैलसुता सी . सकलसिद्धिसुखसंपतिरासी ॥ १३ ॥

सदगुन सुरगन औब आदिंति सी . रघुवर भगति प्रेम परमिति सी ॥१४॥

देहा—रामकथा मंदाकिनि, चित्रकूट चित चारु ।

तुलसी सुभग सनेह बन, सिय रघुबीर बिहारु ॥ ३१ ॥

रामचरित चिंतामनि चारु . संतसुमतिंतिअ सुभग सिंगारु ॥ १ ॥

अगमंगल गुनग्राम राम के . दानि मुकुति धन धरम धाम के ॥ २ ॥

सदगुर ज्ञान विराग जोग के . विबुध वैद भव भीम रोग के ॥ ३ ॥

जननि जनक सिअरामपेम के . बाँज सकल व्रत धरम नेम के ॥ ४ ॥

समन पाप संताप सोक के . प्रिय पालक परलोक लोक के ॥ ५ ॥

सचिव सुभट भूपतिविचार के . कुंभज लोभ उदधि अपार के ॥ ६ ॥

कामकोह कलिमल करिगन के . केहरिसावक जनमनबन के ॥ ७ ॥

अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के . कामद धन दारिद दवारि के ॥ ८ ॥

मंत्रमहामनि विषयव्याल के . मेटत काठिन कुअंक भारु के ॥ ९ ॥

हरन मोहतम दिनकरकर से . सेवक सालि पाल जलधर से ॥ १० ॥

अभिमतदानि देवतरुवर से . सेवत सुलभ सुखद हरि हर से ॥ ११ ॥

सुकाबि सरदनभ मन उडगन से . रामभगत जन जीवनधन से ॥ १२ ॥

सकलसुकुनफल भूरि भोग से . जग हित निरुपाधि साधु लोग से ॥ १३ ॥

सेवकमनमानस मराल से . पावन गंग तरंगमाल से ॥ १४ ॥

देहा—कुपथ क्तरक कुचालि कलि, कपट दंभ पाषंड ।

दहन रामगुनग्राम जिमि, इंधन अनल प्रचंड ॥

रामचरित राकेसकर, सरिस सुषद सब काहु ।

सज्जन कुमुद चकोर चित, हित बिसेषि बड लाहु ॥३२॥

कीन्ह प्रश्न जेहि भांति भवानी . जेहि बिधि संकर कहा बपानी ॥ १ ॥

सो सब हेतु कहब मैं गाई . कथा प्रबंध विचित्र बनाई ॥ २ ॥

जेहि यह कथा सुनी नहि होई . जानि आचरज करै सुनि सोई ॥ ३ ॥

कथा अलौकिक सुनहि जे ज्ञानी . नहि आचरज करहि अस जानी ॥ ४ ॥

रामकथा के मिति जग नाही . असि प्रतीति तिन्ह के मन माही ॥ ५ ॥

माना भांति रामअवतारा . रासायन सत कोटि अपारा ॥ ६ ॥

कल्पभेद हरिचरित सुहाए . भांति अनेक मुनीसन्ह गाए ॥ ७ ॥

करिष्य न संसय अस डर आनी . सुनिष्य कथा सादर रीति मान्य ॥ ८ ॥  
 दोहा—राम अनंत अनंत गुन . अमित कथा विस्तार ।  
 सुनि आचर्यु न मानिहहि . जिन के विमल विचार ॥ ९ ॥  
 वेहि बिधि सब संसय करि दूरी . सिर धरि गुरपदपंकज धरि ॥ १० ॥  
 पुनि सबही दिनबौ कर जोरी . करत कथा जेहि लाग न थोरी ॥ ११ ॥  
 सादर सिवहि नाइ अब माथा . बरनौ बिसद रामगुनगाथा ॥ १२ ॥  
 संवत सोरह भै इकतीसा . करौ कथा हरिपद धरि सीसा ॥ १३ ॥  
 नौमी भीमबार मधुमासा . अवध पुरी यह चरित प्रकासा ॥ १४ ॥  
 जेहि दिन रामजन्म श्रुतिगावहि . तीरथ सकल तहाँ चलि आवहि ॥ १५ ॥  
 असुर नाग बग नर मुनि देवा . आइ करहि रघुनायकसेवा ॥ १६ ॥  
 जन्म महोत्सव रचहि सुजाना . करहि राम कल कीरतिगाना ॥ १७ ॥  
 दोहा—मज्जाहि सज्जन बृन्दबहु . पावन सरजू नीर ।  
 जपहि रामधरि ध्यानउर . सुंदर स्याम सरीर ॥ १८ ॥  
 दरस परस मज्जन अरुपाना . हरे पाप कह बेद पुराना ॥ १९ ॥  
 नदी पुनौत अमित महिमाअति . कहिन सकौ सारदा विमलमति ॥ २० ॥  
 राम धामदा पुरी सुहाबनि . लोकसमस्त बिदित जग पावनि ॥ २१ ॥  
 चोरी खाने जग जीव अपारा . अवध तजेतनु नहि संसारा ॥ २२ ॥  
 सब बिधि पुरी मनोहर जानी . सकल सिद्धिप्रद मंगलधानी ॥ २३ ॥  
 विमल कथा करकीन्ह अरंभा . सुनतनसाहि काम मद दंभा ॥ २४ ॥  
 रामचरित मानस एहि नामा . सुनत श्रवन पाइय विश्रामा ॥ २५ ॥  
 मनकरि बिषय अनलवन जरई . होइ सुषो जौ यहि सर परई ॥ २६ ॥  
 राचरित मानस मुनिभावन . बिरचेउ सभ सुहावन पावन ॥ २७ ॥  
 त्रिविध दोष दुषदारिद दावन . कलिकुचालिकालिकलुषनसावन ॥ २८ ॥  
 राखि महेश निज मानस राषा . पाइसुसमउ सिबासन भाषा ॥ २९ ॥  
 ताते राम रचित मानस बर . धरेउनाम हिअहेरि हरषिहर ॥ ३० ॥  
 कहीं कथा सोइ सुषद सुहाई . सादर सुनहु सुजन मनलाई ॥ ३१ ॥  
 दोहा—जस मौन जेहि बिधि भयेउ, जग प्रचार जेहि हेतु ।  
 अब सोइ कहीं प्रसंग सब, सुमिरि उमा बृषकेतु ॥ ३२ ॥



|                               |                                   |
|-------------------------------|-----------------------------------|
| संभुप्रसाद सुमति द्विअंहलसी . | रामचरित मामस कवितुलसी . ॥ १ ॥     |
| करइ मनोहर मति अनुहारी .       | सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी ॥ २ ॥ |
| सुमति भूमि थल हृदय अगाध .     | बेद पुरान उदधि घन साधू ॥ ३ ॥      |
| बरषहि राम सुजम बर बारी .      | मधुर मनोहर मंगल कारी ॥ ४ ॥        |
| लौलासगुन जो कहहि बपानी .      | सोइ स्वच्छता करै मल हानी ॥ ५ ॥    |
| प्रेम भगति जो बरनि न जाई .    | सोइ मधुरता सुसीतलताई ॥ ६ ॥        |
| सो जल सुकृत सालि हित होई .    | रामभगत जन जीवन सोई ॥ ७ ॥          |
| मेधा महिगत मो जल पावन .       | सकिलि श्रवन मग चलेउ मुहावन ॥ ८ ॥  |
| भेउ सुमानस सुथल थिराना .      | सुपद सीत रुचि चारु चिराना ॥ ९ ॥   |
| दोहा—सुटि सुंदर संवाद बर,     | बिरचे बुद्धि बिचारि ।             |
| तेइ एहि पावन सुभग सर,         | घाट मनोहर चारि ॥ १६ ॥             |
| सप्त प्रबंध सुभग सोपाना .     | ज्ञान नयन निरपत मन माना ॥ १ ॥     |
| रघुपति महिमा अगुन अबाधा .     | बरनव सोइ बर बारि अगाधा ॥ २ ॥      |
| रामसीअ जस सलिल सुभासम .       | उपमा ब्रीच बिलास मनोरम ॥ ३ ॥      |
| पुद्गनि सघन चारु चौपाई .      | जुगुनि मंजु मनि सीप सुहाई ॥ ४ ॥   |
| छंद सोरठा सुंदर दोहा .        | सोइ बहुरंग कमल कुल सोहा ॥ ५ ॥     |
| अरथ अनूप सुभाव सुभासा .       | सोइ पराग मकरंद सुवासा ॥ ६ ॥       |
| सुकृत पुंज मंजुल अलिमाला .    | ज्ञान बिराग बिचार मराला ॥ ७ ॥     |
| धुनि अबरेव कवित मुन जाती .    | मीन मनोहर ते बहु भांती ॥ ८ ॥      |
| अरथ धरम कामादिक चारी .        | कहव ज्ञान विज्ञान बिचारी ॥ ९ ॥    |
| नब रस जप तप जोग बिरागा .      | ते सब जलचर चारु तडागा ॥ १० ॥      |
| सुकृती साधु नाम गुन गाना .    | ते बिचित्र जल बिहग समाना ॥ ११ ॥   |
| संत सभा चहु दिसि अंबराई .     | खड़ा रितु बसंत सम गाई ॥ १२ ॥      |
| भगति निरूपन विविध विधाना .    | छमा दया दम लता बिताना ॥ १३ ॥      |
| समजम नियम फूल फल ज्ञाना .     | हरिपद रस बर बेद बखाना ॥ १४ ॥      |
| औरी कथा अनेक प्रसंगा .        | तेइ सुकपिक बहुबरन बिहंगा ॥ १५ ॥   |
| दोहा—पुलक बाटिका बाग बन,      | सुप सुबिहंग बिहाक ।               |
| माला सुमन सनेह जल,            | सींचत लोचन चारु ॥ ३७ ॥            |

जे गावहि यह चरित संमारे . तेइ येहि ताल चतुर रषवारे ॥ १ ॥  
 सदा सुनहि सादर नर नारी . तेइ सुरवर मानस अधिकारी ॥ २ ॥  
 अति थल जे बिपई बग कांगा . एहि सरनिकट न जाहि अभागा ॥ ३ ॥  
 संयुक्त भेक सेवार समाना . इहां न बिषय कथा रस नाना ॥ ४ ॥  
 तेहि कारन आवत हिअ हारे . कामी काक बलाक विचारे ॥ ५ ॥  
 आवत एहि सर अति काठिनाई . रामकृपा विनु आइ न जाई ॥ ६ ॥  
 काठिन कुसंग कुपंथ कराला . निन्हके बचन बाध हरि व्याला ॥ ७ ॥  
 गृहकारज नाना जंजाला . तेइ अतिदुर्गम सैल विसाला ॥ ८ ॥  
 बन बहु बिषय मोइ मद माना . नदी कृतर्क भयंकर माना ॥ ९ ॥  
 दोहा—जे ग्रंथा संबल रहित, नहि संतन्ह कर साथ ।

तिन कहु मानम अगम अति, जिनहि न प्रिय रघुनाथ ॥ ३८ ॥  
 जो करि कष्ट जाइ पुनि कोई . जातहि नीट जुडाई होई ॥ १ ॥  
 जडता जाड बिषम उर लागा . गएहु न मज्जन पाव अभागा ॥ २ ॥  
 करि न जाई सर मज्जन पाना . फिरि आवै मगेत अमिमामा ॥ ३ ॥  
 जो बहोरि कोउ पुछन आवा . सरनिदा करि ताहि बुझावा ॥ ४ ॥  
 सकल विघ्न व्यापहि नहि तेही . राम सुकृपा बिलोकादि जेही ॥ ५ ॥  
 सोइ सादर सर मज्जनुं कारई . महाघोर त्रयताप न जरई ॥ ६ ॥  
 ते नर यह सर तजहि न काऊ . जिन्ह के रामचरन भल भाऊ ॥ ७ ॥  
 जो नहाई चह एहि सर भोई . सां सतसंग करौ मन लाई ॥ ८ ॥  
 अस मानस मानन खप चाही . भइ कथि बुद्धि विमल अबगाही ॥ ९ ॥  
 भयेउ हृदय आनंद उछाहू . उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रवाहू ॥ १० ॥  
 चली सुभग कविता सरिता सो . राम विमल जस जल भरिता सो ॥ ११ ॥  
 सरजू नाम सुमंगलमूला . लोकबेदमत मंजुल कूला ॥ १२ ॥  
 नदी पुनोत सुमानस नंदिनि . कलिमलत्रिनतरुमूलनिकांक्षिनि ॥ १३ ॥  
 दोहा—श्रोता श्रिविध समाज पुर,  
 संतसभा अनुपम अवध,  
 रामभगति सुरसैरितहि जाई . मिळी सुकीरति संस्तु सुहाई ॥ १ ॥  
 सानुज रामसमरसु पावन . मिळेउ महानदु सोन सुहावन ॥ २ ॥

जुग बिच भगति देवधुनिधारा . सोहति सहित सखिरति बिचारा ॥ १ ॥  
 त्रिविधतापत्रासक निमुहानी . रामसरूप सिंधु समुहानी ॥ ४ ॥  
 मानस मूल मिली सुरसरिही . सुनत सुजनमन पावन करही ॥ ९ ॥  
 बिच बिच कथा बिचित्र बिभागा . जनु सरिसीर तीरिबनु बागा ॥ १६ ॥  
 उमामहेशबिबाह बराती . ते जलचर अगनित बहु भाती ॥ २७ ॥  
 रघुवरजनम अनंद बधाई . भवर तरंग मनोहरताई ॥ ८ ॥

दोहा—बालचरित चंदु बंधु के, बनज बिपुल बहुरंग ।

मृप रानी परिजन सुकृत, मधुकर बारिबिहंग ॥ ४० ॥  
 सियस्वयंवर कथा सुहाई . मरित सुहायनि सो छवि छाई ॥ १ ॥  
 नदी नाव पटु प्रश्न अनेका . केबट कुसल उतर सविधेका ॥ २ ॥  
 सुनि अनुकथन परस्पर होई . पथिकसमाज सोह सरि सोई ॥ ३ ॥  
 घोर धार भृगुनाथ रिसानी . घाट सुखद राम बर बानी ॥ ४ ॥  
 मानुजरामबिवाहउछाह . सो सुभ उमग सुपद सब काह ॥ २ ॥  
 कहत सुनत हरषहि पुलकाही . ते सुकृती मन मुदित नहाही ॥ ६ ॥  
 रामतिरुक्क हित मंगलसाजा . परब जोग जनु जुरे समाजा ॥ ७ ॥  
 काई कुमति केकई केरी . परी नासु फल बिपाति बनेरी ॥ ८ ॥

दोहा—समन अमित उत्पात सब, भरतचरित जपजाग ।

कालिअघ षलअवगुन कथन, ते जलमल बग काग ॥ ४१ ॥  
 कीरति सरित छई ऋतु ली . समय सुहावानी पावनि मूरी ॥ ९ ॥  
 हिम हिमसैलसुता सित्रव्याह . सिसिर सुखद प्रभुजनमउछाह ॥ ६ ॥  
 बरनव रामाबिवाहसमाज . सो मुदमंगलमय रितुराज ॥ ३ ॥  
 प्रीषम दुसह रामबनगमन . पथ कथा पर आतप पवन ॥ ४ ॥  
 बरषा घोर निसाचररारी . सुरकुल सालि सुमंगलकारी ॥ ९ ॥  
 राम राजसुख बिनय बडाई . बिसद सुखद सोई सरद सुहाई ॥ ६ ॥  
 सतीसिरोमनि सियगुनगाथा . सोइ गुनअमल अनूपम पाथा ॥ ७ ॥  
 भरतसुभाउ सुसीतलताई . सदा एकरस बरनि न जाई ॥ ८ ॥

दोहा—धवलकानि बोलनि मिलनि, प्रीति परस्परहीरी ।

भायप भलि चंदु बंधु की, जल माधुरी सुवास ॥ ४२ ॥

आराति बिमल दीवता मोरी . लघुता ललित सुवारि न पोरी ॥ १ ॥  
 भदभूत मल्लि सुनत सुषकारी . आम पिआस मनोमलहारी ॥ २ ॥  
 राम सुप्रेमहि तोषक पावी . हरत सकल कलिकलुष गलानी ॥ ३ ॥  
 भोः स्वम क्षोषक तोषक तोषा . समन दुरित दुष दारिद दोषा ॥ ४ ॥  
 काम क्रोध मद मोह नस्यवन . बिमल बिबेक बिराग बढायन ॥ ५ ॥  
 सादर मंजव पान किये ते . मिटहि पाप परिताप हिए ते ॥ ६ ॥  
 जेन्ह येहि बारि न मानस धोए . ते कायर कलिकाल बिगोए ॥ ७ ॥  
 त्रिषित निरपि राधिकर भव बारी . फिरिहहि मृग जिमि जीव दुखारी ॥ ८ ॥

दोहा—मति अनुहारि सुवारि गुन, गन गनि मन अन्हवाइ ।

सुमिरि भवानी संकरदि, कह कबि कथा सुहाइ ॥ ४३ ॥

## श्रीयुत ग्वाल कवि कृत कविता ।

बिधि क्री बनावट को देखिये तमासो यह फेरते कृपा के अन्न निखरा औ सखरा ।  
 ऐमेई जगत बीच रचना रची है देखो मुखकर पग अंग अंगन के बखरा ॥  
 ग्वाल कवि सुन्दर सभो हैं अरु हैं न कोउ रीतिही बिसेप यह सांचे कहे अखरा ।  
 एक नूर आदमी हजार नूर कपड़ा है लाख नूर गहना करोड़ नूर नखरा ॥ १ ॥  
 एक चित द्वैकर कबित्त करै कबितिन्है केतक सुनैया कहैं याहि कौन लीखै हैं ।  
 आगे के सुनैया रिझवैया औ दिवैया दान रहेना धरा पे याते मौन मति सीखै हैं ।  
 ग्वाल कवि गुन धनि व्यंग्य रस लच्छना जे सज्जन को ईपै औ असज्जन को बीखै है ॥  
 दावादार दोणले दुसह दुरजन जिन्हें दूषनही दीखै ज्यों उलूकै रैन दिखै हैं ॥ २ ॥  
 चाहिये जरूर इनसानियत मानुष को नौबत बजे पै फेर भेर बजनो कहा ।  
 जात औ अजात कहा हिंदू औ मुसलमान जातेकियोनेह फेरताते भजनो कहा ॥  
 ग्वाल कवि जाके लिए सीस पै बुराई लई लाजहू गंवाई कहो फेर लजनो कहा ।  
 या तो रंग काहूके न रंगिये सुजान प्यारे रंगोसो रंगेई रहे फेर तजनो कहा ॥ ३ ॥  
 जाकी खूब खूबी खूब खूबन के खूबी यहां ताकी खूब खूबी खूब खूबी नभ गाहना ।  
 जाकी बदजानी बदजाती यहां पांचन में ताकी बदजाती-बदजाती ह्वांउराहना ॥  
 ग्वाल कवि येई परसिद्ध सिद्ध रहै परसिद्ध बही ताकी है यहां वहां सराहना ।  
 जाकी यहांचाहना है ताकी वहांचाहना है जाकी यहांचाहना है ताकी वहांचाहना ॥ ४ ॥

## सुंदरीलिलक ।

सवैया ।

छहरैं सिर पैं छवि मोरपखा उन की नय के मुक-  
ता थहरैं । फहरैं पियरो पट बेनी इतै उनकी  
चुनरी के झवा झहरैं ॥ रसरंग भिरे अभिरे हैं  
तमाल दोऊ रस ख्याल चहैं लहरैं । नित ऐसे  
सनेह सों राधिका स्याम हमारे हिये में सदां  
ठहरैं ॥ १ ॥

सराहैं सुरासुर सिद्ध समाज जिन्है लखि  
लाजत हैं रति मार । महा मुद मंगल संग लसैं  
बिलसैं भव भार निवारन वार ॥ बिराजैं त्रिलोक  
निकाई के ओक सुदेव मनो भव रूप अपार ।  
सदां दुलही शृषभानुसुता दिन दूलह श्रीब्रजराज-  
कुमार ॥ २ ॥

बाल कुटी कर कामरिया हित राज तिहुँपुर की  
तजि डारों । आठहूँ सिद्धि नवी निधि के मुख  
नंद की गाय चराय बिसारों ॥ रसखान कबै इस  
नैनन तैं ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारों ।  
कोटिन हूँ कलधौत के धाम करील के कुंज न  
ऊपर धारों ॥ ३ ॥

बिहसै दुति दामिनि सी दरसै तन जोती  
जुन्हाई उईसी परै । लखि पायन की अरुनाई  
अनूप ललाई जपा की जुईसी परै । निखरै सी  
निकाई निहारें नई रति रूप लुभाई तुई सी परै ।  
सुकुमारता मंजु मनोहरता मुख चारुता चारु  
चुईसी परै ॥ ४ ॥

बिद्रुम और बैंधूक जपा गुललाला गुलाब की  
आभा लजावति । देव जू कंज खिले टटके हटके  
भटके खटके गिरा गावति ॥ पावैं धरै अलि ठोर  
जहाँ तेहि ओरतें रंग की धारसी धावति । मानो  
मजीठ की माठ दुरी एक ओरतें चादनी बोरति  
आवती ॥ ५ ॥

राधिका कान्ह विरंचि रची सब लोकन की  
सुखमा सब लै लै ॥ अंग के रंगन के ढिग जात  
है जात है संभु सबे रंग मैलै ॥ लालन सों पर-  
बालन सों बैंधी लालन जानिपरै वहि गैलै ।  
पावैंधरै जितहीं वह बाल तँही रँग लाल गुलाल  
सो फैलै ॥ ६ ॥

कौहर कौल जपा दल बिद्रुम का इतनी  
जो बैंधूक मे कोति है । रोचन रोरी रची मेहदी  
नृपसंभु कहैं मंकता सम पोति है ॥ पाय धरै

ठरे ईश्वर सो तिम मे मनि पायल की घनी जोति  
है। हाथ द्वे तीन लों चारिहु ओरतें चौदनी चूतरी  
के रंग होति है ॥ ७ ॥

पाँइ तिहारेन कों गिरिधारी लगाय के ध्यान  
करें बहु जापन । तापर जीव कलावति की छवि  
तावती हो नहीं मानो सिखापन ॥ आंगन मे  
चलती जब राधे भनै नृप संभु हरै तन तापन ।  
है घरी द्वेक लों आभा रहे मनो छिट रंगी है  
मजीठ के छापन ॥ ८ ॥

संकीर्ण ।

जाहिरै जागति सी जमुना जब बूढ़े बहे उम-  
है वह बेनी । ल्यों पदमाकर हीर के हारन गंग  
तरंगन की सुख देनी ॥ पायन के रंग सों रंग-  
जाति सी भाँति हीं भाँति सरस्वती सेनी । परै  
जहाँई जहाँ वह बाल तहाँ तहाँ ताल मे होत  
त्रिबेनी ॥ ९ ॥

मानुष हों तो वैंहीं रसखान बसों मिलि गोकुल  
गांव के ग्वारन । जौ पसु हों तो कहा बंस मेरी  
धरौ नित नंद की धेनु मझारन ॥ पाहन हों तो  
वही गिरि की जी किओ ब्रज छत्र पुरंदर धारन ।

जो खग हों तो वसेरो करों वहि कालिंदी कूल  
कदंब की डारन ॥ १० ॥

चालि सो आई नई दुलही लखिवे कों सबे  
कोऊ चाव बढावति । सूही सजी सिर सारी जबे  
तन नाइन आपने हाथ ओढावति ॥ भीतर भौन  
तें बाहिर लौं द्विजदेव जुन्होई की धार सी धावति ।  
साँझ समै ससि की सी कला उदयाचल तें मनो  
घेरति आवति ॥ ११ ॥

लखि सासुहि हास छपाये रहै ननदी लखि  
ज्यौ उपजावत भीत हि । सौतिन सों सतरोत  
चितौति जेठानिन सों निज ठानति प्रीतहि ॥  
दासिनहूँ सों उदास न देव बढावति प्यारे सों  
प्रीति प्रतीतहि । धायें सों पूछति बातें बिनै की  
सखीन सों सीखै सुहाग की रीतहि ॥ १२ ॥

निज चाल सों और जे बाल तिन्है कुल की  
कुलफानि सिखावति हैं । ननदी ओ जेठानी हसाँ-  
बें तऊ हँसी ओठनहीं लौं बितावती हैं ॥ हनु-  
मान न नेकौ निहारें कहूँ दृग नचि किये सुख  
प्रावसी हैं । बडभागिनी पिके सुहाग भरीं कबों  
आंगन हूँ लैं न आवती हैं ॥ १३ ॥



जानै न बोल कुबोल भट्ट चित छानै सदा  
पति प्रीति सुहाई । केतो करै उपचार सखी संत-  
राय न नाह पै भोंह चढाई ॥ क्यों नहि होय सुमेर  
हरी हरि के हिय आनद की अधिकाई । जाहि  
बिलोकतहीं पुर की तिय सीख गई पिय की  
सिवकाई ॥ १४ ॥

रसिक विनोद ।

नित सासु के सासन ही में रहै ननदीन  
सों प्रीति बढ़ावती हैं । सदा मूँदि झरोखे किवा-  
रन दै निसिबासर बैठि बितावती हैं ॥ कहूं आरसी  
ले जों सिंगार करें प्रतिबिम्ब तैं दीठ दुरावती  
हैं ॥ बड़भाग सुहागभरी मुखचन्द चकोरनहूं सों  
चुरावती हैं ॥ १ ॥

विष्णुपद जुवराज विनय ।

प्रभु में सब पतितन को राजा । सभ पति-  
तन की नीति रीति लिखि करत राज को साजा ॥  
मंत्री लोभ काम किङ्कर मन सभ विपरीति  
समाजा । सेनापति मति मन्द ह्वन्दरत कोह अछोह

बिराजा ॥ उधरत जात विवेक नगर अविवेक  
बसावत खेरो । तब हों धाइ पुकारत आरत सरन  
गह्यो प्रभु तेरो ॥ राजसज कुल तिलक मुकुट  
मनि राम राज महाराजा । अबिनैब्यसन बिचारि  
जानि जिय करहु प्रेम जुबराजा ॥ १ ॥

प्रभु में सब पतितन में नामी । अबिवेकी  
आलसी मन्द मति कुटिल कुगति खल कामी ॥  
क्रोध बिवस बिषया रस लंपट करन बिषै अनु-  
गामी । कहं लौं कहौं कुचालि कृपानिधि तुम सभ  
अन्तर जामी ॥ दीनबंधु सुनि अधम उधारन  
कीरति ललित ललामी । अब आयो में सरन  
जानि जिय कीजै किङ्कर धामी ॥ देह गेह को नेह  
छाड़िके चाहत करन गुलामी । यह बिनती जुव-  
राज निलज की सुनिए श्रीपति स्वामी ॥ २ ॥

प्रभु में सब पतितन को नायक । लायक  
कर्म सकल जग के तजि करत अकर्म अलायक ॥  
अबलौं करि अबिवेक बनिज बहु जेहं तहं मूर  
गंवायो । समुझि बिचारि हारि हिय लजित भजि  
सरनागत आयो ॥ लादन चाहत रामरस रांडो  
जो प्रभु सासन पाऊं । और सकल व्यापार

बनिज तजि लै जहं तहं पहुँचाऊ ॥ तुम प्रभु  
सभ लायके अपने कर कृपापत्र लिखी दीजे ।  
जाते सुबस लदेंयै ठांडो मूर व्याज नहि छीजे ॥  
सौदा सुलभ नफे को नीको गुन दायक सबही  
को । तब लायौ जुबराज रामरस जाहि बिना सभ  
फीको ॥ ३ ॥

प्रभु मै सभ पतितन को चोर । सभ पातक  
की रासि चोरायो तबलों द्वै गयो भोर ॥ दसन  
नयन कर धरन श्रवन मिलि रसना जुत सभ  
साथी ॥ पल्लव त्वचा झारि कर भागे पहिले परम  
प्रमाथी । निज बासना बरारिन दृढ़ करि टांगि  
दियो करि नागो ॥ उलटो नाथ रुधिर करदम में  
रह्यौ मास दस टांगो । तब प्रभु कृपा पवन प्रेरित  
इत नीति निपुन सुनि धायो ॥ आरत प्रभु हि  
पुकारत सभ तजि सरन सरन तकि आयो । बर  
तन रतन जतन को बागो मोहि नांगो लखि दीनों ।  
कृपासिंधु जुबराज पतित को दास आपनो कीनो ॥४॥

बुद्धि बिहंगिनि मन बिहंग सो बार बार समु-  
झावे । सुनि पिय चरन कमल मानस तजि विषय  
झोल नहि भावे ॥ कर्म कीचे तै पख मालिन

मैं नित प्रति कृपा सतावै । कृसित बदन रसना  
 रस सूखी अब मुख बचन न आवै ॥ उडिचलु  
 अजहु चरन मानस ढिग सुखमवास श्रुति गावै ।  
 चलि चखु नाम त्रिमल मुकुताफल प्रेम अमल जल  
 न्हावै ॥ उडत सचान काल सिर ऊपर जनि कहु  
 तोहि गहि खावै । ऐसिहु दसा बिचारि हारि हिय  
 अजहुं बिराग न आवै ॥ यहि सर बहु हरि विमुख  
 भेक बक नित प्रति सोर मचावै । जन जुवराज  
 दयाल दया बिनु को हां लगि पहुंचावै ॥ ५ ।  
 दोहा—आनन्दित श्रीयुत रहो, निसि दिन जोति अमन्द ।  
 हरिभ्यन्द्र जुत चन्द्रिका, निज कुल कैरव चन्द ॥ १ ॥

कवितावली ।

बनाचरी ।

जननी समान जिन्ह जानि है पराई नारि  
 पर अपवाद पर वित्त सो न रति है । सत्य प्रिय  
 भाषी साधु संग अभिलार्थी सदा विप्र पद प्रीति  
 नीच संगति विरति है ॥ संपति बिपति मध्य  
 एकरस रहै सुधी सबही सुखद हरिहर की भग-  
 ति है । बदति गुलामसम भरत प्रबोधे राम  
 लोक मो सुजस परलोक हू सुगति है ॥ १ ॥

दीन पर दया औ समान सन मैत्री करें  
 गुरजन देखि कै बिसेषि सुखपावहीं । खलतें उदास  
 भाववर्त्तमान बतैं सदा भावी भूतभब्य को न सोच  
 उर ल्यावहीं ॥ देव द्विज भक्ति वेद बिद्या को  
 बिबेक जिन्है मानमद हीन कै गोविन्द गुन गावहीं ।  
 बदति गुलामराम भरत प्रबोधे राम ऐसे साधु  
 सज्जन सुजान मोहि भावहीं ॥ २ ॥

### उर्दू की कविता ।

देखा उस रोज दिल सोज़ गोश पेच बांधि  
 सुरुख लपेटा सिर फेंटा खुला खूब था । पेन्हे कोर  
 दार आहू चश्म खुमारी भरे तोषनिधि प्यारा  
 कज अबरू अजूब था ॥ गरे बनमाला हंस  
 मुख पै दुशाला पड़ा गड़ा जी ज़रद दुपट्टा रंग  
 डूब था । जज़ब हुआ दिल अजब गज़ब से लखा  
 कुंजन में सांवरा सलोना महबूब था ॥ १ ॥

तअसुफ तअजुब तगाफुल करनहारा देख  
 केज़माना पशेमाना मजज़ूब था । संदली शहानी  
 सजे पोशिश सुमेर सिंह आशिफ़ कृतल करने का  
 मतलूब था ॥ कोई मरा मरैगा मरन लगा कोई

ऐसा देखा मैं तमाशा आफताब मगरूब था ।  
अजब अंदाज़ नाज़ ग़मज़ से भरा वही शाहज़ादा  
नंद का गोविन्द महबूब था ॥ २ ॥

## भाषा का लाभ ।

( गोल्डस्मिथ की लेखों से )

प्रायः जोय जो भाषा के लाभ पर कोई विषय लिखना चाहते हैं पड़ने यों चारभ करतें हैं, " भाषा मनुष्य को इस लिये दी गई है कि वह अपना प्रयोजन और आवश्यकता को प्रकट करे जिस में उस को श्रेष्ठों के भोग उसे पूरा कर सकें । जो कुछ हम चाहते हैं या जिस वस्तु को इच्छा करते हैं उस के जताने या प्राप्त करने के लिये हम अपने इच्छा को शब्द का वस्त्र पहनाते हैं तो इस से सिद्ध है कि मुख्य काम भाषा का यह है कि हमारी इच्छाओं को प्रकट करे जिस में वह तुरंत पूरा हो जाय । मेरो जाने ऐसी युक्ति निरे पंडिता और मौखवियों के सन्तोष के लिये पूरा हो तो हो परन्तु जिन लोगों ने काल को देखा है उन का विचार दूसरा हो है । उन का कथन है और मेरो राय में यह थोड़ी बहुत बुद्धि के अनुसार भी है कि जो मनुष्य अपनी आवश्यकता और इच्छाओं को उत्तम प्रकार से छिपाना जानता है उसी की आवश्यकता बहुत शीघ्र दूर हो जाती है और बोली का मुख्य काम इतना हमारी आवश्यकता को प्रकट करना नहीं है जितना कि उस को छिपाना ।

जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि प्रायः मनुष्य किस प्रकार से मनुष्य के साथ वर्त्तता है तो यही देखने में आता है कि जिन लोगों को देखने में किसी वस्तु की कुछ भी आवश्यकता नहीं होती उन्हीं के पक्ष में वह अधिकतर पड़ती है । सब तो यों है कि धन में कुछ ऐसी शक्ति है कि बड़ा ढेर छोटे ढेर से बढ़ता है और दरिद्र मनुष्य को उस के बढ़ाने में वैसे ही प्रसन्नता होती है जैसी कि उस के कंजूस स्वामी को अपना धन की उन्नति देख कर । परन्तु इस में कोई बात नियम के बिबद्ध भी नहीं प्रतीत होती क्योंकि इकोम सेनेका ने स्वयं इस बात को नियत रखा है सीगात सदा उस मनुष्य को

अवस्थानुसार होनी चाहिये जिस की दियो जाये। अतः धनवान की बड़ी बड़ी भेंट दी जाती है और स्वीकार करने पर उन का धन्यवाद दिया जाता है, मध्यम श्रेणी के लोगों को उस से कुछ घट कर मिलता है, पर भिन्नमंगी को जिस के सापेक्ष होने में किसी को खन्देह नहीं यदि सइसी बार धिधियाने और मांगने पर एक पैसा मिलता तो मानों बहुत कुछ मिलता।

जिस किसी ने संसार की स्थिति देखी होगी और जीवन के शोतोष्ण का अनुभव किया होगा उसे प्रायः इस सिद्धान्त को मचाई का अनुभव हुआ होगा और वह भली भाँति जानकार होगा कि अधिक धन प्राप्त करने के दो ही उपाय हैं अर्थात् या तो मनुष्य सचमुच धन रखता हो या लोगों को उस का भ्रम बना हो। कितनी बार देखने में आया है कि किसी मनुष्य को सैकड़ों मनुष्य ऋण देने पर उपस्थित होते हैं जब कि उस को इस की कोई आवश्यकता नहीं होती। यदि कोई अपने मित्र से सइस सुद्रा ऋण मंगी तो सम्भव है कि अधिक मांगने के कारण से दो सौ रुपये उसकी मित्र जाय परन्तु यदि वह धिधिया कर के बहुत थोड़े से ऋण की प्रार्थना करे तो मेरो जाने इस बात का अधिक संभव है कि कोई उस का विश्वास दो पैसे का भी न करे। मैं एक मनुष्य को जानता हूँ जो यदि कभी अपने किसी मित्र से दस रुपये लेना चाहता तो ऐसी भूमिका बाँधता कि मानो उस को दो सौ रुपये चाहिए और बड़ी रकमों का इस धड़के के साथ वर्णन करता जिस से कभी किसी को ध्यान भी न होता कि उसे थोड़े की आवश्यकता है। वही महाशय जब कभी दर्जी से कोई कपड़ा उधार बनवाना चाहते थे तो साथ लैस टंका हुआ अच्छा जोड़ा पहन कर उस से लेन देन की बात चोत करते थे क्योंकि उन्होंने अनुभव से यह बात मालूम कर ली थी कि जब कभी किसी ऐसे अवसरों पर वह साधारण सादा वस्त्र पहन कर जाते थे तो दर्जी उन का विश्वास नहीं करता था और कोई न कोई बहाना कर के टाल देता था।

अपनी बाँच्छा प्रकट करने की इस के सिवा कोई आवश्यकता मालूम नहीं होती कि दूसरे मनुष्य के चित्त में दया उत्पन्न हो और इस द्वारा अपना मनोरथ पूरा हो जावे परन्तु पहिले इस के कि कंगाल ऐसी अवस्था में अपने चित्त का भेद कहे वह सोच ले कि वह उस मनुष्य की आगी जिस से मांगना चाहता है अपनी योग्यता खोनी और उस की मित्रता दया के साथ बदकना उचित समझता है या नहीं। मनुष्य की स्वभाव में से दया और मित्रता दो ऐसे

रह है' जो कभी एक दूसरे से मेल नहीं खाते और यह बात असम्भव है कि दोनों एक साथ किसी के चित्त में थोड़ी देर तक भी बिना एक दूसरे को जानि पहुँचाए ठहर सकें। मित्रता प्रतिष्ठा और प्रसन्नता बनी है और दया खेद और घृणा से। सम्भव है कि कुछ देर तक चित्त दोनों के बीच में टंगा रहे परन्तु किसी ज्ञान में वह दोनों को एक साथ एकठा नहीं कर सकता।

जो कुछ मैं ने ऊपर कहा है उस से मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि मनुष्य का चित्त दया रहित है। संसार में कदाचित् कोई मनुष्य ऐसा होगा जिस में यह रुचि कर नम्रता थोड़ी बहुत न पाई जाती हो पर यह थोड़ी हो सो देर तक स्थित रहती है और इस में निर्धनियों को कुछ ऐसी ही वैसी सहायता मिलती है। प्रायः कोई २ लोगों में यह आवेश अपना पहना प्रभाव उत्पन्न करने के समय से लेकर जीव में हाथ डालने के समय पर्यंत कठिनता से स्थिर रहता है, कुछ मनुष्यों में इस के दूने काल तक ठहरता है, और बहुत कम मनुष्यों में जिन को चित्त लज्जि ही अत्यन्त मृदु है आध घंटे तक रह सकता है। परन्तु यद्यपि यह कितनी ही देर तक बना रहे इस का फल केवल भोख देने का सा होता है और जहाँ हम इस विचार से एक पैसा खर्च करते हैं वहाँ दूसरे विचारों से रुपयों की नीबत पहुँचती। माना कि यदि कोई मनुष्य किसी बड़ी आपत्ति में फँसजाता है तो उसे देख कर हमें बहुत ही दया आती है पर जब वही मनुष्य फिर दूसरी बार हमारे आगे हाथ फेकाता है तो पहले को अपेक्षा उस पर कुछ कम दया आती है और इसी भाँति गुस्से की प्रतिध्वनि की भाँति हर बार उस का बल घटता जाता है यहाँ तक कि अन्त में हमारे चित्त पर खेद का चिह्न तक नहीं रहता और दया घृणा के साथ बदल जाती है।

मेरी आंख की देखी बात है कि एक मनुष्य जाक सिंडल नामी मेरी जान पहचानवालों में थे जिन की सम्पन्नता के समय में प्रायः लोग जो बनी थे उन्हें कृप देने को और जिनके पास लड़कियाँ थीं दामादी में लेने को प्रस्तुत थे परन्तु जब उन पर विपत्ति आई तो कोई मनुष्य उन की ओर आंख उठा कर न देखता था। अतः मैं उन लोगों को जो दरिद्र हैं वह सम्मति देता हूँ कि अपना आवश्यकता को किसी पर प्रकट न होने दें और दया के सिवाय किसी और उपाय से अपना पूर्ण मनोरथ होने का यत्न करें। जो अभिप्राय किसी को चंग पर चढ़ा देने या उस के जी में स्वार्थ वा लृणा के विचार उत्पन्न



करने से निकलता है बड़दया से कदापि सम्भव नहीं। निर्धन की मीठी बात भी कड़ुगी जान पड़ती है और जोँटोड़ने 'सुशूबा की बात' भारभ की साथ ही यह मन में आता है कि अन्त में वह मनुष्य कुछ न कुछ माँगीगा।

अतः यदि तुम को यह स्वीकार हो कि दारिद्र्य के चंगुल से दूर रहो तो तुम को चाहिये कि उस से अपरिचित बन जाव तभी वह तुम्हारा कुछ ध्यान करेगा। यदि कोई मनुष्य तुम को जी की रोटी और साग खाते हुए देख ले तो उस से कहो कि यह खाना पहेँजी है फलाने हकीम ने (किसी नामी हकीम का नाम लेकर) मुझे इस के खाने की आज्ञा की है। उसी के साथ संकेत में यह भी कह दो कि मैं उन लोगों में नहीं जो पेट की पूजा की अच्छा समझते हैं। यदि तुम सामर्थ्य न रखने के बावस जाड़े में भिरभिर कपड़े पहने हो तो लोगों से आप ही जता दो कि वैसे कपड़े सखनऊ में प्रायः व्यसनी पहनते हैं या यदि उस में इतने पैबन्द लगे हों जिन्हें तुम छुटने या किसी बख बैठने से छिपा न सकते हो तो यों कहो कि मुझे और फलाने मनुष्य को (किसी रईस का नाम लेकर) कपड़े का व्यसन नहीं और यदि तुम्हें फिला-सोफी में कुछ अभ्यास हो तो यह प्रगट करो कि मैं कपड़ा पहनने में अफ्ला-तून और सेनेका की सादगी पसंद करता हूँ। सारांश यह कि यद्यपि तुम कैसी ही बुरी अवस्था में पाए जाव परन्तु कदापि न सज्जित हो बल्कि जितने दोष देखने में तुम में हों सब के कारण अपने चित्त वृत्ति की संकोचता वर्णन करो और कदापि अपने दरिद्रता किसी पर खुलने न दो अर्थात् कंजूस बनो पर दरिद्र न बनो।

मनुष्य दरिद्र होने या दरिद्र मालूम होने से कभी प्रतिष्ठा को नहीं पहुँच सकता। बड़े लोगों को टून के खेत देख कर घृणा होती है और बुद्धिमानों की डोंग मुन कर हँसो आतो है परन्तु दरिद्री यदि अभिमान करे तो मेरी जान चमा के योग्य है।

---

## मित्रता ।

( स्पेक्टेटर से )

“ खुदा मिले तो मिले आशना नहीं मिलता ”

देव मिलैतो मिलसकै, मिलै सुदद नहि मीत ।

कोऊ काहू को नहीं, यद्यपि कहत सभमीत ॥ १ ॥

कोई २ लोग यह सोचते होंगे कि जितने अधिक लोग किसी संगति में मिलते हों उतने ही अधिक भांति २ के विचार और कथनोपकथन बीच में आएंगे परन्तु इस के विरुद्ध यह प्रायः देखने में आया है कि बड़े समाजों में बातचित बहुत तुसी हुई और बड़ी रुकावट के साथ होती है । जब बहुत से लोग एक स्थान में इकट्ठा होकर किसी बात की चरचा करते हैं तो उस समय वह केवल आपस की प्रचलित मर्यादा और साधारण नियमों पर बात करते हैं परन्तु जब इस से और थोड़ी संगति में मिलिए तो ऋतु, रीति समाचारों और इसी प्रकार की दूसरी बातों का वर्णन सुनने में आता है । यदि कुछ और घट कर मित्रों की संगति और उक्तवों में जाए तो वहाँ मुख्य २ बातों का वर्णन अधिकतर पाश्चैत्या बल्कि प्रत्येक मनुष्य स्पष्ट चित्त खोलकर बातें करता दृष्टि आएगा परन्तु जो बात चीत दो ऐसे मित्रों में होती है जो आपस में मिले रहते हैं और एक प्राण दो देह होते हैं उस का क्या पूछना है, वह सब से अधिक स्वच्छ एक दूसरे के काम की और निस्संकोच होती है क्योंकि ऐसे स्थानों पर मनुष्य अपनी हर एक इच्छा और अभिलाष को जो उस के जी में सब विचारों पर शिरोधार्य होती है तुरन्त उगल देता है, जो कुछ उसकी राय अपने समवयस्कों अथवा किसी पदार्थ के विषय में होती है वेधड़क प्रकट कर देता है, अपनी समझ और अम्यति को उत्तमता और दृढ़ता की परीक्षा करता है, और जो की सब बातें अपने मित्र के आगे घरीचा के लिये खोल कर रख देता है ।

उसी पक्षका मनुष्य है जिस का सिद्धान्त था कि मित्रता प्रसन्नता की अधिक और खेद की कम करती है क्योंकि उससे हम को दुर्घ का दूना आनन्द उठता है और दुःख का बोझ प्रायः आध बट जाता है । उस के कहने का

और लोगोंने भी अनुमोदन किया है जिन्होंने उस के समय से लेकर अब तक मित्रता पर लेख लिखे हैं। इस के अतिरिक्त सर फ्रांसिस बेकन ने मित्रता के और और लाभ जिन्हें वह उसका फल कहते हैं अत्युत्तम रीति से वर्णन किये हैं। सच तो यों है कि समाजिक विद्या में ऐसे विषय कम निकलेंगे जिस पर लोगों ने इतना अधिक लिखा हो। मित्रता की जो प्रशंसा की गई है उन में से कुछ में इस स्थान पर एक पुराने समय के विद्वान की पुस्तक से लेकर वर्णन करता हूँ अर्थात् एक ऐसी पुस्तक से जिसे इस समय के सुधी लोग अत्युत्तम समझते यदि वह किसी यूनानी इकीम के नाम से प्रसिद्ध हुई होती और जिसका नाम “सराच के बेटे की इकमत की बातें” है। उस के लिखने वाले ने किस उत्तमता के साथ सुशीलता और मिलनसारि के द्वारा लोगों का अपना मित्र बना लेने का उपाय वर्णन किया है और उस सिद्धान्त की नेव डाली है जिस को हाल में एक मनुष्य ने अपना ठहराया था कि “हर मनुष्य को चाहिये कि अपने शुभचिन्तक बहुत और मित्र थोड़े रखे”। उस ने लिखा है कि “यदि किसी का बचन मोटा हो तो उस के मित्र दिन दिन अधिक होते जायेंगे और उत्तम बात से हर मनुष्य दीड़ कर मिलेगा अतः चाहिये कि हर एक से हिल मिल कर रहे परन्तु सहजों परिचितों के बीच अपने चित्त का भेद कहने और सम्मति लेने के लिये एक ही मनुष्य की निश्चय करे।

उस ने कौसी कुछ बुद्धिमानी और चाकाकी खर्च कर के हमको मित्र चुनने के उपाय बतलाय हैं और कौसी ठीक रीति पर बलिष्ठ थोड़ी दिज्ञगी के साथ विश्वासघाती और स्वार्थी मित्र की पहचान लिखी है। उस का सिद्धान्त है कि “यदि तुम किसी को अपना मित्र बनाओ तो तुरन्त विश्वास न करने लो बल्कि पहले भन्नी भाँति परीक्षा कर लो क्योंकि प्रायः लोग अपने स्वार्थ के मित्र होते हैं और तुम्हारे गाढ़े समय में कदापि काम न आएंगे। कोई मित्र ऐसे होते हैं कि बिगाड़ हो जाने या आपस में कुछ मैल आजाने की अवस्था में तुम्हारी अपकीर्ति पर कामर बाँधेंगे। बहुतरे लोग केवल भोग विश्वास के साथी होते हैं और दुःख के साथी नहीं होते। ऐसे मनुष्य तुम्हारे विभव के समय में भाई चारे का दम भरते हैं, तुम्हारे नीकरी पर तुमसे बढ़कर आतंक चकाने की तयार रहते हैं परन्तु ईश्वर न करे कि तुम पर दंदिद्रता आजाय तो वह मुँह बिपा कर किनारे हो जायेंगे”। उस का सिद्धान्त है कि

अपने अन्तर्भी से दूर रही परन्तु मित्रों का सदा ध्यान रखी" । इस के उपरान्त वह मित्र के उन दो फलों में से जिन का वर्णन टकी और बेकन ने बहुत जल्दी चीड़ी रीति पर किया है मुख्य कर के एक का वर्णन करता है और अन्त में मित्रता की प्रशंसा पर आशुक्रता है अतएव इस विषय में 'उस के विचार बहुत सच्चे और ऊँचे हैं' । वह लिखता है कि "सच्चा मित्र एक बहुत बड़ी आड़ होता है । जिस को यह मिला उस के हाथ मानों कुबेर का भंडार पाया । कोई वस्तु सच्चे मित्र के पद को पहुँच नहीं सकती, मित्रता का यह रत्न अनमोल है । सच्चा मित्र जीवन का अवलम्ब है, यह अकथ्य पदार्थ उन्हीं लोगों को मिलता है जो ईश्वर का भय करते हैं जो मनुष्य ईश्वर से डरता है वह अपनी मित्रता को सचाई और धर्म के साथ निबाहेगा कि जैसा क्योंकि वह पाप है वैसा ही उस का मित्र भी मिलेगा" ।

जहां तक सुझाव है मैं कह सकता हूँ कि आज तक कोई वाक्य पढ़ कर मैं ऐसा प्रसन्न नहीं हुआ जैसा इस को कि "मित्र जीवन का अवलम्ब है" यह मित्रता का लाभ दुख और क्लेश के दूर करने में जो मनुष्य के जीवन के साथ लगे हुए हैं भली भाँति प्रकट करता है । इस के सिवा मैं इस वाक्य को पढ़ कर और भी प्रसन्न हुआ कि अच्छे आदमी को उस की सुजनता के बदले में ईश्वर की ओर से एक मनुष्य वैसा ही सुजन मिल जाता है । इसी मनुष्य का एक मिहान्त और भी है जो मेरी सम्मति में उतना ही प्रशंसनीय है जैसा कि उस के और बचन हैं । उस की शिक्षा है कि "अपने पुराने मित्र के समागम की कदापि न छोड़ी क्योंकि नया मित्र पहले पहल उस के बराबर नहीं हो सकता है । इस का उदाहरण ऐसा है जैसी नई शराबकी, जब वह पुरानी हो जायगी तो तुम उसे भी प्रसन्नतापूर्वक पियोगे" । जहां मित्रता का छूट जाना और उस के दोषों का वर्णन है वहां उस के उदाहरणों की उत्तमता को ध्यान कीजिये और उस की चित्त की बीरता देखिये । वह लिखता है "जिस ने चिड़ियों की ओर पत्थर फेंका उस ने उस को भड़काकर उड़ा दिया उसी भाँति जिस ने अपने मित्र को ताना मिहना दिया उस ने उस की मित्रता से हाथ धोया । यदि तुमने अपने मित्र पर तत्काल भी खींच ली हो तो कदापि हताश मत हो क्योंकि सम्भव है कि फिर वह सुझ से प्रसन्न हो जाय या यदि बुरा भी कहा हो तो भी मत डरो क्योंकि क्या आश्चर्य है कि वह फिर तुम से भेंट कर ले परन्तु यदि तुम ने उस पर ताना मारा हो

वाँ उस से अभिमान के साथ वर्त्ते हो या उस का भेद खोश दिया हो या विश्वासघात किया हो तो फिर उस से मित्रने की आशा मत रखो क्योंकि इन बातों से हर मनुष्य तुम से दूर रहना चाहेगा” । इस स्थान पर और दूसरी शिष्या की बातों के साथ जो इस मनुष्य की पुस्तक में मिलती हैं उस ने बहुत सी ऐसी छोटी छोटी प्रति दिन उदाहरण और सदृशता लिखी हैं जिन को लोग हारिस और इपिकटेटस की पुस्तकों में प्रशंसा के योग्य समझते हैं । बहुत से उदाहरण इसी प्रकार के नीचे के वाक्यों में पाये जाते हैं जो उसी विषय पर लिखे गये हैं । “जो मनुष्य किसी का भेद प्रकट कर देता है वह अपना विश्वास खोता है अतः कभी वह अपनी प्रकृत्यनुसार मित्र न पावेगा । तुम को चाहिये कि अपने मित्र से प्रेम रखो और उस की सच्चाई का दम भरों पर यदि तुम ने उस का भेद लोगों से कह दिया हो तो फिर कदापि उस का पीछा न करो क्योंकि जैसे कोई शत्रु को बध करता है उसी प्रकार तू ने भी अपने मित्र की फांसी दो और जैसे कोई अपने हाथ की बिड़िएं उड़ जाने देता है तू ने भी अपने मित्र की हाथ से गंवाया और फिर उसे न पाएगा । अब उस के पिंड पड़ना व्यर्थ है क्योंकि वह तुझ से कोसों दूर गया । उस की वह दशा है ऐसी हिरण को कि तेरे फंदे से जान लेकर निकल भागा । यदि चाव लगा हो तो अच्छा हो सकता है या बुरा कहा हो तो यह अपराध क्षमा हो सकता है परन्तु भेद खोश देने की तो कोई औषधि ही नहीं है” ।

और बहुत से गुणों में जिन का सच्चे मित्र में होना एक आवश्यक बात है इस बुद्धिमान ने बहुत ही ठीक तौर पर दृढ़ता और सच्चाई की मुख्य मुख्य समझकर चुन लिया है । इन गुणों में और लोगों ने भलाई विद्या विवेक अवस्था और धन में बराबर होना और ( सेसिरो के कहने के अनुसार ) उत्तम स्वभाव इत्यादि मिला दिये हैं । यदि कोई मनुष्य मेरी राय इस विषय में पूछे जिस पर लोगों ने खूब लिखा है तो मैं केवल इतना ही कहूंगा कि इन के साथ चाक चक्रण और चित्त का सदृश होना भी अवश्य है । कोई लोग किसी ऐसे मनुष्य से मित्रता उत्पन्न कर लेते हैं जिस का हाल उन्हें दिनों के अनन्तर मालूम होता है और यकायक उस से ऐसी बुरी प्रकृति प्रकट हो जाती है जिस का पहले उन्हें ध्यान भी नहीं होता । बहुतों को लोग संसार में ऐसे हैं जो अपने जीवन काल में किसी समय ऐसे होते हैं कि हर मनुष्य उन की बातों को पसंद करता है और कभी उन्हें लोगों में ऐसी प्रकृतियां पाई जाती हैं कि

हर मनुष्य छूना करता है। मेरी जान वह मनुष्य बड़ा ही आभागी है जिस को ऐसे मनुष्य ने पाका पड़ जाय जो किसी समय में कर्ण और किसी समय विशाच हो। जो लोग संसार में ऐसे हैं जिन का स्वभाव किसी समय अच्छा रहता उन्हें सचित है कि सदा अपने स्वभाव का ढंग एक ही सा रखने की चेष्टा करें और कभी उस अवस्था को न छोड़ें जिसे हर मनुष्य पसंद करता है क्योंकि यह एक बड़ी बुद्धिमता की बात है।

## चतुराई और चालाकी ।

मेरे ने प्रायः विचार किया है कि यदि सब मनुष्यों के चित्त खोल दिये जायें तो बुद्धिमान और मूर्ख लोगों के चित्तों में बहुत कम अन्तर दृष्टि आगगा क्योंकि जितनी आनुमानिक व्यर्थ और भद्दी बातें एक के मन में आती हैं उतनी ही दूसरे के चित्त में परन्तु मुख्य भेद इतना है कि बुद्धिमान जानता है कि उस के विचारों में से कौन बातचीत में जानने के योग्य हैं और कौन नहीं और इस के अनुसार अपने कोई २ विचारों को प्रकट करता है और कुछ को क्रिपा रखता है। मूर्ख को इस का नेक विवेक नहीं होता इस लिये वह निस्संकोच मन की सारी बातें मुँह से कह डालता है। तीसरी इस प्रकार की चतुराई को मद्धे और पक्के मित्रों की बातचीत में प्रवेश नहीं हो सकता और ऐसे अवसरों पर बड़े बड़े चतुर लोग प्रायः निरर्थक मूर्खों की भाँति काम करते हैं। इस का कारण यह कि मित्रों से बातें करना ऐसा है जैसा कि प्रकट विचार करना।

इस विचार से मेरी समझ में टकी ने अच्छा कहा कि इस कहावत का टीषा जिस का वर्णन प्रायः पुराने लिखने वालों ने किया है प्रकट कर दिया। उन लोगों का कथन है कि मनुष्य को चाहिये कि अपने शत्रु के साथ इस रीति से वर्त्त कि आगे किसी समय में उस को अपना मित्र बना लेने का स्थान बचा रहे और मित्र के साथ ऐसा बरताव करे कि यदि वह कभी उसका शत्रु हो जाय तो उस को दुःख न दे सके। इस कहावत का पहला अंश जो शत्रु के साथ वर्त्तने से सम्बन्ध रखता है वस्तुतः उत्तम और उचित है परन्तु दूसरे अंश से जिस में मित्र का वर्णन है बुद्धि की अपेक्षा चालाकी अधिक पाई जाती है और यह सिद्धान्त मनुष्य को जीवन की उन बड़े अनभ्युपताओं से ब्रञ्चित रखता

है जो केवल अन्तरिकमित्त के साथ मन खोजकर बातें करने से प्राप्त होती हैं। इसके सिवा यदि मित्त शब्द होजाय तो संसार स्वयं न्याय कर्ता है और विचार कर लेती है कि उन में से किस मनुष्य पर अपने मन का भेद प्रकट कर देने के कारण मूर्खता का दोष लगाया जा सकता है और किस पर विश्वास का।

स्मरण रखना चाहिये कि चतुराई केवल बातों ही से प्रकट नहीं होती बल्कि हर एक काम में पाई जाती है और वह मानो ईश्वर की ओर से एक गुमाश्ते के गृहश इसी लिये नियत है कि जीवन के साधारण कामों में हम लोगों का राह बतलावे।

विदित है कि मनुष्य के चित्त में और बहुत से उत्तम गुण हैं परन्तु चतुराई के बराबर कोई लाभ दायक नहीं है क्योंकि सच पूछिये तो इसी के कारण श्रीों का गौरव है, यही उन को उन के उचित समय और अवसरों पर काम में लाती है और इसी के कारण उन के स्वामी को उन का पूरा लाभ होता है। इस के बिना विद्या अभिमान हो जाती है, तीव्रता छट्टता हो जाती है, भनाई दोष प्रतीत होती है, अच्छा अच्छा गुण मनुष्य से भूल करारते हैं और हर काम में वह हानि उठाता है।

चतुर मनुष्य केवल अपने ही चित्त पर अधिकार नहीं रखता बल्कि श्रीों के अचरणा पर स्वत्व प्राप्त कर लेता है। वह जिस मनुष्य से बातें करता है उस की योग्यता की जान लेता है और उसे उचित रीति पर काम में लाता जानता है। अब यदि हम मुख्य मुख्य समाजों और समुदायों पर विचार करें तो उस समाज की बातचीत का अगुआ न तो बुद्धिमान, न पण्डित और न और मनुष्य बल्कि चतुर मनुष्य दृष्टि आएगा और उस के कारण समाज का एक गौरव मान्य होगा। वास्तव में जिस मनुष्य में योग्यता कूट कूट कर भरी हो पर चतुराई नक न हो उस की दशा पालीफ़ेमस की सी है जिस का हाल किस्से में लिखा है कि वह बड़ा ही बलवान था परन्तु अंधा था और इस कारण से उस का बल व्यर्थ था।

मेरी सम्मति में यदि मनुष्य में और चमत्कार हों और चतुराई न हो तो संसार में उस का कोई गौरव न होगा परन्तु यदि उस में यह गुण पूर्णता की पहुंचा हो और और सब बातें साधारण हो हों तो वह अपने निज के व्यवहार में जो कुछ चाहे कर सकता है।

अब जैसा कि मैं मनुष्य के लिये चतुराई का होना बहुत उपयोगी सम

भक्ता हूँ वैसा हो चाक्षाकी की छोटी नीच और निकम्मे चित्त के लोगों का भाग सोचता हूँ चतुराई हम की उत्तम उत्तम बातें बतानो है और उन के प्राप्त करने के लिये उन उपायों की काम में लाती है जो प्रचलित और प्रशंसा योग्य हैं। इस के विरुद्ध चाक्षाकी केवल अपने निज मनोरथ के लालची को देखती है और जिस रीति पर सम्भव होता है उन के प्राप्त करने का यत्न करता है चतुराई के विचार बड़े और दूरतक पहुँचे होते हैं और वह भली चंगी आँखों की भाँति जहाँ तक दृष्टि जाती है हर एक वस्तु को देखती रहती है। चाक्षाकी पास की वस्तुएँ देखनेवाली आँख की भाँति है जो पास की छोटी सी छोटी वस्तुओं को देख सकती है परन्तु दूर की वस्तुएँ उस की नेत्र दृष्टि नहीं आती। चतुराई जो जो लोगों पर प्रकट होती जाती है उतना ही उस मनुष्य का जिस में यह गुण होता है समाज में अधिकार अधिक होता जाता है। चाक्षाकी जहाँ एक बार प्रकट हो गई फिर उस का गुण जाता रहा है और मनुष्य के हाथ से वह बातें भी निकल जाती हैं जिन्हें वह सीधा मन कर कर सकता है। चतुराई से बुद्धि की दृढ़ता अभीष्ट है और वह जीवन के सब कामों में मनुष्य की नियोजना करती है। चाक्षाकी एक प्रकार की पशुपत्नी की भी बुद्धि है जो केवल अपने ज्ञान के लाभ और भलाई को देखती है। चातुरी केवल दृढ़ बुद्धि और उत्तम समझ के लोगों में पाई जाती है परन्तु चाक्षाकी प्रायः पशुपत्नी में और उन मनुष्यों में कुछ २ उन्हीं की भाँति हैं मिलती है। सारांश यह कि चाक्षाकी केवल चतुराई को नज़र है और निर्बल लोगों के समीप ऐसी ही समझी जा सकती है जैसे कि प्रायः मसखरापन, मेधा और गम्भीर बुद्धिमानों समझी जाती है।

चतुराई मनुष्य के चित्त का स्वाभाविक ढंग ऐसा है कि वह भविष्य को सोचता और विचार करता है कि आज के हजार या दो हजार बरस के अनन्तर उस को क्या दशा होगी और अब क्या है। वह भली भाँति जानता है कि उस की मरणान्तर जो सुख मिलेगा और दुःख सहने पड़ेगे उन में इतनी दूरी पर होने से कोई अन्तर नहीं हो सकता और यह वस्तुएँ दूर होने के कारण उस की छोटी नहीं मालूम होतीं। वह विचार करता है कि वह सुख और दुःख जो उस के प्रारब्ध में अन्त में लिखे हैं हर एक उस के समीप आते जाते हैं और उस के पास उसी रीति पर पूरे पूरे आएँगे जैसे कि वह सुख और दुःख जो उसे इस समय प्रतीत होते हैं। इसी विचार से वह अपने



किये उन वस्तुओं प्राप्त करने में चतुराई खर्च करता है जिस से उस के चित्त को प्रसन्नता होती है और जो उस के उत्पन्न करने वाले की इच्छा के अनुसार है। वह हर एक काम का समता मोच लेता है और उस के फायदे और फल के लाभ को विचार लेता है। वह अपने काम की हर एक छोटी छोटी आशाओं को यदि वह उस के भविष्य के विचारों के विरुद्ध होती हैं छोड़ देता है।

स्मरण रखना चाहिये कि मैं ने इस विषय में चतुराई को एक समतत्कार और उसी के साथ एक भलाई भी विचार किया है और इसी कारण से उस का वर्णन दोनों प्रकार से पूरा पूरा किया है। मेरी समझ में चतुराई अकेले संसार के कामों से नहीं बल्कि हमारे कुल सत्ता से सम्बन्ध रखती है और वह केवल एक नाश होने वाली जीव को गियोजना करनेवाली वस्तु नहीं है बल्कि एक ज्ञानी जीव को राह बताने वाली है बुद्धिमान लोग भी चतुराई को यही गुण कहते हैं और उस को कभी चतुराई और कभी बुद्धिमानी के नाम से पुकारते हैं। सब प्रकृतियों तो यह निश्चन्देह सब से बड़ी बुद्धिमानी है परन्तु आनन्द यह है कि हर मनुष्य उसे प्राप्त कर सकता है। इस के लाभ अनन्त हैं परन्तु इस का प्राप्त करना सड़न है और जैसा कि एक विद्वान् का सिद्धान्त है “बुद्धिमानी एक अति उत्तम वस्तु है जो कभी नहीं सुगम होती और जो लोग उस से प्रीति करते हैं वह उस से सड़न में देख सकते हैं और जो उस की खोज करते हैं उन्हें वह सड़न में मिला जाता है। जो लोग उस की इच्छा करते हैं उन्हें वह पड़ली पड़ल दृष्टि नहीं आती परन्तु जो मनुष्य उस को ढूँढ़ता है उसे दूर जाना नहीं पड़ता क्योंकि वह उस को उस के दर्शकों पर बैठी मिलती है। इसलिये उस का विचार करना बड़ी बुद्धिमानी की बात है और जो मनुष्य उस पर दृष्टि रखता है उसे इस की बहुत चिन्ता करनी नहीं पड़ती क्योंकि वह आप उन लोगों की खोज में रहती है जो उस के योग्य होते हैं, मार्ग में उन से बड़े प्रेम से मिलती हैं और जब वह विचार करते हैं तो साथ ही उपस्थित होती हैं”।

## ईर्ष्या ( डाह ) ।

( स्पेक्टेटर से )

बहुत लोगों का विचार है कि ईर्ष्या जादू का हुकम रखता है और ईर्ष्या को होने वाली दृष्टि ने कितने सम्पन्न लोगों के सुख और चैन को नष्ट कर दिया है । सरफ्रायस बेकन लिखते हैं कि कोई २ मनुष्य ऐसे बह्मी देखने में पाये हैं कि उन्होंने वह ऋतु और समय नियत कर रखे हैं जब कि ईर्ष्या की दृष्टियों का बुरा फल पूरा पूरा होता है और उन का सिद्धान्त है कि यह दशा तभी उत्पन्न होती है जब कि ईर्ष्या किसी बड़ी प्रसन्नता और अभिमान की दशा में रहता है । उस समय उस मनुष्य का चित्त मानो मीर के लिये बाहर निकलता है और तभी उस को विघ्न का अविषय भय है । परन्तु मैं ऐसे व्यर्थ के विचारों पर बाद न करूंगा और न बहुतेरी दूसरी उत्तम बातों को जो अनेक पुस्तकों से इस दुष्ट अभ्यास के विषय इकट्ठी की जा सकती हैं दुहराऊंगा बल्कि संसार के प्रतिदिन के कार्यों के विचार से ईर्ष्या मनुष्य की अवस्था पर तीन बातों के विषय विचार करूंगा अर्थात् पहले उस के दुःख दूसरे उस का आश्वासन और तीसरे उस की प्रसन्नता ।

ईर्ष्या के दुःख की सामग्री हर अवसर पर जब कि उसे प्रसन्न होना चाहिये प्रस्तुत रहती है । उसकी जीने का सुख उलटा मिलता है अर्थात् जिन बातों से उन लोगों को जो इस दोष से रहित हैं बहुत बड़ी प्रसन्नता प्राप्त होती है वही उस मनुष्य के लिये जो इस अभ्यास के आधीन है दुःख का कारण हो जाती हैं । उस के सहवर्तियों सब गुण उस के चित्त पर कांटे की तरह चुभते हैं । जवानो, सुन्दरता बीरता और बुद्धि यह सब उस की अप्रसन्नता उत्पन्न करती हैं । छिद यह कैसी निकष्ट और बुरी दशा है । गुण से रुष्ट होना और दूसरों से केवल इसी लिये बुरा मानना कि और लोग उन्हें अच्छा समझते हैं । सब हैं ईर्ष्या का जीवन तुच्छ है । वह केवल दूसरों की योग्यता या क्षमता का ही पर नहीं कुढ़ता बल्कि ऐसे संसार में रहता है जिस के सब मनुष्य अपने अपने सुख और लाभ के यत्न करने से सदा उस के चैन में विघ्न डालने के लिये मानो सहायता किया करते हैं । विचार एक पक्का दूत ऐसे चित्त के मनुष्यों से सदा जात लें लगा रह कर बगुली घूसे का काम करता है ।

वह किसी सुन्दर युवा का पता देकर उन के कान में कहता है कि वह मनुष्य किसी दिन वेकर की जोड़ी पर सवार परेड के मैदान को घुमा खाता हुआ दृष्टि आयेगा। जब यह लोग उस की बात में शंका करते हैं तो वह अपनी बात की सचाई का प्रमाण देता है और अन्त को यह बतला कर कि उस का एक बूढ़ा नाना है जो सिवाय उस के और कोई उत्तराधिकारी नहीं रखता उन के मन के दुःख को दूना कर देता है। इस प्रकार के गर्म-गर्म पुटकले ऐसे स्वभाव के मनुष्यों का जो ज्ञान के लिये विचार के पाम प्रायः उपस्थित रहते हैं और जब वह देखता है कि इस समाचार के सुनते ही उन के बिहारे का रंग तो उड़ गया परन्तु लज्जा के मारे धीरे से कहते हैं “भगवान इस समाचार को सच करे” तो वह दुष्टता से उन की जान पहचान के हर मनुष्य की कुछ न कुछ प्रशंसा करना आरम्भ करता है।

ईर्ष्या लोभी का प्रबोध का हेतु वह छोटे छोटे दोष और अवगुण होते हैं जो किसी प्रसिद्ध मनुष्यों में पाए जाते हैं। यदि किसी प्रसिद्ध प्रमाणिक मनुष्य से कोई काम उस की योग्यता के विरुद्ध हो गया हो या किसी भारी काम में जिस के उत्तम रीति से पूरे होने का यश एक मनुष्य को प्राप्त हुआ है अन्त में पक्षे तौर पर मालूम हो कि उस कार्यदक्षता में बहुत से लोग मिले थे और इस लिये वह प्रशंसा या यश बहुत से लोगों के बीच बट जाना चाहिये तो ईर्ष्या लोभी के जो जो बहुत कुछ संतोष होता है। उन्हें इस बात की एक छिपी हुई प्रसन्नता होती है कि वह मनुष्य जिसे वह अपने जी में बड़ा सम्मान के लिये बाधित हो चुके थे उस की प्रशंसा के बहुत से भागवाले खड़े हो जाने से वह थोड़ा बहुत उन के (ईर्ष्या के) तुल्य के पद पहुँच गया। सुझे स्मरण है कि कई बरस हुआ एक पुस्तक विना रचयिता के नाम के छपी थी। इस पर अल्प योग्यता के लोगों ने जिन्हें स्वयं उस के लिखने की योग्यता न थी उस मनुष्य की अपकीर्ति करना आरम्भ किया जिस को लोग उस पुस्तक का बनाने वाला समझते थे। जब इस से कोई परिणामन उत्पन्न न हुआ तो उन्होंने यह सोचा कि लोगों के चित्त से यह विचार दूर कर दें कि वह पुस्तक उसी मनुष्य ने लिखी। जब यों भीथके तो यह बात निकाजी कि उसे तो असुख मनुष्य देखता जाता था और असुख ने उसकी छुट्टी की छुट्टियाँ तैयार किये हैं। तब तो एक प्रामाणिक मनुष्य से जो उस समाज के साथ इस बाद में मिला था न रहा गया और इतना बीस ही उठा कि

“ साहिबो जब आप लोग यह खूब जानते हैं कि आप में से किसी साहिब ने उस के बचने में सहायता नहीं दी तो आप के लिये सब बराबर है चाहे किसी ने लिखा हो ” । परन्तु ऐसी योग्यता के कामों में जिन में किसी का नाम प्रकट नहीं होता प्रायः ईर्ष्यक लोगों का बोध का यह है कि जहाँ तक संभव होता है वह किसी को उस का मानिक नहीं बताते और इस द्वारा उस की ख्याति किसी मुख्य मनुष्य के हिससे में नहीं जाने देते । प्रायः देखने में आया है कि ईर्ष्यक का चिह्न दूसरे की प्रसन्नता का हास सुन कर एक बारगी मूख गया है परन्तु उसी के साथ जब किसी सुख्य बात में उस की अभिमान्यता का हास बयान किया गया तो साथही खिन्न गया । यदि कोई उससे कहे कि प्रसन्न बड़ा धनी है तो देखियगा कि उस के मुँह पर पियराई दौड़ गई पर यदि उसी के साथ यह भी माकूम हुआ कि उस का बहुत सा कुन्बा, खानेवाला भी है तो उसी समय सुखड़े की रंगत फिर पूर्ववत् हो जायगी ।

अब यदि ईर्ष्याकी प्रसन्नताको देखिये तो वह उतनी अधिक होती है जितना ईर्ष्या किये गये का बढ़ता है यदि किसी मनुष्य ने एक कठिन दुःख काम के करने पर उत्साह बाँधा हो और उस में अनुतीर्ण हुआ हो या ऐसी बात के लिये यत्न किया हो जो पूरी उतरने की हासत में सर्वसाधारण के काम की और प्रशंसा के योग्य होती परन्तु अब कृतकार्यता न प्राप्त होने के कारण लोग उस पर हँसते या छुणा को दृष्टि से देखते हैं तो ईर्ष्या उस के व्यर्थ के उत्साह से छुणा करने के बहाने मन ही मन में इस बात से बहुत प्रसन्न होता है कि आगे उस मनुष्य को ऐसे बड़े कामों में हाथ डालने की फिर साइस न होगी ।

## उपदेश करना ।

( स्केट्टर से )

संसार में कोई बात ऐसी नहीं है जिस के मुनने में हम लोग उतने विच-  
कते हैं जितना कि उपदेश के मुनने में । हम लोग उपदेशक के विषय विचार  
करते हैं कि वह हमारी बुद्धि के साथ धृष्टता कर रहा है और हम को बचा  
या मूर्ख समझता है । हम उस को शिक्षा को अपनी गुराई समझते हैं और

जितना वह हमारी भलाई के लिये उत्साह प्रकट करता है उतना ही हम उस को मूर्ख और गंवार समझते हैं। सब पढ़िये तो जो मनुष्य उपदेश करने का नामा बांधता है वह इस भांति से हम पर अपनी बड़ाई प्रकट करता है जिस का कारण केवल यह है कि वह अपनी और हमारी समता करने में या तो हमारे काम को बुरा समझता है या हमारी समझ को बुरा विचार करता है। इस विचार से उपदेश करने की कला जिस से दूसरे लोगों को हमारी बात कड़वी न जान पड़े अत्यन्त कठिन है और इन्हीं कारणों से हास के और अगले समय के ग्रन्थकारों में से जिस मनुष्य ने इस विषय में जितना गौरव प्राप्त किया उतना ही वह प्रसिद्ध हुआ। उन में से जिस को देखिये उस ने एक एक लुदा टंग स्वीकार किया है जिस में लोगों को उस को शिक्षा दित कर दी। किसी ने शिक्षा को उत्तम शब्दों का वस्त्र बनाया है, किसी ने उसे पद्य में गाया है, किसी ने हास्य के साथ शिक्षा को है और किसी ने इस तात्पर्य से छोटी छोटी कहावतें लिखी हैं। पर मेरी सम्मति में सब से उत्तम रीति उपदेश की कहानी है चाहे उस का टंग कैसा ही क्यों न हो। इस का कारण यह है कि इसरीति से हमारे मन की चोट नहीं लगती और न उस के विषय हम उस प्रकार को शङ्का कर सकते हैं जिन का ऊपर वर्णन हो चुका है।

विचार करने से यह बात सिद्ध होगी कि कथा के पढ़ने से हम को विश्वास होता है कि मानो हम आप ही अपने को उपदेश कर रहे हैं। प्रकट में हम रचयिता की पुस्तक को मन बहलाने के अभिप्राय से पढ़ते हैं और इस कारण से उस की शिक्षार्थों को अपने मन के उत्पन्न किये हुए परिमाण सोचते हैं। यद्यपि उन का प्रभाव हम पर धीरे धीरे होता जाता है परन्तु हम को इस की नेक भी खबर नहीं होती। हम लोग धोखे में सोचते हैं और असावधानता की दशा में चतुर और बुद्धिमान होते जाते हैं। तात्पर्य यह कि इस प्रकार से मनुष्य का नेक विदित नहीं होता कि वह दूसरे का यत्न कर रहा है बल्कि यहो समझता है कि वह अपनी आप करता है। अतः उस को उन बातों का जिन से मनुष्य को शिक्षा बुरी मालूम हुआ करती है कुछ भी ध्यान नहीं होता।

एक दूसरी बात सोचने के योग्य यह है कि यदि हम मनुष्य को चित्त वृत्ति को जानें तो यह दृष्टि आएगा कि उसे का मन जितना किसी ऐसे काम के करने से प्रसन्न होता है जिस से उस को अपनी योग्यता और पूर्णता का

परिमाणु विदित हो सके जतना दूसरे से नहीं होता। अब मनुष्य के चित्त का यह स्वाभाविक गौरव और उल्लास कहानी के पढ़ने में भली भाँति पूरा होता है क्योंकि इस प्रकार की पुस्तकों में पढ़ने वाला मानो आधा काम स्वयं करता है, उस की हर एक बात उसे ऐसी प्रतीत होती है जैसे उस ने आप जाना हो, वह हर समय उस की सब वस्तुओं को एक दूसरे से मिलाता रहता है और इस कारण से आप स्वयं पुस्तक का पढ़ने वाला और लिखने वाला हो जाता है। इस लिये यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है यदि ऐसे अवसरों पर जब कि मन अपने से आप बहुत प्रसन्न रहता है और अपनी समझ पर प्रसन्न होता है कोई मनुष्य इस प्रकार की पुस्तकों को जिन से वह आनन्द मिचता है पच्छा समझे।

उपदेश करने का यह नियम जिस के अनुसार सीधी पास की राह को छोड़ कर एक टेढ़ी और दूर की राह पकड़नी पड़ती है इतना विघ्न रहित है कि पूर्वकाल के बुद्धिमान लोग बादशाहों के कहानी के द्वारा शिक्षा करते थे। यद्यपि इस प्रकार की सैकड़ों कहानियाँ हैं परन्तु मैं इस स्थान पर तुर्की भाषा की एक कथा वर्णन करता हूँ।

कहते हैं कि सुल्तान महमूद गुज़नवी ने दूसरे देशों से लड़ाइयाँ लड़के और अपने देश में अत्यचार कर के अपने राज्य को नष्ट भ्रष्ट कर दिया था और आधा ईरान उजाड़ हो गया था। इस बादशाह के एक मंत्री था जिस की दावा था कि मुझे एक फ़कीर ने सब पक्षियों की भाषा का समझ लेना बताया है। एक दिन का हाल है कि बादशाह मंत्री समेत जंगल को शिकार खेलने के लिये गया था और सायंकाल के निकट वहाँ से खेमे की ओर लौटा। राह में उस ने देखा कि दो उल्लू एक पेड़ पर जो एक खंडहर घर की एक पुरानी भीति के पास था बैठे बोल रहे हैं। बादशाह ने मंत्री से कहा कि मैं जानना चाहता हूँ कि यह दोनों पक्षी आपस में क्या बातें कर रहे हैं तुम भली भाँति विचार कर के मुझ से कहो। मंत्री ने पेड़ के पास जा कर उस की बातचीत को ध्यानपूर्वक सुना। थोड़ी देर में वह वहाँ से लौट आया और उस ने बादशाह से कहा कि मैंने दोनों की बातों की सुना है पर आप से निवेदन नहीं कर सकता। बादशाह को इस उत्तर से और भी अधिक उत्कण्ठा हुई और उस ने मंत्री को उस की बातचीत का एक एक पक्षर वर्णन करने के लिये आज्ञा दी। उस समय मंत्री ने यों कहना आरम्भ किया

“बादशाह सन्नामत यह दोनों पक्षियाँ आपस में बेटा बेटो के विवाह की बात चोत कर रहे थे। बेटे वाले ने कहा कि मैं अपने बेटे का ब्याह तुम्हारी बेटो के साथ इस रीत पर करूँगा कि तुम उस की पचान उजाड़ गाँव कन्धा-दान में देना स्वीकार करो। बेटो वाले ने उत्तर दिया कि तुम पचास को भँकते हो मैं पाँच सौ दूँगा। ईश्वर सुल्तान महमूद की आयु अधिक करे जब तक वह इस देश का बादशाह है हम की उजार गाँव की क्या कमी है”। सुनते हैं कि सुल्तान महमूद का चित्त पर इस बात का इतना अधिक प्रभाव हुआ कि उस ने सारे नगरों और गाँवों को जो उसी के कारण उजाड़ हो गए थे फिर से बनवा कर बसा दिया और जब तक जीता रहा सदा प्रजा की भलाई का ध्यान रखता था।

## प्रशंसा ।

( बैकन से )

प्रशंसा भलाई की पकड़ है परन्तु वह दर्पण या उस वस्तु के सदृश है। जिस में पकड़ें दृष्टि आती है। यदि प्रशंसा करनेवाले साधारण लोग हों तो प्रशंसा का कोई विश्वास नहीं हो सकता और वह अधिकतर ऐसे मनुष्यों की होती है जो केवल देखने में भले होते हैं। इस कारण यह है कि साधारण लोग बहुतेरे अच्छे २ भलाईयों को नहीं जानते। उन से छोटी भलाई मनुष्य की प्रशंसा कराती है, साधारण भलाईयों को देख कर वह आश्चर्य करते हैं, और उत्तम भलाईयों के समझने की बुद्धि नहीं रखते निदान कि उन से दिखावट से खूब काम निकलता है। सब तो यह है कि प्रसिद्धि नदी सदृश है जो हल्को वस्तुओं को ऊपर रखती है और भारी वस्तुओं को डूबा देती है। परन्तु यदि योग्य और बुद्धिमान लोग एक मुँह होकर किसी की प्रशंसा करें तो वह कस्तूरी की सुगन्ध के सदृश है जो चारों ओर भर जाती है और फूल की सुगन्ध की भाँति उसी क्षण जाती नहीं रहती।

प्रशंसा में इतनी अधिक झूठी बातें होती हैं कि यदि मनुष्य उस के विषय कुछ सन्देह करे तो अनुचित नहीं है जैसे कोई प्रशंसा सम्राज्ञा की राह से होती है। अब यदि प्रशंसा सरने वाद्या निरा प्रशंसक है तो वह कुछ बातें ऐसी

जानता होगा जो हर मनुष्य के विषय कही जा सकती हैं। यदि वह चाहेगा कि वह तो मनुष्य की प्रकृति का ध्यान रखेगा और जिस बात में देखेगा कि वह अपने को बहुत कुछ सम्भक्तता है उसी में उसकी प्रशंसा करेगा परन्तु यदि वह मूर्ख है तो किसी मनुष्य को ऐसी बात की प्रशंसा करेगा जिस में वह अपने को निर्भीक जानता है और इस प्रकार उस को दुःख पहुंचाएगा। कोई प्रशंसा शुभ चिन्तकता और गौरव की दृष्टि से की जाती है और राजाओं और बड़े अधिकार के लोगों के लिये अवश्य हैं क्योंकि यह कह कर कि वह ऐसे हैं उन को बताया जाता है कि उन्हें ऐसा होना चाहिये। इसी भाँति किसी मनुष्य की प्रशंसा शत्रुता की राह से की जाती है जिस में लोग उनसे डाँट करें और उन की हानि पहुंचाएं। परन्तु मेरी दृष्टि में साधारण प्रशंसा यदि यथार्थ होती की जाय और साधारण की न हो अच्छी होती है। हज़रत सुलैमान का कथन है कि जो मनुष्य अपने मित्र की प्रशंसा अधिक और असमय करता है वह मानो उस की बुराई करता है क्योंकि किसी मनुष्य या वस्तु की सीमा से अधिक बढ़ाई करने से दूसरे लोगों की जलन पैदा होती है और वह उस के खंडन करने की चिन्ता में होते हैं।

अपनी प्रशंसा आप करनी सिवाय ऐसे ही किसी उचित अवसर के अच्छी नहीं होती परन्तु अपने पद या कार्य की प्रशंसा मनुष्य बखूबी कर सकता है। रूम के पादरी जो बड़े बड़े योग्य लोग होते हैं और और पदाधिकारी जैसे जन, कलक्टर, राज दूत इत्यादि को प्यादे कहा करते हैं जिस के यह अर्थ है कि स्वयं उस का उन का पद अत्यन्त प्रतिष्ठित है यद्यपि प्रायः जो लाभ हम प्यादी के शोक से पहुंचता है वह उन से हासिल नहीं होता।

## परिश्रम ।

भला संसार कोई ऐसा मनुष्य भी होगा जो बिना परिश्रम अपना जीवन व्यतीत कर सकता हो। मनुष्य को चरम परम के सट्टा खाना, कपड़ा और रहने का स्थान वे उपाय किये नहीं मिल सकता इस को यह सब मुख्य अपने परिश्रम से प्राप्त करना और बनाना पड़ता है। भगवान ने जिस भाँति यह सब वस्तुएं इस के लिये आवश्यक बनाई हैं उसी प्रकार इस को उन के प्राप्त करने के लिये बुद्धि और बल भी दिया है। उस ने मनुष्य के



चित्त को ऐसा बनाया है कि उस से वे परिश्रम किये कभी रुका नहीं जा सकता। यदि निश्चय कर के देखो और परिश्रम के अर्थ भली भाँति समझो तो ऐसा एक मनुष्य भी न पाओगे जिसे किसी न किसी प्रकार का श्रम करना पड़ता हो। परिश्रम के अर्थ केवल बीधा उठाने या मिट्टी खोदने के नहीं हैं जैसा कि कितने लोग समझते हैं और इसी कारण से इस शब्द को छुपा के साथ बोलते हैं जैसे यदि कोई कहे कि यह लोग तो परिश्रम उत्थम करके अपना पेट भर लेते हैं या यह बेचारे तो परिश्रमी हैं तो तुरन्त सुननेवाले का ध्यान मोट ढोने वालों या मिट्टी खोदनेवालों या किसी और इसी प्रकार के लोगों की ओर दीड़ेगा। बहुतेरे श्रम करना केवल दुःख का कारण समझते हैं (सुख्य कर हिन्दुस्तान के धनिक) पर यह उन की समझ का फेर है। श्रम का परिणाम सदा अच्छा है।

श्रम दो प्रकार का होता है, एक तो वह जिस में हाथ पाँव हिलाना अर्थात् शरीर की शक्ति खर्च करनी पड़ती है और जिसे शारीरिक श्रम कहते हैं, दूसरा वह जिस में हाथ पाँव के हिलाने का कुछ काम नहीं पड़ता बल्कि केवल बुद्धि के दौड़ाने और खर्च करने की आवश्यकता होती है और इसी किये इस को प्रज्ञाश्रम कहते हैं। यह बड़े बड़े सुन्दर, विशाल राजगृह, बाग़ोचे, तालाब, जहाज़, रेल, तार, पुस्तकालय, पाठशालाएँ इत्यादि श्रम ही के फल हैं। इन में से कितने तो शारीरिक श्रम में और कितने बुद्धि श्रम और बहुतेरे दोनों को एक साथ काम में लाने से बने हैं। ऐसा भी नहीं है कि श्रम का परिणाम हर अवस्था में श्रम पूर्ण होने ही पर मिलता हो, बहुतेरे काम ऐसे हैं जिस में श्रम का सुख साथ साथ मिलता है जैसे कर्मरत (नियुक्त) करने के साथ साथ ही शरीर में कुरतो आती जाती है। बदन के हिलाने चलाने से क्या आराम मिलता इस की सुख्य कर छोटे बड़के सब जानते हैं जो दस मिनट भी एक स्थान पर निचले नहीं बैठ सकते—चलना, फिरना, दौड़ना, कूदना यही उन की प्रसन्नता का हेतु है। जो लोग अनन्तर सात घण्टे प्रतिदिन शारीरिक श्रम करते हैं उन की कुछ किये बिना एक दिन भी बिताना कठिन हो जाता है और कदाचित् कई दिन इसी प्रकार काटने पड़ें तो वह निष्पन्देह रोग ग्रसित हो जायें। जिन लोगों की शारीरिक श्रम करने का अवसर नहीं मिलता उन की डाक्टर लोग शरीर की कुरतो बनी रहने के लिये कर्मरत करने इलाखाने, शिकार खेलने की सन्मति

देते हैं । जैसे शरीर वे अम के खराब हो जाता है ठीक उसी भांति बुद्धि भी बिना काम में लाये मंद हो जाती है । बुद्धि का खेक ठीक तरवार का सा है कि जितना उस की मांजते और साफ करते रहो उतनी ही तीक्ष्ण बनी रहती है और आवश्यकता के समय काम देती है परन्तु जहाँ असावधान हुए मोर्चे ने उसे भा चौरा और उस की तीक्ष्णता को नष्ट कर दिया फिर कहीं आवश्यकता पड़ी तो धोखा खाया । इस लिये मनुष्य को चाहिये कि दोनों अमों को बराबर करता रहे और सदा इन के बढ़ाने का यत्न करे जिस से उस की उन्नति हो और संसार में नाम प्राप्त हो ।

## बदला लेना ।

( वेकन से )

बदला लेना एक प्रकार का असभ्य न्याय है जिस की रीक न्याय की उत्तनी ही करनी चाहिये जितनी की मनुष्य के चित्त उस की और फिरे क्योंकि जो मनुष्य पहले अपराध करता है वह केवल न्याय के विरुद्ध करता है परन्तु जो बदला लेता है वह न्याय की अपतिष्ठा करता है । सच तो यह है कि बदला लेने से मनुष्य अपने शत्रु के बराबर हो जाता है परन्तु ऐसा न करने से हम से कई अच्छी जड़ जाता है क्योंकि क्षमा करना बादशाहों का काम है । सुलैमान पैगम्बर जो अपने समय में बुद्धिमानी के लिये परम प्रसिद्ध थे उन का सिद्धान्त है कि अपराध क्षमा करना मनुष्य के लिये एक अभिमान की बात है । हर मनुष्य को चाहिये कि गई बीती बातों का ध्यान न करे क्योंकि जो बात हो जाती है वह पकट नहीं सकती अतः जो लोग बुद्धिमान हैं वह वर्तमान और भविष्य की बातों की ओर ध्यान करते हैं पर जो मूर्ख हैं वह पिछली बातों की भीकते रहते हैं ।

संसार में ऐसे कम लोग हैं जिन्हें व्यर्थ किसी की हानि करने में आनन्द प्राप्त होता है बल्कि हर मनुष्य अपने किसी मुख्य लाभ या प्रसन्नता या इसी प्रकार की दूसरी बातों के लिये दूसरों की दुःख पहुँचता है अतः यदि कोई मनुष्य अपने लाभ को देखे तो हम को उस से स्पष्ट होना न चाहिये । जो

जोग व्यर्थ किसी की हानि करते हैं उन की दशा कांटों की सी है जो सिवाय घाव करने के और कुछ नहीं कर सकते ।

हमारी ज्ञान उभी बात का बदला लेना उचित है जिस की रोक न्याय में न हो परन्तु बदला लेने में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बदला ऐसा हो जिस को न्याय के अनुसार दण्ड न मिल सके नहीं तो सत्रु को खूब बन भाएगो और उलटो पांति' गले पड़ेगी ।

कोई जोग मनु को जता कर बदला लेते हैं । यह उपाय बहुत उचित है क्योंकि इस से यह प्रकट है कि बदला लेने वाले का यह अभिप्राय नहीं है कि दूसरे को हानि पहुँचे बल्कि उन का यह अभीष्ट है कि वह मनुष्य अपने किये पर पछताए और पापी को किये ऐसा काम करने से रुके जिस का परिमाण उम के लिये बुरा है । परन्तु बहुत जोगी का चित्त इतना निकम्मा होता है कि वह धोखे में बदला लेते हैं जिस का प्रभाव तोर के भांति है । निर्दयो और घातक मित्रों के विषय भी एक प्रसिद्ध मनुष्य की यही राय है । उस का कथन है कि धर्म पुस्तकों में यह लिखा है कि शत्रुओं का अपराध क्षमा करो परन्तु मित्रों के लिये ऐसी आज्ञा नहीं है परन्तु एक दूसरे मनुष्य की यह सम्मति अधिक उत्तम है कि यदि मनुष्य ईश्वर से भलाई की आशा रखता है तो उसे बुराई से भी बचाव करना चाहिये ।

विचार करने से एक बात ठोकमाजूम होती है कि जो मनुष्य बदला लेने पर उधार खाए रहता है वह मानों अपने घाव को नया रखता है जो दूसरो की अवस्था में सुख जाता और उसे लाभ पहुँचता ।

जो जोग साधारण के लाभ के निमित्त बदला लेते हैं वह सब से अच्छे रहते हैं क्योंकि उन्हें हर मनुष्य अपना स्वतंत्र करने वाला समझता है जैसे कौसर रुम और फ्रान्स के गहनसाह तोसरे दिनरी के मारने वाले समझते थे परन्तु जो जोग निज लाभ के लिये बदला लेते हैं उन के विषय ऐसा ध्यान नहीं होता बल्कि उन से हर एक घृणा करता है ।

~~~~~

## राजनीति ।

छोड़े नर के घेठ में . कैसे बात समाय ।  
 बिनु सुवरन के पात्र के . बाधिन दूध नसाय ॥ १ ॥  
 भ्रष्ट आपनो चाहिये . पक्षक नैन की नाहिं ।  
 तनक भोज चख पर परें . वही पक्षक छड़ि जाहिं ॥ २ ॥  
 प्रजा पालिवो नृपन की . धर्म जगत के बीच ।  
 दया भाव के नीर सों . शीत बहुत धन सीच ॥ ३ ॥  
 सिंह नाग गजमत्त सब . बसी होत छिन माहिं ।  
 देखे सुने न जग बिषे . नृपति मीत कहुं नाहिं ॥ ४ ॥  
 गुप्त मंच जा नृपति की . रहै सदा मति धीर ।  
 ताके सर परिरचरण की . कहू नहीं है पीर ॥ ५ ॥  
 नृपति पास लघु नरन को . छिनक न चाहिये बाध ।  
 असत राहु जब चन्द की . होत तेज की नाथ ॥ ६ ॥  
 नीच नरन के संग सों . राज्य नष्ट हो जाय ।  
 जैसे उपजत कंडुवा . खेती सकल नसाय ॥ ७ ॥  
 गोविज गुरु गिरिराज की . सदा राखियो मान ।  
 तन मन धन अरु पान सों . करै नृपति सम्मान ॥ ८ ॥  
 न्याय करै नित नीति सों . निज नैनन सों देखि ।  
 भली बुरी सब छाणि कर . दंड दीजिये पेखि ॥ ९ ॥  
 कही सुनी नर कुटिल की . नहीं मानियो जोग ।  
 जिमि कुपत्य के कोजिये . बढै नितै प्रति रोग ॥ १० ॥  
 नृपति जो मंत्री हीन है . हीन राज हो जाय ।  
 बिना नीम छंचे सदन . जिमि छिन मांछि गिराय ॥ ११ ॥  
 नर कुलीन नोयति भली . ताहिं खेपिये काम ।  
 कहा गुलाम की साखि है . निसदिन करत हराम ॥ १२ ॥  
 सुरा पान पालस रमन . अति को भली न होत ।  
 ये सब नासत राज को . कह्यो कविन के गीत ॥ १३ ॥

## कविता ।

नखरा राह राह को नीको । इत सी प्रानि जात  
हैं तुव बिनु तुम न लखत दुख जीकी ॥ धाधहु  
बेग नाथ कसमा करि करहु मान मर्त कीकी ।  
हरीचन्द अठलानि पने को दियो तुमहि बिधि  
टाको ॥ १ ॥

खुटाई पोरहि पोर मरी । हमहि छांड़ि मधुषन  
में बैठे बरी कूर कूबरी । स्वारथ लोभी मुंह देखे  
की हमसी प्रीति करी । हरीचन्द वूजेन केहु के  
हाही हम निदरी ॥ २ ॥

चरित सब मिरदम नाथ तुम्हारे । देखि दुखी  
जब उठि किम धाधत लावत किस्सहि अवारे ॥  
माजी हम सब भाति पलित अति तुम इयाक  
तौ प्यारे । हरीचन्द ऐसिहि करनी ही तौ क्यों  
अधम उधारे ॥ ३ ॥

प्राभु हो ऐसी तो न बिसारो । कहत पुकारि  
नाथ तुव रुठे कहु न निबाह हमारे । जौ हम  
बुरे होइ नहि चूकत नितही करत बुराई । तो  
फिर भले होई तुम छांडत काहें नाथ भलाई ।  
जौ बालक असहाइ खेल में जनसी सुधि बिस-

रावै । तौ कहा माता ताहि कुपित है तादिन दूध  
न प्यावै ॥ मात पिता गुरु स्वामी राज ज्यो न  
छमा उर लखै । तौ सिसु सेवक प्रज्ज न कोइ  
विधि जग में निबह न पावै ॥ दयानिधान क्रमा-  
निधि केशव करुण भक्त भय हारी । नाथ व्याव  
तजतें ही बनि है हरीचन्द की बारी ॥ ४ ॥

नाथ तुम अपनी ओर निहासो । हमरी ओर न  
देखहु, प्यारे निज गुन गनन बिचारौ ॥ ज्यो  
छरते अब लौं जन औंखन अपने गुन बिसरई ।  
तौ तरते किमि अजामेल से प्राप्ति केहु मारई ॥  
अब लौं तो कबहुं नहि देख्यौ जग के औंखन  
प्यारे । तौ अब नाथ नई क्यों छनित जासहु  
बार हमारे ॥ तुव गुन छमा दया सों भेदे अप  
महि बड़े कष्टाई । तसों तारि लेहु मन्दनन्दन  
हरीचन्द को धाई ॥ ५ ॥

मेरी देखहु नाथ कुचाली । लोक बेद कोडन  
सों न्यारी हम निज रीति निक्काली ॥ जैसो कस  
करे जग में जो सो तैसो फल पावै । यह मर  
जाई मिटावन की नित घरे मम में आवै ॥ न्याय  
सहज गुन तुमरी जग के सब मसवारै मानै ॥

नाथ ठिठारि लखहु ताहि हम निहचय झूठे  
जानें ॥ पुन्यहि हेम हथकड़ी समझत तासीं मोहि  
बिस्वासा ॥ दुयानिधाम नाम की केवल प्रा  
हरिचन्दहि आसा ॥ ६ ॥

लाल यह नई निमाली चाल ॥ तुम तो ऐसे  
निठुर रहे नहि केसहुं प्रिया नंदलाल ॥ हमरिहि  
बारी और भिए कह तुम तो सहज दयाल ॥ हरी  
चन्द ऐसी नहि कीजै सरनागत प्रति पाक ॥ ७ ॥

अनीतैं कहौ कहां लैं सहिए ॥ जग व्योहारन  
देखि देखि कै कब लैं यह जिय दहिए ॥ तुम  
कछु ध्यानहि में नहि लाबत तो अब कासैं  
कहिए ॥ हरीचंद कहवाइ तुम्हारे मोन कहां लैं  
रहिए ॥ ८ ॥

अहो इत बूझन मोहि भुलायो ॥ कबहुं जगत  
के कबहुं स्वर्ग के स्वादन मोहि ललचायो ॥ मछें  
होइ किन लोइ हेम की पुन्य पाप दोउ घेरी ॥  
लोइ मूढ़ प्रणारथ स्वारथ नामहि में कछु फेरी ॥  
इम में भूलि कृपानिधि तुमरो चरन कमल बिस-  
रायो ॥ तीहि सों भटकत किन्हीं जगत में मोहक  
जतम गंवायो ॥ हाय हाय करि मोह छोड़ि कै

कबहुं न धीरजं धान्यौ । या जग जगती जोर  
अमिति में आबसु दिम सब जान्यो ॥ करहु कृपा  
करुनानिधि केशव जग के जाल छुड़ाई । दीन  
हीन हरिचंद दास को वेग लेहु अपनहि ॥ ९ ॥

दीन पैं काहें लाल खिस्याने । अपुनी दिसि  
देखहु करुनानिधि हम पैं कहा रिसाने ॥ माछर  
मारे हाथ जलहि इक कहत बात परमाने । महा  
तुच्छ हरिचन्द हीन सों नाहक भैंहहि ताने ॥ १० ॥

हमहु कबहुं सुख सों रहते । छांड़ि जाल सब  
निसि दिन मुख सों केवल कृष्णहि कहते ॥  
सदा मगन लीला अनुभव में दृग दोउ अविचल  
बहते । हरीचन्द्र घनस्याम विरह इक जग दुख  
तन सम दहते ॥ ११ ॥

कहो किमि छूटै नाथ सुभाव । प्रलय क्रोध अभि-  
मान मोह संग तन को बन्यो बनाव ॥ साहु में  
तुव माया सिर पैं औरहु करन कुदाव । हरीचन्द  
बिनु नाथ कृपा के नाहिन और उपाव ॥ १२ ॥

बेदन उलटी सबहि कही । स्वर्ग लोभ दे  
जगहि भुलायो दुनिया भूलि रही ॥ सुद्ध प्रेम तुव  
कहुं नहिं गायो जो स्तुति सार सही । हरीचन्द इन



के फन्दन परि तुव छवि जिय न गही ॥ १३ ॥

सूरता अपुनी सबै दुबाई ॥ हम से महा हीन  
किंकर सों करि के नाथ लराई । दयानिधान  
छमा सागर प्रभु विदित नाम कहवाई ॥ हमरे  
अघहि देखि तुम प्यारे कीरति तौन मिटाई ॥  
कबहुं न नाथ कृपा सों मेरे अघ ह्वे हैं अधिकाई ।  
तौं किन तारि हीन हरिचन्दहि भेटत जगत  
हंसाई ॥ १४ ॥

कुढ़त हम देखि देखि तुव रीतें । सब पै इकसी  
दया न राखत नई निकाली नीतें ॥ अजामेल  
पापी पै कीनी जौन कृपा करि प्रीतें । सो हरि-  
चन्द हमारी बारी कहां बिसारी जी तैं ॥ १५ ॥

बड़े की होत बड़ी सब बात । बड़ो क्रोध पुनि  
बड़ी दया हू तुम में नाथ लखात ॥ मोसे दीन  
हीन पै नहि तौ काहें कृपाति जनात । पै हरिचन्द  
दया इस उमड़े ढरतेहि बनिहै तात ॥ १६ ॥

हमारे जिय यह सालत बात । दयानिधान नाम  
तुव आछत हम ऐसेहि रहिजात ॥ और अधी  
तो सरत पाप करि यह स्मृति क्या सुनात ।  
हम में कौन कसर नंदनन्दन यह कछु नहि

जनात ॥ जहं लों सोचे सुने किये अघ यदि बदि  
संज्ञा प्राप्त । तउ न तरन को कारन दूजो हरि-  
चन्दहि न लखात ॥ १७ ॥

अहो हरि अपुने बिरदहि देखौ । जीवन की  
कसी करुनानिधि सपनेहुं जनि अवरेखौ ॥ कहं  
न बिबाह हमारे जौ तुम मम दोसन कहं पेखौ ।  
अवगुन अमित अपार तुम्हारे गोंद सकत नहि  
सेखौ ॥ करि करुना करुनामय माधव हरहु दुख-  
हि खखि भेखौ । हरीचन्द मम अवगुन तुव गुन  
दोउन को नहि लेखौ ॥ १८ ॥

करुना करि करुना कर बेगहि सुध लीजिए ।  
सहि न सकत जगत दाव तुरत दया कीजिए ।  
हमरे अवगुनहि नाथ सपनेहुं जिनि देखौ ॥ अपुनी  
दिसि भाननाथ प्यारे अवरेखौ । हम तो सब  
भंति हिन कुटिल कूर कामी । करत रहत धन  
जन के चरन की गुलामी ॥ महा पाप पुष्ट कुष्ट  
धरमहि नहि जनों । साधन नहि करत एक  
तुमहि सरन मानौ ॥ जैसे हैं तैसे तुव कुपती गति  
प्यारे । कोऊ बिधि सखि लेहु हम तो सतहि हरे ॥  
द्रुपदसुता अजामेल मज की सुधि कीजै । दीन

जानि हरीचंद बाहं पकरि लीजै ॥ १९ ॥

ओड़ को खोजि छाल लरिये । हम बकलनपें  
बिना बातही रोस नहीं करिये ॥ मधुसूदन हरि  
कंस निकंदन रावन हरम मुरारि । इन जंवाली की  
सुरत करो क्यों ठामत हमसों रारि ॥ मिथल  
कों बधि जस नहिं पैहौ सांची कहत कुपाल ।  
हरीचन्द ब्रजहीं पै इतने कहा खिस्यानेलाल २०॥

पियरे बहु विधि नाच नचायो । यह सहि  
जानि परी केहि सुख के बदले इतो दुखायो ॥  
ब्रज बसि कै सब लाज गंवाई घर घर चाल  
चलायो । हम कुल बधुन कलंकिनि कुलटा डगरै  
डगर कहायो ॥ हम जानी बदनामी दै हरि करि-  
हैं सब मन भायो । ताको फल यों उलझे दीन्से  
भलो निबाह निभायो ॥ ऐसी नहिं आसहि  
तुम सों जो तुम करि दिखरायो । हरीचंद जोहि  
मीत कह्यो सोई निठुर बैरि बनि आयो ॥ २१ ॥

जिनके देव गुबरधनधारा ते औरहि क्यों मारें  
हो । निरभय संदा रहत इनके बल जगत्तहि तन  
करि जानै हो ॥ देवी देव नाम नर मुनि बहु  
तिनहि नहि उर आने हो । हरीचंद मरजल निम

रक नित कृष्ण कृपा बल साने हो ॥ २२ ॥

हमारे ब्रज के सबस माधो । किन ब्रत जोग  
नेम जप संजम ब्या गोरी, तन साधो ॥ अष्ट  
सिद्धि निधि को सब कल यह न और  
असक्यो । हरीचन्द इनहीं के पद जुग प्रकज मन  
अलि बांधो ॥ २३ ॥  
पिय तोहि राखौंगी हिय में छिपावै देखन  
देहों काहु पियारे रहौंगी कंठ निज लाय ॥ पल  
की ओट होन नहिं देहों लूटौंगी सुख समुदाय ।  
हरीचन्द निधरक पाओंगी अधरामृतहि अधाय ॥ २४ ॥

तुम सम कौन गरीब नेवाज । तुम सांचे साहेब  
करुनानिधि पूरन जून मन काज ॥ सहि न सकत  
सखि दुखी दीन स्जन उठि धावत ब्रजराज ॥  
बिहबल होइ संवसत निज कर निज भक्तन के  
कोख ॥ स्वामी ठाकुर देव सांच तुम वृन्दावन  
महाराज । हरीचन्द तजि तुमहि और जे जांचत  
ते बिनु लाज ॥ २५ ॥

त्यों तो तेरे मुख पर वारी रे अखियन  
छों प्रेम पिया छवि तेरी लागत प्यारी रे ॥ तुम  
बिना कल न परत पिय प्यारे बिरह बेदना

भारी रे । हरीचन्द पिय गरे लगाओ पैयां परों  
गिरधारी रे ॥ २६ ॥

तुमरी भक्त बछलता सांची । कहत पुकारि  
कृपानिधि तुम बिनु और प्रभुन की प्रभुता  
कांची ॥ सुनत भक्त दुख रहि न सकत तुम बिनु  
धाएं एकहु छिन बांची । द्रवत दयानिधि आरत  
लखतहि सांच झूठ कलु लेना जांची ॥ दुखि  
देखि प्रह्लाद भक्त निज प्रगटे जग जैजै धुनि  
मांची । हरीचन्द गहि बांह उवाच्यो कीरति नटी  
दसहुं दिसि नांची ॥ २७ ॥

### मैथिली रामायण किष्किंधा काण्ड ।

लक्ष्मण सहित राम रण धीर . गेला पंपासर वर तीर ॥  
मन विस्मय जुत भेल तहि ठाम . सानुज प्रभु कयलनि विश्राम ॥  
एक कोश परि पुरित वारि . हंस प्रभृति खग बस जल चारि ॥  
ततय कृत्य कयलनि जल पान . पुनि उठि दुनु जन कयल प्रयान ॥  
ऋष्य मुक पर्वत लग गेल . कपि सृग्रीव मे देखइल भेल ॥  
गिरि शिखरस्थ बहत भय पाय . के ई थिक थि बुझल नहि जाय ॥  
बल्कल वस्त्र जटा शिर राज . बकइत तरु बन अछि की काज ॥  
धनुष बाण काग्वीर महान . की वृतांत न हो अनुमान ॥  
मंत्री चारि विचारिय मेत्र . अवइत छयि दुहु वीर स्वतंत्र ॥  
की दहु एतय पटायोल बाली . जयता हमर प्राण की घाली ॥  
जाउ निकट द्विज व्रति हनुमान . मायु असाधु कारु मन शान ॥

जो अनिष्ट बुझला मैं आव . जुगुनिहि तेहन जनायव भाव ॥  
 तखन पडायव राखव प्रान . से सुनि ततय गेला हनुमान ॥  
 लेलनि ब्राह्मण रूप बनाय . अति विनीत किछु कहल न जाय ॥  
 केछी दुहु जन पुरुष पुराण . तीनि लोक कर्ता भगवान ॥  
 ईश्वर लक्षण लक्षित वेप . माया मानुष रूप विशेष ॥  
 भूमि भार हारक अवतार . थिकहु दुहुँ जन परम उदार ॥  
 जगन्नाथ क्षत्री तन धयल . अम इत बन आनंदित कयल ॥  
 अँह नर नारायण नहि आन . हमरा यह न होइछ अनुमान ॥  
 प्रति पालक छी धर्मक सेतू . अयलहु यतय बुझल नहि हेतू ॥  
 से सुनि प्रभु लक्ष्मण सौ कहल . तखनुक समय उचित जे रहल ॥  
 ई ब्राह्मण छथि पंडित बेश . सुवचन रचन अशुद्ध न लेश ॥  
 ई कहि कै तनिकाँ दिश ताक . शुन बटु उत्तर देखी अहाँक ॥  
 दशरथ गृपक पुत्र हम राम . अनुज हमर छथि लक्ष्मण नाम ॥  
 पिता वचन दंडक बन आवि . भेल तेहन जे छल अछि भावि ॥  
 दंडक बन मैं बड दुख भेल . सीता काँ छल सौ हरि लेल ॥  
 तनिकाँ तकइत अयलहुं विप्र . केछी ककर कहू से विप्र ॥  
 श्याम गौर मुख पंकज हेरि . मे सुनि कहल से बटुफेरि ॥  
 छथि यहि गिरिपर ओ कपि राज . चारि मंत्रि वर तनिक समाज ॥  
 से सुग्रीव नाग गुण राशि . बालि कयल तनिकाँ बनबाशि ॥  
 संपति नारि जेठ भय हरल . सुग्रीवक शिर डाका पडल ॥  
 श्रद्धा मूक गिरि शापक भीति . एतय आवि नहि करथि भनीति ॥  
 मारुतपुत्र नाम हनुमान . सुग्रीवक छी मंत्रि प्रधान ॥  
 तनिकाँ संग प्रभु मैत्री करिय . मित्र मित्र मिलि आपद तारिय ॥  
 हम एखनहि घुरि जायव ततय . रुचि हो तौ चहु ओ छथि ततय ॥  
 कहल राम हम मैत्री करव . तनिक कष्ट समटा हम हरव ॥  
 प्रगट रूप बनि सभ किछु कहल . सुग्रीवक दुख जे सभ रहल ॥  
 हमरा कान्ध चहु दुहु भाय . सुग्रीवक लग देव पहुंचाय ॥  
 मारुत सुन तत कहलानि जेहन . सानुज राम कयल पुनि तेहन ॥  
 सुखर पथत उपर गेलाह . तरु छाया मैं प्रभु बैसलाह ॥

दोहा—पुल्ल चकित कपि राज, अवइत देखऊ मरुतसुत ।  
 मन हर्षित की आज, काज मनोरथ सिद्धि सन ॥  
 हाथ बोडि कहलनि हनुमान . छथि अनकूल विष्णु भगवान ।  
 मानस उघर परि हरु कपि राज . से प्रभु अयला अहक साज ॥  
 करू मितता होयन देरि . लयलहुँ अछि हम भाग्यहि फेरि ।  
 साक्षी अनल बनल रघु मित्र . कि कहब अदभुत राम चरित्र ॥  
 संक्षेपाहि कहलनि हनुमान . सानुज राम थिकाथि भगवान ।  
 निर्भय चलू मित्रता करिय . घालिक प्रवल गर्व सब हरिय ॥  
 अति हर्षित मन भेल कपीश . गेला जनय राम रघुजगदीश ।  
 वृक्षक शाखा लय कहूँ हाथ . देल ताहि बैशला रघुनाथ ॥  
 कुशल क्षेम बुझि बैशला संग . कहलनि लक्ष्मण सकल प्रसंग ।  
 शानि सुग्रीव राम सौँ कहल . करव सकल सब विधि हम टहल ॥  
 छथि सीता जौँ विधि जेहि देश . बहुत शीघ्र बुझि कहब संदेश ।  
 हयब सहाय शत्रु जय बेरि . एको कार्य करव नहि देरि ॥

## पृथ्वीराजरासौ ।

पृथ्वीराज जी का गुरु राम से सब प्रकार की  
 विद्या सीखना ।

दोहा—कोइक दिन गुरु राम पै , पढी सु विद्या अप्प ।  
 चवदसु विद्या चतुर वर , लई सीप षट लिप्यं ॥  
 छंद ॥ ७२९ ॥ रु० ॥ १७० ॥

पहरी ।

लिपि मिथ्य कुँअर प्रियिगाज राज । गुरु द्रोण पास सुत धम्म ताज ।  
 ॐ नमो सिद्धि प्रथमं पढाय । सब भाव भेद अप्पर बताय ॥७३०॥  
 दस पंच दिन अध्येन कीन । दस च्यारिसार सब सीप कीन ।  
 सीपी सु कला दस अष्ट च्यारि । तिन नाम कहत कवि अग्य सारि ७३१॥  
 गुरु गीत बात बाजित्र नृत्य । सोचक सु वाच्य सविचार नृत्य ।

मनि गंस लल बास्तुक विनोद । नैपथ विलास सुनि तत्त मोद ॥७३२॥  
 साकुल कला क्रीडन विसार । चित्रन सु जोग कवि चवत चार ।  
 कुमु मेघ कला जुत इन्द्र जाल । सुचि क्रम विहार आहार लाल ॥७३३॥  
 सीभग प्रयोग सुगंध वस्त । पुनरोक्त छंद वेदोक्त हस्त ।  
 बानिज वित्त भाषित देस । आवद्ध जुद्ध निर्जुद्ध सेस ॥७३४॥  
 वरसंत समय हस्ती तुरंग । नारी पुरुष्य पंपी विचंग ।  
 भू भू कटाछ सुल्लेख सत्य । वृष छत्र प्रण उत्तर विजल ॥७३५॥  
 मुभ साख कहै गनिकह पठन । लिपतव्य चित्र कविता वचन ।  
 व्याकृत कथा नाटक छंद । आवधान दरस अलंकार बंध ॥७३६॥  
 धानक सु कर्म मुग अर्थ जानि । मुर सरी कला बहुतरि बधान ।  
 छंद ॥ ७३७ ॥ रु० ३७१ ॥

दूहा—कला बहुतर करि कुसल, अति निबद्ध जिय जानि ।  
 हेत आदि जानन निपुन, चतुरासीत विग्यान ७३८ रु० ३७२

### अरिख ।

चतुरासीत विग्यानन जानन । भर मन मन आसंका भाजन ।  
 गतिहा बीर सदा मन मोदन । बहुतरि विचित्र छवीस विनोदन ॥७३९॥  
 दरसन श्रवन गीत वर वादी । नृत्य नृत्य पाठक पुनि आदी ।  
 लेखक वित्त बाज वक्तवनि । सख साख जुद्धाकर तत्त्वनि ॥७४०॥  
 जुद्ध गनित पंपी गज तुरगा । आपेटक दूतन जल डरगा ।  
 जंत्रन मंत्र महोद्य पत्रन । पुष्प कला फल कथा सु चित्रन ॥७४१॥  
 करन पदारथ आयुध कली । बलकरि सूत्रह तत्व पहेली ॥७४२॥  
 दूहा—कमल वदन रवि तेज कर, लष्यन संति बत्तीस ।  
 कल नित प्रति सीषत कला, आवध धरन छतीस । ७४ । ७७

### साटक ।

विद्या वंस विचार सत्य विनयन, सौच्यं समाधीनता ।  
 सन्मानं संस्थान सौष्य विजयं, सौजन्य सौभाग्यं ॥  
 संपूर्ण च सख्यः रूपं प्रसन्नं, चित्रं सदा चारनं ।



सांगीतं च सजोग चारु सकलं , विस्तारयन्ते कला ॥ ७४४ ॥ ७८ ॥

दूहा—गुन गरिष्ठ गौ विप्र प्राति , पूजक दान बरीस ।

सन्द आदि दै निपुन अति , सास्त्रह सत्तावीस ॥ ७४५ ॥ ३७९ ॥

श्लोक—संस्कृतं प्राकृतं चैव । अपभ्रंशः पिशाचिका ।

मागधी झूसेनी च । षट् भाषाश्चैव ज्ञायते ॥ ७४६ ॥ ३८० ॥

## सन्देह ।

[ बेकन से ]

मनुष्य के विचारों में सन्देह ऐसा है जैसा कि पक्षियों में चमगादर की सटा सांभ हो उड़ने लगती है । सच पृथ्वी तो इसे गोकना या यह न सही तो इसकी ओर से भली भांती सावधान रहना चाहिये क्योंकि यह चित्त को भ्रम की भांति टक लेता है, इस के कारण बहुत से दृष्ट मित्र कूट जाते हैं, मनुष्य के काम कान में भ्रमर आता है और काम जैसा कि चाहिये चक नहीं सकता । इसी के कारण से राजा अन्याय करने लगते हैं पति स्त्री की ओर से विमन हो जाते हैं और बुद्धिमान जतोज्ञाह और विद्वान् बन जाते हैं । यह दोष चित्त से नहीं बल्कि मस्तिष्क से सम्बन्ध रखता है क्योंकि यह ऐसे लोगों में भी पाया जाता है जो चित्त के बहुत दृढ़ होते हैं । इसका एक उदाहरण इंगलिस्तान के बादशाह सातवें दिनरो थे क्योंकि उसके बराबर संदेह करने वाला और उसी के साथ चित्त का दृढ़ मनुष्य उन के समय में दूसरा न था । परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि ऐसे लोगों को संदेह से कोई क्षति नहीं पहुँचती क्योंकि पहिले तो प्रायः वह उसे पास फँटकने नहीं देते और यदि दिया भी तो भली भांति जाँच कर कि उनका कुछ मार है या नहीं । इसके चिरुह डरपीक लोगों के चित्त पर संदेह का बहुत शीघ्र गुण होता है । संसार में किसी वस्तु से मनुष्य के चित्त में इतना अधिक संदेह नहीं उत्पन्न होता जितना कि उस बात के कम जानने से जिस के विषय संदेह हो अतः संदेह से कुटकारा पाने की प्रीति यही है कि उस के विषय में और अधिक जाने और अपने संदेह को को तो न रहने दे । अब मैं पूछता हूँ कि मनुष्य का अभिप्राय क्या है,

क्या वह यह विचार करता है कि जो भोग उस के नीकर खाकर है या जिन से उस को किसी प्रकार का संबंध है वह देवता है ? क्या वह नहीं जानता कि उन को भी अपने मनोरंज का ध्यान है और वह अपने तात्पर्य को अधिक देखते हैं। अतः मेरी समझ में संदेह को ठिकाने पर रखने का यही उपाय है कि जैसे सब मान के परन्तु इसी के साथ उसे झूठ की भांती गिने क्योंकि इस में यह लाभ है कि यदि मनुष्य का संदेह सब निकला तो वह पड़ने से कोई उपाय कर लेगा और इस में उस की कुछ हानि नहीं है।

संदेह जो आप से आप मन में उत्पन्न हो जाता है वह ऐसा है जैसे भड़ो की भिनभिनाहट का शब्द परन्तु जो संदेह दूसरे भोग चक्का लड़ाकर या चुगकी खा कर मनुष्य के चित्त में उत्पन्न कर देते हैं वह डंक की मृदु है। मेरी समझ में उत्तम उपाय संदेह से कुटकारा पाने का यह है कि जिस मनुष्य के विषय संदेह हो उस से स्पष्ट कह दे क्योंकि इस प्रकार से उसे अपने संदेह की सचाई झूठाई पड़ने की अपेक्षा अधिक प्रतीत हो जाती है। इस के बिना दूसरा मनुष्य भी सावधान हो जाता है और फिर कोई ऐसा काम नहीं करता जिस से तुम्हारे भी में संदेह उत्पन्न हो। परन्तु इस स्थान पर यह भी स्मरण रखना चाहिये कि नीच या दुष्ट मन के लोगों पर अपना संदेह कदापि न प्रकट करना चाहिये क्योंकि जहाँ एक बार उन को मालूम हुआ कि तुम को उन की ओर से किसी प्रकार का संदेह है तो फिर वह कभी तुम्हारे मित्र न रहेंगे। इटली वालों का सिद्धान्त है कि संदेह "धर्म की स्वतंत्रता देता है" मानो संदेह धर्म की मार्ग से जाने का पर्दाना दे देता है कि वह जहाँ चाहे चला जाय परन्तु इस के विपरीत संदेह के कारण से धर्म को और अधिक स्फूर्ति के साथ अपनी कार्यकारिता दिखलानी चाहिये।

## बैताल पच्चीसी ।

### सातवीं कहानी ।

फिर बैताल बोला कि ऐ राजा चंपापुर नाम एक नगर है वहाँ का राजा चंपकेश्वर और रानी का नाम सुकीचना और बेटी का नाम त्रिभुवन सुन्दरी थी पति सुन्दरी है जिस का सुख चन्द्रमा का बाह बटा से पाँखें खुल की थी

भवे धनुष सी नाक कीर की सी गन्धर कापीत का सा दाँत बनार केसे दाने  
 होठों की साओ कुंदरु की सी कमर सीते की सी हाथ पाँव कीमल कमल से  
 रंग चंपे का सा गरज उम की जीवन की ज्योति दिनबदिन बढ़तो थी जब वह  
 बालिका हुई तो राजा रानी अपने चित्त में चिन्ता करने लगे और देश २ के  
 राजा की खबर गई कि राजा चंपकेश्वर के घर में ऐसी कन्या पैदा हुई है जिस  
 के रूप को देखते ही सुर नर मुनि मोहित हो रहते हैं फिर मल्ल मल्ल के  
 राजा ने अपनी अपनी सूरतें लिखवा लिखवा ब्राह्मणों के हाथ राजा चंपकेश्वर  
 के यहां भेज दीं यहाँ से राजा ने अपनी बेटी को सब राजाओं को तसबीरें दिख-  
 वाई पर उस के मन में कोई न समाई तब तो राजा ने कहा तू स्वयंवर कर  
 वह बात भी उसे न मानी और अपने बाप से कहा कि रूप बल ज्ञान जिन  
 में ये तीनों गुण होंगे पिता उसे सुम्ने देना गरज जब कितने एक दिन बीते  
 तो चारों दिशा से चार बर आये फिर उनसे राजा ने कहा अपना अपना गुण  
 विद्या मेरे प्रांगे जाहिर कर कही उन में से एक बोला सुभ में यह विद्या है  
 कि एक कपड़ा में बना कर पाँच जाल की बेचता हूँ जब उस का मोल मेरे  
 हाथ आता है तब उस में से एक जाल ब्राह्मण को देता हूँ दूसरा देवता को  
 चढ़ाता हूँ तीसरा अपने गंग लगाता हूँ चौथा स्त्री के वास्ते रखता हूँ पाँचवें  
 को बेचकर रुपये ले नित भोजन करता हूँ यह विद्या दूसरा कोई नहीं जानता  
 और मेरा जो रूप है सो जाहिर है दूसरा बोला मैं जल यज्ञ की पत्नी की भाषा  
 जानता हूँ मेरे बल का दूसरा नहीं और सुन्दरताई मेरी आप की प्रांगे है  
 तीसरे ने कहा मैं ऐसा शास्त्र समझता हूँ कि मेरे समान दूसरा नहीं और खूब-  
 मूरती मेरी तुम्हारे कबूट है चौथे ने कहा मैं शस्त्र विद्या में एक हूँ दूसरा  
 सुभ सा नहीं शब्द बेधो तो मारता हूँ और मेरा रूप जग में रौशन है आप  
 भी देखते हो है यह चारों की बात सुन राजा अपने जो में चिन्ता करने लगा  
 कि चारों गुण में बराबर हैं किसे कन्या दूँ यह शीघ्र कर उस ने बेटी के पास  
 जा चारों का गुण बयान किया और कहा मैं तुम्हें किसे दूँ यह सुन यह जाल  
 को मारी नीचो गई न कर चुग हो रही और कुछ जबाब न दिया इतनी बात  
 कहि बैठा ज बोला ऐ राजा विक्रम यह स्त्री किस के योग्य है राजा ने कहा  
 जो कपड़ा बना कर बेचता है सो जात का गूढ़ है और जो भाषा जानता है  
 वह जात का वैश्य है जो शास्त्र पढ़ा है सो ब्राह्मण है और शब्दबेधी उस का  
 मुज्जाती है यह स्त्री उस के सायक है इतनी बात सुन बैठा फिर उसी पिक  
 में जड़ लटक और राजा भी वहाँ जा उसे बाँध कंठ पर रख कर ले चला।

## भूगोल हस्तामलक ।

हिन्दुस्तान—वनस्पति ।

अब सोचना चाहिये कि जिस देश में इतनी नदियां बहती हैं और पानी की ऐसी इफ़रात है फिर क़मीन उपजाऊ और उर्वरा क्यों न हो और यही कारण है कि जो इस देश को धरती का शस्यजनक और बहुफलक होना सारे संसार में प्रख्यात हो गया वरन और उपजाऊ देशों का इसे उपमा ठहराया यहां सात में दो फ़सल और कहीं तीन तीन फ़सल भी काटते हैं और ऐसी विरली वस्तु है कि जो यहां पैदा नहीं बर्फ़िस्तान और रंगिस्तान मैदान और कोहिस्तान समुद्र से निकट और समुद्र से दूर गर्म और सर्द खुशक और तर मब तंग्रि को सुक़्ती के अन्न फल फूल और औषधि यहाँ मौजूद हैं मनुष्य को सामर्थ्य नहीं जो यहां के जंगल पहाड़ों को जड़ो बूटियों का सारा भेद जान लेवे या जितने प्रकार के वृक्ष उन में होते हैं सब को गिनती करे केवल वे सब, कि जो सदा हम मीनों के काम में आते हैं उन के नाम नीचे लिखे जाते हैं खेत में यहाँ जव गेहूँ चावल चना ज्वार बाजरा मूंग मोठ मक्की उर्द मसूर मटर कीदी किराय अरहर मरुआ तिल तोसो राई मरसी ज़ोरा मौफ़ अजवायन धनियां काहू कामनी मेथी केगनी सांवा चैना कोलथ बाथू फाफरा ग्वा भांड डलदो सन तम्बाकू मजोठ मिरचा कुसुम कपास पोस्त नोन जख क सर कचूर रेडी अरबी अकरकंद ज़मीकंद रतानू बंडा खीरा ककड़ी तुंग्रि आगिये कदू कीउड़ा पेठा तख्मूज खव्वूजा भिंडी बोडा सेम चालू गोभो पल्लवण करेला मूली गाजर शलगुम पथाज लहसन हांग चुकन्दर आदीचक बैंगन, और बाग़ और जङ्गल पहाड़ में सेब नाशपाती बिही गिलास बादाम पिस्ता अंगूर चालूचा चालूबुखारा आहदाना अफ़तानू अहतून जर्दचालू अख़रोट आम अमरुद अनार आमला कोला सन्तरा जामुन गुलाबजामुन कोकट जीची फालसा खिरनी केला कमरख अंजीर अरीफ़ा नीबू चकीरता अनजास पपीथा कटहल बटन करौंदा हर्ड बहेड़ा बेर बेन इस्तावरी मकी रसभगे कैफ़क ताड़ खजूर नारियल सुपारी तेजपात छोटी बड़ी इलायची जायफल जायची दारचीनी कड़वा सागू चन्दन रक्तचन्दन कालीमिर्च कवाच-चीनी कपूर जटामांसी अगार गुग्गूर धूप लोधान सुसव्वर सागौन सात बीसों तुन लोम हसली महुआ कीकर पाकर खैर तीखुर चिरौंजा पलास रोठा सेमक

बहु पीयूष कदम्ब काचनार कैत आमड़ा जलपाई अमकतास सीकसरि चम्पा  
हरिहर चोक चिकगोका कोको कायक रोबान मयस देवदार ककड़ मकड़  
भीजपच वेदसुम्ब चनार रुफिदा सर्व बांस बैत नर्मट कुय ककम दून कनकम  
चाय हिमदी भांग धतूरा पान टोटी फोक करीक चाक भड़ुनेडी, पुष्पवर्मिये  
में गुलाब केवड़ा बेला चंदेको जाही जूही सेवती मदनबान मोगरा रागवैक  
नर्मिस सुगन्धरा सेवती सोसन गेंदा गुलदाउदी गुलम्याहंदी गुलदुपहरिया  
गुलचुआम गुलखैर कटकन भूमका इमरैसिस छेलिया, पीर घानी में कामका  
कमोदनी मखाना मोला सिंचाड़ा केसरदल्यादि बहुतायत से होती है। सिंघाय  
इन के बहुत से फल फूल के हल्ल अथ, इंगरेज लोगों ने दूसरे सुन्की से काकर  
इस देश में लगाए हैं और आगते जाते हैं कि जिन का हिन्दी में नामही  
नहीं मिलता। छाकतर वालिच साहिब ने चार सौ छप्पन प्रकार की ककड़ी  
(जिन से यहां काठ की चीजें बनती हैं) इकट्ठी की थीं सहारनपुर में सकारी  
बाम के दर्मियान पांच इक्कार किछ से ज़ियादः और कककसे में सकारी  
बाम के दर्मियान ( जिस का घेरा प्रायः तीन कोस का होवेगा ) दस इक्कार  
किछ से अधिक हल्ल बोद्ध लगाए हैं और छाकतर पैट साहिब केवल  
मन्दराज हाते से लाख किछ से ऊपर पेड़ बूटे इकट्ठे कर के इंगलिस्तान को भे  
जए। गीहू नागपुर का प्रसिद्ध है चावल बाड़े का सा ( जो पिशीर के किछे  
में है ) कहीं नहीं होता पुनाव बहुत सुखाद और सौमन्ध बनता है सेर भर  
चावल सेर ही भर को सोसता है और फूल कर चार सेर की बराबर हो  
जाता। चैना कीलथ बाधू फाफरा ये चारों पदना किछ के अन्न केवल हिम  
अय के पहाड़ी देशों में होते हैं और रम्भो दक्षिण के पहाड़ों में। तम्बाकू  
निकसा सा कहीं नहीं होता, इस पेड़ का यहां पहली कोई नाम भी नहीं  
जानता था, जहांगीर बादशाह के इश्टहार से जिस का जिकर उस गे अपनी  
किताब में लिखा है मालूम होता है कि यह काम की चीज पहली ही पहल  
उस के अथवा उस के बाप अकबर के समय में फ़ारसी लोग अमेरिका से आए।  
अब तो इतनी फैल गई कि लोगों को इस बात का निश्चय आना भी कठिन  
है कपास यद्यपि अमेरिका में भी होता है, परन्तु पुराने महाद्वीप के सब  
सुन्की में इसी भारतवर्ष के फ़ैली। निकन्दर जब सतलज तक आया था तो  
उस के साथ बाबों ने कपास के पेड़ देखकर बहु आश्चर्य माना, और अपनी  
किताब में उसका नाम ऊन का पेड़ लिखा, और उस की यह टीका की

कि यूनान में जो ऊन भेड़ियों की पीठ पर जमता है वह हिन्दुस्तान में पेड़ों के बीच जमता है, बेचारी न रुई पकड़ने कभी न देखो यो, केवल पोस्तों और ऊनी वस्त्र पहनते थे। यहाँ रुई मालवे के दर्भियाग बहुत पैदा होती है। पोस्त जिस से अफ़ग़ान निकलती है मालवे में बहुत होता है, और वहाँ की अफ़ग़ान अव्वल फ़िस्र की गिनी जाती है, सिवाय इस के बनारस और घटना के पास पास भी बोया जाता है। नील तिरहुत में बहुत होता है। ऊन इसी जगह से बहुत बिलायती में फैली है। पुराने यूनानियों ने इस सुल्क की चायनी खाकर बड़ा आश्चर्य माना, और किताबों में लिखा कि हिन्दुस्तान के आदमी भी मक्खियों की तरह पेड़ों के रस से ग्रहद बनाते हैं। केसर की खेती कश्मीर के पामपुर परगने मात्र में होती है, और कहीं नहीं जमती, वहाँ केसर ऊँची ज़मीन पर बोते हैं जिस में पानी बिल्कुल न ठहरे और सौंघने कभी नहीं, जड़ उस की पयाज़ के गट्टे की तरह होती है, और वही गट्टे बोए जाते हैं पेड़ और पत्ते उस के कुशवास से मिलते हैं, और फूल ऊँचे रङ्ग का द्वार कातिक में खिलता है, उसी फूल के भीतर पीली पीली यह केसर रहती है। कश्मीर में केसर पंद्रह रुपये सेर मिलती है, और चाकिम पचास हजार रुपये को पैदा होती है। तर्बूज मधुरता में इलाहाबाद का प्रसिद्ध है, और खर्बूजे जमालीआगर के। आलू और गोभी भी हिन्दुस्तान की तरकारी नहीं है, तम्बाकू की तरह अमेरिका से आगई। गलगूम मुठान में बहुत बड़ा और मोठा होता है। पयाज़ बंबई का प्रसिद्ध है। हींग का पेड़ सिन्धु और मुलतान की तरफ़ होता है। सेब नाशपाती बिही गिलास बादाम पिस्ता अंगूर सालूचा आलूबुखारा शहदाना अफ़तानू शहतूत ज़र्दालू अख-रोट ये सब कश्मीर में बहुत अच्छे और कई प्रकार के होते हैं, और हिमालय तटस्थ दूसरे ठंडे सुल्कों में भी मिलते हैं, पर गिलास कश्मीर के सिवाय और कहीं नहीं होता बहुत नाजुक और वहाँ के मेवों का सद्गार है, फ़सल उस की पन्द्रह बीसरोज़ से अधिक नहीं रहती, सबन के महीने में फलता है। अङ्गूर कश्मीर में किश्मिश बहुत अच्छा होता है, बीज बिल्कुल नहीं गुच्छे का गुच्छा शर्वन की घाट की तरफ़ निगलजाओ, पर कनावर सा इस बिलायत में कहीं नहीं होता, गुच्छे और दाने भी बहुत बड़े और भीठे होते हैं और वहाँ सब्जें भी इतने कि चार पैसे को एक आदमी का भोजन ले लो। अफ़-ताल चक्के से बहुत दूसरी जगह नहीं फलता। आम बम्बई के बराबर

कहीं नहीं होता, पर बनारस और मानदह का भी बहुत प्रसिद्ध है, इस सुल्फ का खाम मेवा है, दूसरी बिनायत में नहीं मिलता, और दुनिया की सब मेवों का सिरताक है, इस का नाम अमृतफल लोगों ने बहुत ठीक रखा, अमृत भी उस से अधिक सुखाद न होगा, बड़े आम सेर सेर में भी ऊपर वजन में उतरते हैं। आमला और अमरुद बनारस में बहुत तुहफा होता है। कीला बिलहट मा उमदा और मोठा कहीं नहीं पाया जाता, और वहाँ इस के जंगल के जंगल खड़े हैं, रुपये के हजार हजार तक विकते हैं। कटहल इतना बड़ा होता है कि शायद ऐसे वैसे कमजोर आदमी से तो उठ भी न सके। इस्तावरी मको रसमरी और कायफल उत्तराखण्ड के देशों में अच्छे होते हैं। इड़ बिलासपुर की मशहूर है, पर सूखी हुई दो तोले से भारी नहीं होती। ताड़ दक्षिणपार्श्व घाट में इतने बड़े होते हैं कि उस के दो तीन पत्ते से छप्पर छाजावे। नारियल और सुपारी समुद्र के तटस्थ देशों में जमते हैं दूर नहीं होते। तेजपात इलायची जायफल जावची द्वारचीनी कड़वा सागू चन्दन रक्तचंदन और काकीमिर्च के दरख्त दक्षिणदेश में विशेष करके तुलव केरल कच्छी और त्रिवाङ्गोडू के दर्मियान होते हैं। तेजपात और बड़ी इलायची नयपान में भी इफ़रात में उगती है। सागू के दरख्त की टहनिया काट कर उन्हें पानी में कूटते भिगाते और धोते हैं, उन का जो सत निकलता है उसी को चकनी में गर्म तर्बों पर चासते हैं, वह भुन कर दाने दाने सा हो जाता है और सागूदाने के नाम से विकता है। चन्दन और रक्तचंदन के पेड़ वहाँ पश्चिमघाट में मलयागिर पर बहुत हैं, चंदन में जो वस्तु रहे उस में कहते हैं कि कोड़ा और मोर्चा नहीं लगता, इसलिये हथियार इत्यादि चीजों के रखने के लिये जिस में मोर्चा अथवा कोड़ा लगने का डर है अमीर लोग चंदन के संदूक बनवाते हैं। पथरीली धरती में चंदन के पेड़ अच्छे होते हैं, और सब से अधिक उत्तम चंदन उन पेड़ों में उस स्थान का है जो धरती के नीचे और जड़ों से ऊपर रहता है, और जिस का रंग खूब गहरा होता है। चंदन काट कर महीने दो महीने तक वहाँ मिट्टी में दाब रखते हैं, जिससे उससे यह है कि ऊपर का छिलका जो नाकारा होता है बिलकुल दीमक खा लेती हैं, और खुशबू गूदा बिलकुल बाकी रह जाता है। काकीमिर्च आशाम में भी होते हैं, और कपूर का दरख्त मनीपूर में जमता है। अगर बिलहट के ककल में और गुग्गुलु अर्थात् गुग्गुलु सिंध में होता है। गोवान के पेड़ त्रिवा-

कोड़ में और सुसज्ज की दस्तक कागड़े में बहुतायत से हैं। सागौन की ककड़ी के जहाज बनते हैं, इस लिये बड़े बड़े काम की चीज है, यह जहाज बहुतो पश्चिमघाट पर और पश्चिमगंग में समुद्र के निकट होता है। और बाक जिसका हरिद्वार के पास पहाड़ की तराई में बड़ा भारी जंगल है पक्षर इमारत के काम में आता है। और तीसुर चिरींगो बहुतो बिल्व के पहाड़ में और चीक चिलमोका, अर्थात् नेवला, केको कायल रोवान बरास देवदार ककड़ मकड़ भोजपत्र हिमालय के पर्वत में होते हैं। चीक का गोंद बिलोका और तेक तारपीन कहलाता है, पहाड़ी भोग मशाल और बत्ती की जगह रात की उभी की ककड़ी जलाते हैं। केको कायल और देवदार ये तीनों संगोबर की किल्ल हैं, और सब सवासौ हाथ से भी अधिक ऊँचे होते हैं। बाक की पंखीको में भीक कहते हैं। परास के फूल लाल लाल बहुत बड़े और सुहावने होते हैं भोजपत्र उभी जगह होता है जहाँ से बर्जिस्तान का पारग है, बारह हजार फुट से नीचे कदापि नहीं उगता। वेदसुशक बनार और सफेदा ये कश्मीर के हज हैं, वेदसुशक से केबड़े की तरह पर्क निकालते हैं, यह केबड़े से भी अधिक गुण रखता है। वेत पश्चिमघाट के पहाड़ों में २२५ फुट तक लंबा होता है। चाय के पेड़ सब सर्कार की आज्ञानुसार देहरादून और कागड़े के पहाड़ों में लगने लगे हैं, पहले चाय चीन के सिंगाय और कबो नहीं होती थी, पर अब जान पड़ता है कि इन उत्तराखण्ड के पर्वतों में भी वैसी ही हो जायगी। सर्कार ने इस बात के लिये बहुत रुपया खर्च किया है; और सब की तयारी के लिये चीन से बुलाकर वहाँ के आदमी नीकर रखे हैं क्योंकि जब पेड़ से पत्ते तोड़ते हैं तो उन की आग पर गर्म कर के हाथों से मसलने में बड़ी चतुराई चाहिये, कई बार उन की आग पर सेकना पड़ता है और कई बार हाथों से मसलना, अपनाड़ो आदमी से यह काम कभी नहीं बन पड़ता, आशाम के जिले में भी बोई जातो है। पान इस सुख की तुलना चीजों में गिना जाता है, वरन यह भी एक रत्न कहलाता है। मखाना पुरनिया के तालाबों में फलता है। गुलाब गाज़ीपुर और अजमेर में बहुत होता है, और चंबेली जोनपुर और बाढ़ में। पर सब से अधिक आश्चर्य का पेड़ हिंदुस्तान में बड़ है कि जिस की पंखला दूसरे बिनायत वालों ने अपनी कितानों में बहुत ही लिखी है, जिस किसी स्थान में जल के समीप कोई पुराना बड़ रहता है और उस पर मोर और बन्दर नाचते कदते हैं अतिरम्य और सुहावना होता



है और उन को बहुत मो टहनियां जो धरती में जड़ पकड़ती हैं मानी  
होना और बारहदरियां बन जाते हैं, एक बड़ का पेड़ जिसे लोग तीस हजार  
बरस का पुराना बतलाते हैं, नर्मदा नदी के किनारे भड़ौच के पास इतना  
बड़ा है कि जिस के नीचे सात हजार आदमी अच्छी तरह आराम से देरा  
कर सकें, उसका घेरा प्रायः चौदह सौ हाथ का होवेगा, और उसको टह-  
नियां जो धरती में जड़ पकड़ गई है तीन हजार से कम नहीं। नाम उसका  
वहां वाले कबीर बड़ कहते हैं। मिवाय इस के ऊपर से पश्चिम जहां सरयू  
गंगा से मिलती है मझी नाम बस्ती के पास एक बड़ का पेड़ इतना बड़ा  
है कि जिस की छाया गर्मियों में दो पहर के समय १२०० फुट के घेरे में  
पड़ती है ।

## विद्या ।

विद्या को जड़ यही मुल्क है. इसी मुल्क से विद्या निकली थी, सब से  
पहले इसी मुल्क के आदमियों ने विद्या अभ्यास में चित्त लगाया, और यहां  
के पण्डित सदा से नामो और ज्ञानो और अन्य सब देशियों के मान्य और  
शिरोमणि रहे । मिसर और यूनानवाले जिन्होंने सारे फ़ारंगिस्तान को  
आदमी बनाया, अपने बड़े पण्डितों के हाथ में खड़ी लिखते हैं कि वे हिन्दु-  
स्तान से विद्या सीख आए, मिकन्दर इतना बड़ा बादशाह जिस की सभा में  
अरस्तू—ऐसे बड़े बड़े योग्य यूनानो पण्डित मौजूद थे, इस देश से एक पण्डित  
को जिसका नाम वहां वालों ने कलन लिखे हैं और अरब में कल्लान मालूम  
होता है, बड़ी खुशामद से अपने साथ ले गया था, उस समय उस के साथ  
यहां से कोई बड़ा पण्डित तो काई को गया होगा, किसी ऐसे वैसे ही ने यह  
बात कबूत को होगी, पर यूनान वाले उस की प्रशंसा यों लिखते हैं कि  
कितने दिन वह मिकन्दर के पास रहा, उस ने अपने ज्ञान में जरा भी फ़र्क  
न आने दिया, और अच्छी तरह हिन्द का धर्म निवाहा, और जब बहुत बड़ा  
हुपा तो उन सब के सामने तुषानक करके अपने आप लक गया । ईरान की  
प्रतापो बादशाह बहराम ने यहां से गवैसे बुलवाये थे, मान विद्या अब तक  
भी हिन्दुस्तान की दूसरी जगह नहीं है । बग़दाद के बड़े खलीफ़ा मामू ने  
वहां से वैद संग्रहण की, और सदा उन्हीं वैदों को देना खाता था, ईरान भी

एक देश में आत्मतत्त्व ज्योतिष गणित भूगोल खगोल इतिहास नीति व्याकरण काव्य अलङ्कार न्याय नाटक मिला वैद्यक शास्त्र गान अष्ट गज इत्यादि सब विद्या को अच्छे अच्छे मौजूद थे, परंतु सुमलमानी ने अपनी अमलदारी में हिन्दुओं के शास्त्र नष्ट कर दिये और फिर राज्य भ्रष्ट होने के कारण इन विद्या की चाह न रहने से घटते घटते उन का पढ़ना पढ़ाना ऐसा घट गया कि अब तो कोई अन्य भी यदि हाथ लग जाता है तो उस का पढ़ाने और समझाने वाला नहीं मिलता। सुमलमन बादशाहों के समय में लोग फ़ारसी अरबी सीखते रहे, अब इन दिनों में अंगरेज़ी विद्या ने उन्नति पाई है, सरकार ने हिन्दुस्तानियों का हित विचार उनके पढ़ने के लिये जगह जगह पर मदरसे और पाठशाला बैठा दिये हैं, और दिन पर दिन नये बैठते जाते हैं, उमेद है कि इस अंगरेज़ी भाषा के द्वारा फिर भी हमारे देशवासी सब विद्याओं में निपुण हो जावें, और जो सब नई नई बातें फ़ारंगिस्तान वालों ने अपनी बुद्धि के बल से निकाली और निर्णय की है उन से बड़े फ़ायदे उठावें।

## कविता ।

यह रहीम सब संग लै, उपजत नाहिन कोय !  
 वैर प्रीति अभ्यास यश, होत होतही होय ॥  
 निजकर किया रहीमकहि, सुधि भावी के हाथ ।  
 पांसे अपने हाथ मे, दांव न अपने हाथ ॥  
 रूप कथा पद चारूपट, कंचन दूबा लाल ।  
 ज्यों अनिरखतसूक्ष्मगति, मोल रहीम बिसाल ॥  
 बडन कोऊ जो घट कहे, नहि रहीम घट जाहिं ।  
 गिरधर मुरली धर कहे, कछु दुख पावत नाहिं ॥  
 ज्यों रहीम सुख होत है, बड़े आपने गोत ।

त्यों बडडी अखियांन लख, अखियन को सुख देत ॥  
 शसीकीसुखदजो चांदनी, सुन्दर सबै सुहात ।  
 लगी चोर चित जो लटी, घटत रहीम निकात ॥  
 शसीसकोचसाहससलिल, साजे नेह रहीम ।  
 बढत बढत बढ जात है, घटे न तिनिकी सीम ॥  
 ये रहीम बुधि बड़न की, घटि को डारत काढ़ ।  
 चन्द कूबरो दूबरो, तऊ नखत सों बाढ़ ॥  
 बड़े दीन के दुख सुने, होत दया उर आन ।  
 हरि हाथी सो कब हुती, कहु रहीम पहचान ॥  
 कहि रहीम नहि लेत है, रहो विषय लपटाय ।  
 घासचरै पशु आप ते, गुर लोलाये खाय ॥  
 रहिमन राज सराहिये, जो बिधु के बिधि होय ।  
 रवि को कहा सराहिये, जो उगे तरैयां खोय ॥  
 दुर दिन परे रहीम प्रभु, दुर थल जैये भाग ।  
 जैसे जैयत घूर पर, जवघर लागत आग ॥  
 क्षमाबड़न कों उचित है, ओछन को उत्पात ।  
 कहु रहीम प्रभु का घट्यो, जो भृगु मारीलात ॥  
 जो गरीब सों हितकरैं, धन रहीम वे लोग ।  
 कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण मिताई जोग ॥  
 कुंटिलन संग रहीम बसि, साधुबचौती नाहि ।

मैना सेना करत हैं, उरज मरोरे जाहि ॥  
 मनहिलगाय रहीम प्रभु, करि देखहि जो कोय ।  
 नर को बिस करिबे कहा, नारायण बसहोय ॥  
 कमला यहन रहीम थिर, सांच कहत सब कोय ।  
 पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चञ्चला होय ॥  
 रहिमन अंसुआवाहिरे, बिथा जनाबत हेय ।  
 जाको घर से काढ़िये, क्यों न भेद कहिदेय ॥  
 जाय समानी अब्धि में, गंग नाम भयो धीम ।  
 काकी महिमा ना घटी, पर घर गये रहीम ॥  
 बढ़त रहीम धनाढ्य धन, धनै धनी को जात ।  
 घटै बढ़े तिनको कहा, भीख मांग जो खात ॥  
 गुन ते लेत रहीम कहि, सलिल कूप तें काढ़ ।  
 काहु को हिय होयगो, कहा कूप तें बाढ़ ॥  
 रहिमन कहत जो पेट सों, तून भयौ किन पीठ ।  
 भूखे मान घटावही, भरे डिगावे डीठ ॥  
 मनसिज माली को उपज, कहि रहीम नहि जाय ।  
 फलश्यामा के उर लगे, फूलश्याम उर आय ॥  
 जिनरहीम तन मन लियो, कियो हिये मे भौन ।  
 तासों सुख दुख कहन की, रही कथा अब कौन ॥  
 धरनी की सी रीति है, शीत धूप घन मेह ।

तेसेही सुख दुख सहै , कहै रहीम यह देह ॥  
 नहि रहीम कछु रुपरंग , नहि मृगया अचुराण ॥  
 देशी स्वान जो बांधिये , भवन भूसने लाग ॥  
 आपु सदा बेकाम के , शाखा दल फल फूल ।  
 रोकत जाय रहीम कह , औरन के फल फूल ॥  
 बड़े जो छोटन सों बधैं , कह रहीम यह लेख ।  
 सहसन के हय बांधिये , लै कौड़ी की मेख ॥  
 जो रहीम करबो हुतो , आगे यही हवाल ।  
 काहे को नख पर धरो , गोबरधन गोपाल ॥  
 खाक चढ़ावत सीस पर , कहु रहीम केहि काज ।  
 जेहिरजरिख पतनी तरौ , सों दूढ़त गजराज ॥  
 जो रहीम भाबी कहूं , होती अपने हाथ ।  
 राम न जाते हिरन संग , सीता रावन साथ ॥  
 हित अनहित सब कोइ कहै , की सलाम की राम ।  
 हित रहीम तब जानिये , जेहि दिन अटकै काम ॥  
 यारी छोड़ी यार ने , वे रहिम अब नाहि ।  
 अब रहीम दर दर फिरैं , मांग मधुकरी खाहि ॥  
 जो रहीम गति दीपकौ , कुल कपूत की सोय ।  
 बारे उंजियारो करे , बहै अन्धरो होय ॥  
 जगत जाही किरन सों , अथवति ताही कान्छि ।

त्यों रहीम दुख सुख सबै, बढ़त एकही भांति ॥  
 जो रहीम छोटे बढें , बढ़त करें उत्पात ।  
 प्यादे से फरजी भया , कितिरछे तिरछे जात ॥  
 गति रहीम बड़ नरन को , ज्यों तुरंग व्योहार ।  
 दागदिवात आपने , सही होत असवार ॥  
 त्यों रहीम तन हाट में , मनुआ गयो बिकाय ।  
 त्यों जल में काया परे , छाया भीतर नाय ॥  
 संपत भरम गवांइ के , तहां बसे कुछ नाहिं ।  
 ज्यों रहीम शसि रहत है , दिवस अकासै माहिं ॥  
 संपत संपत मान की , सब कोई सब देय ।  
 दीन बन्धु बिन दीन की , को रहीम सुध लेय ॥  
 दीनहि सब कहं लखत है , दीन लखत नहि कोय ।  
 जो रहीम दीनहि लखत , दीन बन्धु सम होय ॥  
 ये न रहीम सराहिये , देन लेन की प्रीति ।  
 प्रानन बाजी राखिये , हार होय की जीत ॥  
 हरि रहीम ऐसी करी , ज्यों कमान सर पूर ।  
 खेंच आपनी ओर की , डारिदियो पुनि दूर ॥  
 अब रहीम चुप करिरहो , समझ दिनन को फेर ।  
 अब दिननी के आइ हैं , बनत न लागी देर ॥  
 दुर्दिन परे रहीम प्रभु , सबै लेय घहिचान ।

सोच नहीं धन हानि को, होत बड़ो हित हान ॥

बीरठा ।

रहिमन पुतरी श्याम, मनहुं जलज मधुकर लसे ।  
मानहु सालिगराम , रूपे के अरघा धरे ॥  
रहिमन हमें न सुहाय, अमी पिआवत मान बिन ।  
जो विष देय बुलाय , प्रेम सहित मरिबो भलो ॥

दीया ।

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग ।  
चंदन विष व्यापत नहीं, लपिटे रहत भुजंग ॥  
सर सूखें पच्छी उड़ें , औरै सरन समाहि ।  
दीन मीन बिन पच्छ के, कहु रहीम कहं जाहि ॥  
कहु रहीम कैसे निभै , बेर केर को संग ।  
बे डोलत रस आपने , उन के फाटत अंग ॥  
जो रहीम ओछो बढे , तौ तितही इतराय ।  
प्यादे से फरजी भयो , टेंढो टेंढो जाय ॥  
खीरा को मुंह काटि के , मलियत लोन लगाय ।  
रहिम न करुयें मुखन की, चाहिये यहि सजाय ॥  
नैन सलोने अधर मधु , कहु रहीम घटि कौन ।  
मीठो भावै लोन पर , अरु मीठे पर लोन ॥  
जो विषया सन्तन तजी, मूढ ताहि लपटात ।  
ज्यों नर डारत बदन करि, स्वान स्वाद सों खात ॥

अभी हलाहल मद भरे, सेत स्याम रतनार ।  
 जियत मरत झुकि २ परत, जेहिचितवत इकवार ॥  
 जो रहीम दीपक दशा, तिय राखत पट ओट ।  
 समै परे ते होती है, वाही पट की चोट ॥  
 रहिमन सूधी चाल सों, प्यादा होत उजीर ।  
 फरजी मीर न ह्वे सकै, टेढ़े की तासीर ॥  
 बड़े पेट के भरन में, है रहीम दुख बाढ़ि ।  
 गज के मुख बिधि याहिते, दए दांत द्वे काढ़ि ॥  
 ओछो काम बड़े करें, तौन बड़ाई होय ।  
 ज्यों रहिम हनुमंत को, गिरधर कहै न कोय ॥  
 प्रीतम छवि नैनन बसी, पर छवि कहां समाय ।  
 भरी सराय रहीम लखि, आप पथिक फिरि जाय ॥  
 गुरुता फबे रहीम कहि, फबि आई है जाहि ।  
 उर पर कुच नीके लगें, अनत बतौरी आहि ॥  
 मान सरोवर ही मिलै, हंसनि मुकुता भोग ।  
 सफारिन भरे रहीम सर, बक बालक नहि जोग ॥  
 रहिमन रिस सहि तजत नहि, बड़े प्रीति की पोरि ।  
 मूवन मारत आवई, नींद बिचारी दौरि ॥  
 जो पुरषारथ ते कहूं, सम्पति मिलति रहीम ।  
 पेट लागि बैराट घर, तपत रसोई भीम ॥



संपत्ति भरम गंवाइ के , हाथ रहत कछु नाहिं ।  
 ज्यों रहीम ससि रहत है, दिवस अकासहि माहि ॥  
 अनुचित उचित रहीम लघु, करहिं बड़े न के जोर ।  
 ज्यों ससि के संयोग ते, पचवत आगि चकोर ॥  
 काम कछू आवै नहीं, मोल न कोऊ लेइ ।  
 बाजू टूटे बाज को , साहब चारा देई ॥  
 धनि रहीम जल पंक को, लघुजिय पिअत अघाय ।  
 उदधि बड़ाई कौन है , जगत पियासो जाय ॥  
 मांगे घटत रहीम पद, कितों करो बढि काम ।  
 तीन पैग बसुधा करी , तऊ बावने नाम ॥  
 नाद रीझि तन देत मृग, नर धन हेत समेत ।  
 ते रहीम पसु ते अधिक, रीझेहु कछू न देत ॥  
 रहिमन कबहुं बड़न के , नाहिं गर्ब को लेस ।  
 भार धरे संसार को , तऊ कहावत सेस ॥  
 रहिमन नीचन संग बसि, लगत कलंकन काहि ।  
 दूध कलारिनि हाथ लखि, मद समुझाहिं सब ताहि ॥  
 रहिमन अब वे विरछ कहं, जिनकी छांह गंभीर ।  
 बागन बिच बिच देखियत, सेंहुड़े कंज करीर ॥  
 बिगरी बात बनै नहीं ; लाख करौ किन् कोय ।  
 रहिमन बिगड़े दूध को , मथे न माखन होय ॥

मथत मथत माखन रहै, दही मही बिलगाय ।  
 रहिमन सोई मीत है, भीर परे ठहराय ॥  
 होय न जाकी छांह ढिग, फल रहीम अति दूर ।  
 बाढ़ेउ सो बिन काजही, जैसे तार खजूर ॥  
 रहिमन निज मनकी बिथा, मनही राखौ गोय ।  
 सुनि अठिले हैं लोग सब, बांछि न लेहै कोय ॥  
 गहि सरनागति राम की, भबसागर की नाव ।  
 रहिमन जगत उधार कर, और न कछू उपाव ॥  
 रहिमन वे नर मरि चुके, जे कहुं मांगन जाहिं ॥  
 उन ते पहिले वे मुए, जिन मुखनिकसति नाहिं ॥  
 जाल परे जलजात बहि, तजि मीनन को मोह ।  
 रहिमन मछरी नीर को, तउन छाडति छोह ॥  
 धन दारा अरु सुतन में, रात लगाए चित्त ।  
 क्यों रहीम खोजत नहीं, गाढ़े दिन को मित्त ॥

कवित्त ।

दीवो चहै करतार जिन्है सुख कौन रहीम  
 सकै तिन्ह टारै । उद्यम कोऊ करौ न करौ धन  
 आवत है चलो ताही के द्वारे ॥ देव हंसे सब आपुस  
 मे विधि के परपंच न जाहि बिचारे । बालक  
 आनक दुंदुभी के भयो दुंदुभी बाजत आन के द्वारे ।

## सूरसागर ।

रागविष्णुगारा ।

भरोसो दृढ इन धरनानि केरो । श्रीवल्लभ नखचंद छटा बिन सब जगमौझ अंधेरो ॥  
साधन और नहीं या कलि में जासों हाब निवेरो । सूर कहाँ कहै द्विविध औंधेरो  
बिना मूल बो चरो ॥ १ ॥

रागविष्णुगारा ।

दधिसुत जम्हो नंद के द्वारे । करपल्लव ही टेकि रखो सब सो सुत अरुह्यो  
द्वारहि द्वार । साखा पत्र जसोमति के ग्रह फूलत फलत न लागी बार । ताके  
मोलन गन गंधर्व मुनि ब्रह्मारुद्र श्रुति करहि विचार ॥ दीन बचन बोलत व्योपारी  
रहे ठगे तहाँ मनहीं मझार । सूरदास बलि जाय तिहारी बृजवनिता किने उरहार ॥ २ ॥

रागदेवगांधार ।

देखरी देख अकृत रूप । एक अंबुज मध्य देखियत श्रीस दधि सुत जूप ॥  
एक अवली दोष जलचर उभै अर्कअनूप । पांच वारिज ढिगाहि देखियत कहो  
कहा स्वरूप ॥ सिसु गति में भई सोभा करहु चित्त विचार । सूर श्री गोपल की  
छात्रि राखिये उरधार ॥ ३ ॥

देखो दधि सुत में दधिजात । एक अंधभो सुनिरी सजनी रिपु में रिपूसमात ।  
तापर कीर कीर पर पंकज पंकज के द्वै पात । अचरज यह देखि पसुपालक फूले  
अंगन मात ॥ सुंदर बदन बिलोकि स्याम को नंदमंहर मुसुकात । ऐसो ध्यान  
धरे जो हरि को ताकी सूरदास बलिजात ॥ ४ ॥

आज तोहि काहे आनंद थोर । यह अचरज सखि तोहि पै पावे विधु अनु-  
राग चकोर ॥ दधिग्रह युगम क्यों न तू वानत मुकलित अंबुज भोर । सूरदास  
प्रभु रसिक सिरोमणि हरि जे लियो मन मोर ॥ ५ ॥

रागविष्णुगारा ।

सोभा आजु भली बनि आई । जलसुत ऊपर हंस बिराजत तापर इंदु बधू  
- दरसाई ॥ दधि सुत लियो धन्यो दधिसुत में यह छवि देखि नंद मुसुकाई । नीरज  
सुत बाहन को भक्षण सूरस्याम ले कीर चुगाई ॥ ६ ॥

## रागनट ।

जिन करि जलज पर जलजात । धातपति दाहन तिहारो सकल लोक  
सिहात ॥ रिसपयोधि निधान सों कुरु राज छोड़ सुभाय । सूरसुत सिख सुनि  
सखी रावे इंदु असवनाय ॥ साठ अष्ट है चरन जाके कतहिये दुखदेत । क्यौ न  
गिरिजा नाथ अरितिय मानि सब सुख लेत ॥ लाल संग मराल भोजन माल  
करिये दूर । सूर श्री मनमोहनी भाजि भोग भामिनि भूर ॥ ७ ॥

कहो कोठ परदेसी की बात । मंदिर भाग अरध करि कहिगये हरि अहार  
चलिजात ॥ ससि रिपु बरष सूररिपु जुगभर हररिपु की अबघाट । नखत वेद  
ग्रह भिले अर्द्ध करि सोइ बने अथ खात ॥ रवि पंचक ले गये स्यामघन ताते मन  
अकुलात । सूरदास बस भई बिरह के करमीडे पछितात ॥ ९ ॥

दधि सुत सों बिनवति मृगनैनी । मुनि उडुराज अमृत मय मति कों तजि  
सुभाव बरषत कित दहनी । उमयापति रिपु बहुत सतावै हरिरिपु प्रांतम लागत  
गहनी ॥ छिपा छिपन छिन होतन सजनी भूमिडसन रिपु कहाँ दुरानी ।  
भुवन न भावे चितवति हौं पीतम को आवनी ॥ ८ ॥

## राग सारंग ।

हरि बिनु कैसे करि वृज जीजे । पंकज बरषि बरषि उर ऊपर सारंग रिपु  
जल मीजे ॥ तारापति के रिपु सिर ठाढ़ो निमिष चैन नहिं दाजे । चंदचोय  
जाय गोपन कों मधुप राखि जस लीजे ॥ वायस अजा शब्द की मिलनी ता  
कारन तन छीजे । सूरदास प्रभु हो जगजीवन बेगहि दरसन दीजे । १० ।

## राग बिहाग ।

मिलवहु पारथ मित्रहि आनि । जलज सुत के सुत हित किये भई रस  
की हानि ॥ गिरिसुतापतितिलक कसकत हनत सायक तानि । दधिसुता  
सुत अत्रलि उर पर इंदु आयुधमानि ॥ पिनाक पातिसुत तासु बाहनें भषकभष  
विषखानि । साखामृग रिपु बसन मलयजहुतहुतासन आनि ॥ धर्म पुत्र के  
अरिभाएँ तजति सिरधरि पानि । सूरदास विचित्र बिरहिनि चूक निज जिय जानि । ११ ।

## श्रीमती महाराज्ञी इङ्ग्लैंडेश्वरी कीन विक्टोरिया यात्रा

स्काटलैंड की पहिली मेर का हाल ।

सोमवार अगस्त २९, १८४२ ई० “रायलजार्ज” जहाज ।

सुबह को पांच बजे रेल गाड़ी पर सवार होने के लिये हम लोग सुकाम विंज़र मे चले उवेज़नारफोक और मिसमटिल्डा पेगिट और जेनरलवेमिस् और करनैलबोवरो और अक्सनसाहिब साथ थे लार्डनिधरपूल और लार्डमर्टन और सरजेम्सल्लार्क पहिले से उलविच में जा ठहरे थे पीछे छ बजे लंदन में पहुँच कर अपनी अपनी गाड़ियों पर सवार हो सात बजने से पेशतर उलविच दाखिल हुए फ़िलफ़ौर आलवर्ट और हम जहाज पर सवार हुए इस के देखने के लिये बड़ी भीड़ थी ।

छूककेम्ब्रिज और लार्डजर्सी और लार्डहेडिंगटन और लार्डक्लुमफ़ोल्ड अपनी २ पूरे वर्दी पहने हुए हाज़िर थे सरजार्ज ने मेरा हाथ पकड़ कर जहाज पर पहुँचा दिया यानो खूब बरस रहा था इस लिये हम लोग जहाज के अन्दर अपने अपने कमरे में बैठे रहे ।

हमारे साथ की बहर में जो सब जहाज थे उन के नाम नीचे लिखे जाते हैं ।

१—एक ३६ तोपवाला ।

२—डाफ़िन १८ तोपवाला ।

३—मलामंडर धूँए का उस पर गाड़ियाँ थीं ।

४—रैडामेंघर धूँए का उस पर लार्डनिपूल और लार्डमर्टन सवार थे ।

५—सल्लो धूँए का उस पर अक्सनसाहिब और ग्रागिर्द पेशे के लोग सवार थे ।

६—गोघरवाटर धूँए का उस पर सरजेम्सल्लार्क सवार थे ।

७—क्लाकईगल धूँए का उस पर मेम लोग सवार थीं ।

८—लेटनिंग धूँए का उस पर वेडा स्विदमतगार और हमारे दो कुत्ते

इओम और केअर्नाक सवार थे ।

९—फ़ोथल्लेस धूँए का यानो नापने को ।



यह जहाज़ बहर में हम लोगों के हमराह थे सिवाय इन के ट्रिनिटीसीम नाम धूँएँ का और एक डाक का जहाज़ भी साथ था और छोटी छोटी धूँएँ को किशतियाँ तो आदमियों से भरी हुई पीछे पीछे वैशुमार थीं ।

मंगलवार अगस्त ३० ।

सुना कि आठ बजे रात से अब तक सिर्फ़ अट्टावन मोल आये हैं तबोअत निहायत दिक्क हुई दिन भर लेटे रहे ग्राम को समुद्र में जहरों का जोर था और मेरी तबोअत नादुस्त रही साढ़े पाँच बजे यार्कशायर के किनारे पर फ्लाखरोहेड में हम लोग पहुँचे ।

बुधवार अगस्त ३१ .

पाँच बजे सुना कि रात को हमारे जहाज़ कुल तीन मोल फ़ो घंटे चले और इस हिसाब से सेन्टऐव्महेड से पचाम मोल आये अफ़मोस हुआ ।

रास्ते में कोकैट का टापू और नार्थखरलैन्ड के किनारे पर वाखरो का किना था मगर अफ़मोस कि उस के देखने का इत्तिफ़ाक़ न हुआ अपने कमरे में फिरनी का टापू कि जिस पर प्रसडार्निङ्ग का रोशनी का मोनार जहाज़ बानों को राह बतलाने के लिये बना है देखा राकी और डोनी के टापू भी नज़र आये साढ़े पाँच बजे जहाज़ के सहन पर आकर मैं लेट गई अब स्काटलैन्ड का बहुत सुन्दर किनारा दिखाई दिया यहाँ के समुद्र का किनारा कुछ और ही तरह का है उस के ऊँचे ऊँचे खड़े पहाड़ के पथर काले २ जंगलो तरह के बहुत खूबसूरत नज़र पड़ते थे साढ़े छ बजे सेन्ट-ऐव्महेड से आगे बढ़े बहुत लोग शिकारी डोंगियों पर जिन में से एक पर बांसुरी बज रही थी और कितने ही लोग धूँएँ को किशतियों पर हमारे देखने को आये एक बड़ी धूँएँ को किशतो पर रील का नाव हो रहा था और बाजा बजता था यह वक्त शाम का अत्यन्त मनोहर और समुद्र स्थिर था सूर्य बहुत सुन्दरता से अस्त होता था और पवन बहुत शुद्ध चल रही थी ।

हर शख्स को यहाँ आने से मालूम होगा कि दिन इजिप्टिस्तान से कितना बड़ा होता है साढ़े आठ बजे तक अच्छी तरह अंधेरा नहीं हुआ था सोमवार और मंगल की शाम को जब हम लोग विंज़र में थे साढ़े सात ही बजे अंधेरा हो चला था और आठ के पहिले त्रिलकुल अंधकार हो गया था लोगों ने नाचने का इजाज़त ली एक छोटा सा जहाज़ के ख़ुफ़ासी का लड़का बेला बजाने लगा उस की आवाज़ पर वे नाचे और गाये ।

नौ बजने में पच्चीस मिनट बाकी रहे तक इस लोग जहाज़ की सड़न में रहे और स्काटलैन्ड के किनारे परछंवार और टिनिगहेम और कार्डिफ़िंगटन के मकान में और २ भी कई मुकामों में खुशी की रोशनियाँ \* जलती हुई देखीं इस लोगों ने भी चार बान कुड़वाए और दो नौनो रोशी के लैन्टैन जहाज़ के मस्तूल पर चढ़वाए जहाज़ के खूलासियों का मस्तूलों पर चढ़ना देखकर निहायत हैरत आती थी और तमाशा यह कि चाहे रात हो चाहे दिन हो उन्हें दोनों बराबर या वह जो लैन्टैन मस्तूल पर ली गया अपने दांतों में दबाकर मानों मस्तूल पर दौड़ गया यह लोग जैसे चाक्काक हैं वैसे ही भलेमानस भी हैं ।

ईश्वर का धन्यवाद किया और बड़ी खुशी मनाई कि सफ़र ख़तम होने पर आया ।

#### बृहस्पति सितम्बर ११

सवा बजे लंगर गिरने को अवाज़ सुनी और वह बहुत ध्यारी मालूम हुई घात बजे इस लोग जहाज़ की सड़न पर आए और वहीं हाज़िरी खाई एक तरफ़ तो कीच और एडम्बरा के ऊँचे २ पहाड़ कुहासे से ढंके हुए दिखलाई देते थे और दूसरी तरफ़ में का छोटा टापू देखने में आता था मशहूर है कि इसी जगह मैकडैफ़ ने मैकवेथ से मुक़ाबला किया था पीछे की तरफ़ इस लोगों के व्यासराक का पहाड़ था आठ घंटे से दस मिनट ऊपर इस लोग घेन्टनपायर पर पहुँचे वहाँ झूकनीकलियो और सर्रासर्ट पीक आदि से सुनाकात हुई वे जहाज़ पर इस लोगों से मिलने आये और सर्रासर्ट ने अर्ज़ किया कि अगर्चि कल इस्तिज़ार में कुछ ना उमिदो हुई थी आज सब लोग महारानो के दर्शन से अत्यन्त आस्वादिता हुए हैं इस लोग इसके बाद जहाज़ को बाहर निकाले लोगों ने जयकारे की तौर पर खुशी ज़ाहिर की और झूकने इस लोगों का इस्तिक्बाल किया हमरा हो बोबो और साहिब लोग पहिले हो कुशल से ज़मान पर उतर चुके थे अब हम दोनों उतरे बोबो और साहिब लोग साथ हुए झूक और संवार और ऐम्सन् साहिब छोड़े पर हो गिये ।

एडम्बरा में आदमी तो हम क़दर नहीं हैं पर भीड़ और कश्मक़श इतनी

---

\* वहाँ दस्तूर है कि जब कोई बड़ी खुशी होती है ऊँची जगहों पर बड़े २ अलाव लगाकर जला देते हैं मानों होली मचा देते हैं ।

थो कि डर होता था किसी की चोट चपेट न लग जाय इन्तिजाम इस का हो सकता था अगर प्रोबोस्ट्रु याने कोतवाल हम लोगों के पहुँचने को ठोक बल्ल की खबर मशहूर करने में शकती न करता एडम्स शहर देखने से दिक्कत पर बड़ा खबर पैदा हुआ यह निहायत मुंदर स्थान है इस के समान हम ने कोई जगह अब तक नहीं देखी है थान्वर्ट कि जिनहीं ने हम कदर देखा भाका है बोले कि मैंने ऐसी जगह कभी नहीं देखी यह बड़े काइदे से बना है इसारतें बड़े बड़े पत्थरों की हैं ईंट कहीं नहीं दिखाई देती मड़कों ऊँची और उमदः बनी हैं किन्ना शहर के बीच में ऊँचे पहाड़ पर बड़ी नमूद का है और क्वाल्डन की पहाड़ी पर क्रोमो यादगार यूनानी इमारतों के लक्ष्मि सुताविक बना हुआ और मैलसन का यादगार और बर्न का यादगार और जेलखाने का मकान और क्रोमो मंदरसा वगैरहः बड़ी २ इमारतें चार्चरसीट पहाड़के साथ जो सब के पछि एक ऊँची दीवार सा खड़ा है थान्वर्ट मुंदरता की दिखाती है सब के मन में बड़ी आग्रह और बड़ी मुहब्बत मालूम होती थी बादशाहो तीरन्दाज बाड़ी गार्ड \* के सिपाहो हाज़िर हुए और शहर में सारी राइ हमराइ रहें इस बाड़ीगार्ड के ग़ोला में थिलकुल थमोर और रईस भरती हैं वह गार्डो के साथ पैदल चलते थे और लोगों की बड़ी भीड़ से खूब धक्के खाते थे इन सिपाहियों में ड्यूक राक्लवर्ग और लार्ड ईलचू मेरी तरफ़ से और सर जे डोप थान्वर्ट की तरफ़ लार्ड ईलचू ने जिन को मैं उस वक़्त तक पहिचान्ती न थी चलते हुए बहुत से यादगार और दूसरे मकानों का पता बतलाया नगर से बाहर निकल कर सवारों तेज़ चली अदना ग़रोबों के मकान भी पत्थरों के बने हैं और टट्टियों की जगह पत्थर की दीवार दिखाई देती हैं ।

इस मुल्क से और यहां के लोगों की चाल ठाल से और इङ्गलिस्तान से और इङ्गलिस्तानवालों का चाल ठाल से फ़र्क़ है वूटो औरतें सिर से चिपका के टोपी पहन्ती हैं लड़क और लड़कियां नंगे पैर फिरती हैं मेने कई एक सुन्दर

\* ड्यूकवेकलिमो एक रोज़ कहते थे कि इन् तीरन्दाज बाड़ीगार्ड का ग़ेल अक्ले जेम्स ने काइम किया था और वह सब सवार थे और सिर से पैर तक हथियार में डूबे हुए उन का काम हमेशः बादशाह के पास रहने का था फ्लाडनफील्ड में चौथे जेम्स बादशाह की लाश जब मिली उस के आस पास इन बाड़ीगार्ड कालों की लाशें पड़ी थी ।



लड़कें और लड़कियों को देखा कि इन के फिर पर लंबे लंबे बाज थे और यहाँ तीन वरस से ले कर सोलह वरस को उमर तक शरीरों के लड़के और लड़कियों के फिर पर खुले हुए लम्बे लम्बे बाज अक्सर सुर्ख रंग के साटकते रहते हैं फिरते हुए हम लोगों ने जोगमिन्दर का खंडहर किछा देखा जो किसी समय स्काट्लेण्ड को शाहजादों मीरो के रहने का मुकाम था ग्यारह बजे हम लोग डालकोथ पहुँचे यहाँ एक बड़ा भारी भवान सुर्ख पत्थरों का बना है उस का ज़ियादा हिस्सा मानमध की डचेज़ का बनवाया हुआ है और रमना हमसे बहुत मनोरम और बड़े विस्तार का है तीन तरफ़ इस का खुला और बाई और दर्वाज़ा है हम लोगों के दाखिल होते ही डचेज़ बोकलियों पहुँचो और और एक सुंदर सीढी को राह से हमारे रहने के कमरों में जो बड़े चाराम के बने थे लगे गई हम दोनों को बड़ी थकावट मालूम हुई फिर घूमता था।

फिर गाड़ी पर सवार हो रमने को तरफ़ निकली आर्थरसीट और पेंटकीण्ड पर्वतों को सैर यहाँ से अच्छी दिखाई देती थी गाड़ी की सहक सुन्दर बनी है और इस के मोचे ही पहाड़ की एक गहरी दून है घाट थोड़ी आकर खाना खाया बहुत से लोग शरीक थे सब बड़ी खार्तिदारी और मिहर्षीगी करते थे हम लोगों के सफ़र का ज़रा ज़रा हास आसह से पूछते थे।

मुकाम डालकोथ शुक्र सिंसेम्बर २।

हाज़िरी के समय मैंने यहाँ को आशानो चक्को सवाट इस का ज़ाहदा था और एक तरफ़ का और भी खाना खाया फिर जवा खाने निकले सैर की जगहें अति विस्तृत और रमनोक्त बन पहाड़ से शोभित थीं एक नदी के किनारे टहलते हुए एक ऊँचे करार पर चढ़ कर छोटी सी भोपड़ी के पास पहुँचे और वहाँ से ऊपर हो उपर छिरे की राह की चार बजे डचेज़ बोकलियों और डचेज़ नारफ़ोक् के हमराह सवार हुए एक बगैर छोड़े पर सवार और बाकी लोग दूसरी गल्ली पर थे डालकोथ में होकर सवारी निकली यहाँ लोग खूब जमा थे और सब के सब दौड़ते और खुशो को आवाज़ करते हुए चले।

आलवर्ट ने कहा कि इन में बहुत से लोग जरमनो के से दिखाई देते हैं बूढ़ो आमतें एक प्रकार की टोपी जिस का बड़ मुन कहते हैं पहिने हुए थीं और छोटे लड़को लड़कों के फिर पर छटक हुए बाल बहुत सुन्दर और चित्र

समान मालूम होते थे वानेट की टोपी पहने कोई घोरत नहीं दिखाई दो।

इस धर्म में ऐसा एक कुहासा उठा कि हम लोगों को लासवेड गाँव और कार्ड मेलविल् के सुन्दर रमने में छोकर डेरे को सौट जाना पड़ा।

सनिचर सितम्बर ३।

दस बजे हम दोनों बस गाड़ी पर सवार और सब लोग पीछे पीछे पड़ खरा की चले आर्थरसोट के पहाड़ के नीचे से सवारी निकली बड़ी भीड़ जमा होने लगी बादशाही तोरन्दाज बाड़ीगार्ड यहाँ से साथ हुए कार्डमेलविल् हमारी तरफ और ब्लूक्राफ्टवर्ग और सर जे होप आलवर्ट की तरफ पैदल चले रास्ते में होलोवुड का गिरजा मिला यह बड़ा प्राचीन स्थान देखने योग्य है होलोवुड का मठ एक पुरानी जगह बादशाही शान का बना है यहाँ की पुरानी मठक अजोब क़िता की है दोनों जानब बड़े ऊँचे ऊँचे मकान अकसर ग्यारह ग्यारह मंजिल तक के हैं और हर एक मंजिल में एक एक कुनबी के आदमी रहते हैं हर एक खिड़की आदमियों से भरी हुई थी लोगों ने नाक्स और रिजिन्ट मरे के अजोब और पुराने मकान दिखाये यह पिछला अबतक बखूरी कादम है इस पुराने नगर का बड़ा गिरजा और नये कसबे में सेन्टपाल का गिरजा बहुत सुन्दर बना है नाके पर कोतवाल ने जूनी मज़ार की।

यतोमखाने की लड़कियों और हर फ़िर्की के आदमी पुरानी बक्का की पोशाक पहने हुए एक चबूतरे पर थे उसे आगे बढ़ कर एक नया गिरजा बन रहा था और वह ख़तम होने पर था मगर तज़्जुब की बात है कि लोग अब उस को नैव का पत्थर जमाने की रस्म अदा करने की थे निदान हम लोग क़िले में पहुँचे और उस के ऊपर चले गये।

क़िले के दोनों बर्ज पर से सैर बड़ी पड़त दिखाई देती थी तमबीर कासा आत्म था डेरोआट के असपताल के मकान पर से एक भूंदर पुरानी इमारत नज़र आई उने एक सुनार लौहरी ने जेम्स बादशाह के समय में बनवाया था और इसी सुनार लौहरी को सरबाल्टर ने अपनी बुद्धि में विख्यात किया है फिर हम लोग गाड़ी पर सवार हो कर आगे बढ़े भीड़ ऐसी थी कि सचमुच डर मालूम होता था हम और आलवर्ट बहुत डरे क्योंकि हमराही तोरन्दाजों की भीड़ हटाने में बड़ी मिहनत पड़ती थी लेकिन यह तोरन्दाज बड़े काम आए उन के एक हाथ में कमान थी और तीरों की कामर में खींचे थे।

एडम्बरा के बाहर निकलते ही पानी बरसने लगा और दो पहर के बाद से शाम तक बराबर बरसता रहा दो बजे हम लोग डालमनो में लार्ड रोज़-वेरो के घर पहुँचे रमना बहुत सुंदर रमणीक है समुद्र के किनारे तक पेड़ कम हैं यहाँ से फ़ीर्थ को खाड़ी और मे का टापू और बासराक पहाड़ी और एडम्बरा की सैर बहुत अच्छी नज़र आती है मगर कुशासे ने इस क़दर का लिया था कि किसी चीज़ का भी देखना मुशकिल था ज़मीन बहुत फ़राख़ थी जंगल दून पहाड़ सब उस में मौजूद थे रहने का मकान हाल का बना है लार्ड रोज़वेरो ने इस को खुद बनवाया है और यह बहुत सुंदर और आराम का है हम लोगों ने कुछ नाश्ता किया और लार्ड रोज़वेरो और उस के घर वाले बड़ी ख़ातिरदारी से मिले सारे तीन बजने के करीब यहाँ से चले और लोथ में जो कर छिरे की तरफ़ गये ।

लोथ में दाख़िल होने से पहिले होमडक पर से एडम्बरा को मनोहर छवि नज़र आती है आलबर्ट के कहने बमोज़िम यह परिस्थान है और ऐसी कौफ़ियत केवल तमबीर ही में दिखाई देती है यहाँ से वह सुंदर नगर बिलकुल नज़र आया उस के एक तरफ़ किता मिर उठाये और दूसरी तरफ़ के बटन का पहाड़ ऊँचो ऊँचो आर्थरमोट और सालिमवेरी की चोटियों से शोभायमान था आलबर्ट ने कहा कि वैशक एक्कोपोलिस इस से बढ़कर मनोहर नहीं हो सकता और सुन्न में आया कि लोग एडम्बरा को हाल का एथेन्स नगर कहते हैं हमरा जो सिपाही फिर लोथ में मिले यह जगह कुछ सुंदर नहीं है ।

यहाँ के लोग बड़े उत्साह से भरे थे और भीड़ बड़ी थी पहरवालों के मिर पर एक अज़ीब तरह को टोपी थी और उन के घोड़े फूलों से ऐसे सजे थे कि एक आश्चर्य मानलूम होता था लेकिन यहाँ के मल्लाहनों की शकल सब से अधिक चमत्कार थी यह भ्रूक्षर जवान और खुबमूरत डच लोगों की सी सफ़ेद टोपी और रंगोन कुरते पहिने हुए दिखाई देतो थीं उन का रसम है कि अपने फिरके से बाहर कहीं विषाह नहीं करतीं हैं छ बजे हम लोग खुब थके हुए फिरे ।

ऐतवार, सितेम्बर ॥ ४ ॥

नया बाग़ जो बन रहा है उस के देखने के लिये हम लोग टहलते हुए गये वहाँ पर सैकण्टाश मिला वह पहले वेलेरमू का बाग़वान् था वहाँ से

डालकोथ तबरोर सा सुंदर नज़र आता था आल्बर्ट ने कहा यह जरमनी देश का सा है पुनः पर से हम लोग एस्क नदी पार हुए दोनों तरफ सुंदर पेड़ लगे हैं लोडो लिटिल्टन से अपनी कड़के बाकी का कुशल छेम पाया बारह बजे मकान में नमाज़ हुई रामजी साहिब ने बाज़ किया।

बाढ़े चार बजे डेक्क हम लोगों को अपनी फिटन गाड़ी पर जिस में अच्छे मुरंग टांचन जुते थे सवार कराकर बाहर लेगई आलबर्ट ड्यूक और कारनेल् बोवरो के साथ घोड़े पर सवार हुए रमने के एक तरफ से पुराने जंगल और दक्षिण ओर उत्तर को एस्क नदी देखते हुए हम लोग चले यह दोनों नदियां जहां मिली हैं वहां से पेन्टलेन्ड पहाड़ों की बहुत अच्छी भैर दिखाई देती है फिर हम लोग एक दूसरी राह से न्यूवैटन और लार्ड ओदिशन् के मकान के पास पहुँचे रमना यहां का अत्यंत मनोहर और मकान बहुत बड़ा था हम लोग एक बहुत बड़ा पेड़ जिसे बीच कहते हैं देखने को बाहर आए इस पेड़ के नीचे से दक्षिणी एस्क नदी बहती है और भी बहुत से पेड़ उसके किनारे पर खड़े लगे हैं।

यहां से हम लोग सुकाम डलहौज़ी में लार्ड डलहौज़ी के मकान में गए यह मकान स्काटलैन्ड के पुराने किले की तौर पर सुर्ख पत्थरों के बना हुआ है दमभर के लिते जना लोग गाड़ी से उतर डलहौज़ी बाकी ने दरबारी कमरे तक पहुँचाया उस को खिड़की से एक दून सुंदर पेंडों से सजी हुई दिखाई देती थी और दूर के पहाड़ों को भी कुछ भलक मालूम होती थी।

लार्ड डलहौज़ी ने कहा कि चौथे दिन के अड़द सै इङ्गलिस्तान का कोई बादशाह आज तक यहां नहीं आया फिर जिस राह से आये थे उन्हीं राह उरे को लौट गए जैसा आज का दिन साफ चमकीला और सर्प जमाने की सदा का था शाम भी वैसीही रही फिरते वक्त मोरफुट् का पहाड़ नज़र आया सात बजने के बाद हम लोग उरे पर पहुंचे।

सौमवार, सितम्बर ॥ ९ ॥

आज डालकोथ के क़सबे में मैंने दरबार किया वज़ीर लोग और स्काटलैन्ड के जंगी आफ़सर लोग दरबार में और बादशाहो तीरन्दाज़ जो लंदन के हथियारबंद रईमों को तरफ है दरबारो कमरे के अंदर भी बाहर हाज़िर थे दरबार से पहले लार्ड प्रोवीसट और मजिस्ट्रेट और स्काटलैन्ड की ईसाई जमाअत



घौर से मृगशून्नासगो घौर एडिम्बरा के यूनीवर्सिटी \* से तीन अडेस † सुभं को घौर इस के बाद तीन आल्बर्ट को मिले जवाब इन का हम ने घौर आल्बर्ट ने अलग अलग दिया आल्बर्ट ने अपना जवाब बड़ी खूबी से पढ़ा।

मंगलवार, सितम्बर ॥ ६ ॥

नी बजे डालकीय से कूच किया आल को सुबह चमकीली साफ घौर सड़ थी पाला पड़ा था चलते हुए पेन्सिलैन्ड घौर आर्थरसोट पहाड़ जिन के नज़दीक से गए सुंदर दिखाई देते थे सालिसबरीकोग के पहाड़ भी बहुत ऊँचे घौर निकले हुए श्रृंगों से शोभित थे इससे पहले हम लोग कोगमिलर देख चुके थे शहर के बाहर से हेरिघाट का असपताक्ष होते हुए हम लोगों का जाना हुआ घौर किला यहाँ से बहुत खूबसूरत नज़र आया।

जब मैंने किला देखा था इस बात का जिक्र करना भूल गई थी कि हम लोगों ने राजचिन्ह अर्थात् बादशाही ताल इत्यादि को बहुत पुराने घौर अजीब तरह को है घौर भी बरस तक गुम रहे थे घौर उस कीठरी को भी देखा था जिस में स्काटलैन्ड का छठवाँ घौर इङ्गलिस्तान का पहिला जेम्स बादशाह पैदा हुआ था यह एक बहुत छोटी कीठरी है घौर दोबार पर एक पुरानी दुआ लिखी है एडिम्बरा घौर फोर्थ नदी की अच्छी सैर दिखाई दी कोगनीय सुकाम में अर्थात् नी मौल के कोग आकर छोड़े बदले गए डाक ने डालमनी पहुँचने तक साथ दिया फिर वहाँ से लार्ड होप्टौन् साथ हुए थ्यारड वजे हम लोग दक्षिण कोन्सफेरी ‡ सुकाम में पहुँच कर गाड़ी से उतरे घौर एक छोटी धूँए की नाव में सवार हुए हमारी गाड़ियाँ घौर बीबी घौर साहिब लोग दूसरी धूँए की नाव पर चले हम लोगों ने फोर्थ नदी पर थोड़ी दूर जा कर लार्ड होप्टौन् का मकान देखा यह मकान होप्टौन् नगर घौर डालमनी के बीच बड़े मौका पर है उड्डम् का किला भी देखने में आया आगे बढ़ कर ब्लैकनेस् का किला है वह इतिहासों में प्रसिद्ध है दूसरी तरफ पानी के ऐन किनारे पर देखा तो एक चौखूँटा बुर्ज है उस का नाम रोजीय है यहाँ आलीवर क्रामवेन की मा पैदा हुई थी घौर कुछ दूर पर डन्फरमलाइन में राबर्टब्रूस गड़ा है फोर्थ नदी में एक सुन्दर टापू इंचगार्वी नाम एक पुराने किले से शोभित है हम लोग उसी के निकट से गए नदी

\* परीक्षकमंडली।

† प्रशंसापत्र।

‡ रानीघाट।

कै सुन्दर फेर फार को देखा और एडिम्बरा और उस का सुन्दर किला दूर से दिखाई पड़ा नदी पार उतर कर क्लोन्सफ़ेरी पहुँच कर गाड़ी पर सवार हुए जेनरल वेमिस् के बड़े भाई कप्तान वेमिस् ने कौडन्धीथ के आगे आठ मील तक बराबर घोड़े पर सवार साथ दिया क्लोन्सफ़ेरी छोड़ कर पहिला गांव इनवरकीदिंग नाम मिला सर पी डरहैम के गांव के पास से जाना हुआ ।

कौडन्धीथ में घोड़े बदले गए सवा बजे किन्सरोज ग्रायर में दाखिल हुए फिर जल्द ही हर तरफ सुन्दर जगहें दिखाई देने लगीं और पहाड़ भी नज़र पड़े लाक्लेवेन् से आगे बढ़ कर एक भील के किनारे बड़ा किला देखने में आया जिस में से मेरो नाम शाहजादो भागी थी यहाँ सिर्फ एक तरफ पहाड़ है बाकी सुल्ल बराबर बड़ाटास है फिर किन्सरोज में घोड़े बदल कर थोड़ी दूर पर छत्तरहित पहाड़ी को देखा ग्लेनफार्ग की दून में से निकले पहाड़ दोनों तरफ बहुत ऊँचे २ और ऊँच तक पेड़ों से ढके हुए नज़र आये रास्ते के एक तरफ एक छोटी सी नदी बहती है वह मनोहर मालूम हुई ।

इस दून से निकल कर म्द्रेथर्न और मगक्लीफ़ पहाड़ों की सुन्दर सैर दिखाई दी हम लोग तब पर्यग्रायर के इलाके में थे फिर अरन के पुल पर बारह मील के अंतर पर घोड़े बदले गए साढ़े तीन बजे हम लोग डूपलीन में लार्ड किक्लीन के मकान पर पहुँचे रास्ते में बराबर मनोहर पहाड़ और खड्ड और नदियां देखने में आईं इधर रास्ता पहाड़ों का ऊँचा नीचा और बौछर था डूपलीन का मकान बहुत सुन्दर हाल के क़िता का है एक ओर से पहाड़ों की सैर बहुत सुन्दर नज़र आती है और साम्हने हो मकान के नज़दीक एक छोटा सा झरना भी है बयान्सिक्वे हार्डलैन्डर की एक पसटन मकान के साम्हने खड़ी की गई थी सिपाही सब घुटने तक कुर्ते पहिने हुए अति सुन्दर मालूम होते थे यहाँ के अमोर और रईसों ने हम दोनों को अलग अलग अड़े स दिया और लार्ड किक्लीन ने पढ़ सुनाया और पर्थ सुकाम के मोबोस्ट्रु याने कोतवाल और मजिस्ट्रेट ने भी दिया तब हम लोगों ने कुछ नाश्ता किया विलीबी और किनेयर्ड और रथवेन के खान्दान के लोग और स्टार्डमैक्सफिल्ड और उन की एक बहिन और और भी लोग मौजूद थे नाश्ते के बाद थोड़ा सा बाहर टँहले और पाँच बजे फिर कूच किया बहुत जल्द हम लोग पर्थ में आए यह जगह टे नदी पर अत्यन्त मनोहर है और एक तरफ इस की पेड़ों से भरे हुए पहाड़ों ने शोभा दे दी है दर दूर निकले हुए

पहाड़ों की सैर नज़र आई और नदों को सुंदर फेर फार दिखाई दी।

आलबर्ट मोहित हो गये और बोले कि इस स्थान को देखने से वासना नगर याद आता है वह भी नगह बहुत सुंदर और वहाँ के लोग उल्हाही थे फूल पत्तों के मिश्रावदार फाटक हम लोगों के आने की खुशो में आ गये। लोगों ने बनाए थे प्रोविस्ट ने कांजी नज़र दी और आलबर्ट को शहर की आज़ादी दी मीन पर स्कोन् नाम लार्ड मैन्सफ़िल्ड का मकान मुख्य पथरी से बना हुआ बहुत खुशनुमा मालूम होता था।

लार्ड मैन्सफ़िल्ड और बिधवालेडी मैन्सफ़िल्ड ने हम लोगों का दरवाज़े तक इस्तिक्बाज किया और हमलोगोंको एक बहुत नफ़ीस कमरे में ले गये।

बुधवार, सितम्बर ७।

हम लोग बाहर निकले और टहलते हुए उस ऊँचे स्थान को देखा जिस पर प्राचीन स्काटलैंड के बादशाह हमेशा राज्याभिषेक पाते थे और पुरानी मिश्राव पर चौधे जेम्स का निशान बना था और पुराना ईसाई मत का सबीब भी देखा यह बहुत देखने के योग्य है।

खिड़कियों के सामने सिकेमोर अर्थात् एक प्रकार का लकड़ चौधे जेम्स बादशाह का लगाया हुआ है एक अजीब पुरानी बच्ची हम लोगों के सामने पर्थ सुकास से आई इस में अखीर दस्तखत इङ्गलिस्तान के पहिले जेम्स और पहिले चार्ल्स बादशाह का था लोगों ने हम को अपना नाम उस तैं लिखने को कहा लिख दिया गया कल लार्ड मैन्सफ़िल्ड ने सुझा कहा था कि शहर में चंद लोग हैं जो पहिले चार्ल्स के समय के डील की पोशाक अब तक पहिनते हैं ग्यारह बजे हम लोगों ने कूच किया पर्थ को एक तरफ़ से सवारी निकली और स्कोन की बहुत अच्छी सैर दिखाई दी थोड़ी ही दूर पर आगे लंकार्ठी की लड़ाई का मैदान मिला लोग कहते हैं कि यहाँ लार्ड एरोल् के पुरखाओं ने डेन्स लोगों को पराजय किया था लार्ड कीनेडोक का इलाका भी रास्ते ही में मिला इस के बाद अटरगेवन की नई सराय के पास छोड़े बदले गए ग्राम्पियन्स के पहाड़ों की कतार अब साफ़ नज़र आने लगी।

चलते हुए बाईं तरफ़ वह पहाड़ टूलीवेल्टन् का नज़र आया जिस पर डूड लोग अपने बेल नाम देवता के आगे बलि चढ़ाते थे उस पर्वत पर कुछ पेड़ भी लगे हैं।

बाईं तरफ़ लेकिन अधिक हम लोगों के साम्हने मुकाम बर्णन् है वहाँ किसी ज़माने में बर्णम् का बन था जिस का मैक्वेथ में ऐसा बर्णन लिखा है सर् डब्ल्यू स्टूरट का बहुत सुन्दर शिकारगाह जो बर्णम् की सरहद्द पर है हम ने देखा दाहिने और स्टीरमी और मुद्दे थूटे दिखाई दिया पहाड़ों के बीच से घाते हुए बाल्डवर्ट ने कहा कि दाहिने और जहाँ पहाड़ पर बहुत पेड़ लगे हैं थुरिंगेन् के समान और बाईं ओर स्लोत्ज़रलैंड की तरफ़ दिखाई देता है दाहिने तरफ़ सर् डब्ल्यू स्टूरट का इलाका पहाड़ के नीचे टे नदी के अत्यन्त सुन्दर किनारे पर मनोहर मान्य होता है इस प्रकार की सुन्दर सैर डंकैल्ड मुकाम तक बड़ी रमणीक थी लार्ड मैन्सफ़िल्ड बराबर हम लोगों के साथ घोड़े पर रहे ।

डंकैल्ड के बाहर ही एक मिहराबदार फाटक के साम्हने लार्ड ग्लेन्लियन् की हाइलैन्डर लोगों की पकटन् बरछी बांधे हुए मौजूद थी और हमारे साथ हुई एक बांसरी साम्हने बजती थी डंकैल्ड टे नदी पर एक तंग दून में सुन्दर मान्य होता था हाइलैन्डर की लश्करगाह के बीच तक जहाँ हम लोगों के नाश्ता करने के लिये एक खेमा खड़ा था हम लोगों की गाड़ी बाईं बैचारे लार्ड ग्लेन्लियन् ने जो यकायक बिलकुल अंधा हो गया था हम लोगों का इस्तिस्ना किया उस की बीबी उसे संभाले चलती थी देख कर बड़ा खेद हुआ यह शख्स हम से ज़ियादः मिहनत करने से अंधा हो गया है यहां लैडो ग्लेन्लियन् और लार्ड मैन्सफ़िल्ड आदि लोग हाज़िर थे हाईलैन्डर सिपाहियों की सफ़ हम ने एक सिरे से दूसरे सिरे तक टहलते हुए देखो बांसरी बजती थी हम लोगों ने नाश्ता किया एक हाइलैन्डर ए ने तलवार की कसरत दिखाई दो तलवारें कैंची की तरफ़ ज़मीन पर रख कर उस पर ऐसा नाचता था कि ज़रा झू न जाता रील का नाच भी हुआ ।

पौने चार बजे डंकैल्ड से चले आगे आगे हाईलैन्डरों की फ़ौज थी टेमथ तक बड़ी तफ़रोह के साथ सवारी गई दोनों तरफ़ पहाड़ों की कतारों में

११ ड्यूक ऐथोल । ए चार्ल्स क्रिस्टी जो अब बेवा डचेज़ ऐथोल का कारन्दा है ।

१२ सन् १८६६ की तौसरी अक्टूबर को हमने डंकैल्ड मुकाम से भेष बदल कर टेमथ की फिर देखा लूई औ बेवा डचेज़ ऐथोल और मिस मैक्रीगर साथ



सब से ऊँचे दो पहाड़ डंकैल्ड निकल कर दाहनी ओर क्रैगीबानम् और बाई ओर क्रैगविनियन् मिली टे नदी के फेर फार बहुत मनोहर और सब पहाड़ हरे भरे थे मुकाम बेल्नानागार्ड से नव मील पर छोड़े बदले गये यहाँ से लार्डग्रेन्लियन् के भाई कप्तान मरे हम लोगों के साथ छोड़े पर सवार हुए पहाड़ एक से एक ऊँचे मिलते गये आलबर्ट ने कहा कि बाड़ी जगह स्विट्ज़रलैंड के मुल्क भी मालूम होती है दूर पर पहाड़ इतने ऊँचे नज़र आये कि हम लोगों ने अब तक नहीं देखे थे घौने छ बजे टेमथ पहुँचे फाटल् पर लार्डग्रेन्लियन् के हाईलैंडरी का एक पहरा मिला जिस दून में टेमथ बहती है वह चारों ओर बहुत ऊँचे और पेड़ों से लदे पहाड़ों से घिरी हुई बहुत ही सुन्दर है वहाँ सुर्ख पत्थरों का एक मकान किले की तरह है उस में हम लोग उतरे यहाँ से जो सैर दिखायी देती है उस का वर्णन नहीं हो सकता लार्डग्रेन्लियन् के बहुत से हाईलैंडर सिपाही ऊनी चार खाने की बर्दी पहने हुए मकान के सामने कतार बांधे करीने से खड़े थे खुद लार्ड-

थीं इस शहर में वे इजाजत गाढ़ीपर जाने का हुकम न था और हमलोग अपने तई जाहिर नहीं किया चाहते थे इस लिये एक फाटक पर जो एक छोटे किले से नजदीक था उतर पड़े बागवान के घर से किले तक एक औरत राह बतलाती गयी पहली बार हम लोग इसी बागवान के घर के पास ठहरे थे तो भी वह औरत हम लोगों को ज़रा न पहिचान सकी ।

ऊँचे पर से नीचे के मकानों को देखा कुहासा निकल गया था और सब चीज़ें साफ़ मालूम होती थीं इस एकान्त में कि कोई नहीं जानता ये कौन हैं उस जगह को देखा जहाँ चौबीस बरस गुज़रे प्यारे लार्डग्रेन्लियन् ने हम लोगों का इस्तिक़्वाल ऐसे बादशाही ठाठ और धूमधाम के साथ किया था कि जिस की बराबरी नहीं हो सकती और न कवि की कबिताई में आ सकता है ।

उन दिनों आलबर्ट की और हमारी उमर सिर्फ़ तेईस बरस की थी और तब हम लोग जवान और तनदुरुस्त थे हा ! उस समय के साथियों में से अब कितने ही गुज़र गये हैं ।

मैंने इस जगह को देखकर ईश्वर का धन्यावाद किया इस छ़ासठ सन् में भी सब चीज़ें व्यों की व्यों पायीगयीं ।

ब्रेडल्वेनी हार्डलैन्डरी की पोशाक पहने हुए उन के चफ़री में मौजूद था सिवाय इस के कुछ सिपाही सरनीलमेन्ज़ी के सुख और सफ़ेद डोरिए का कपड़ा पहिने हुए और बहुत से बांसरो वाले बांसरो बनाते हुए और बानवे पलटन की एक कम्पनी के हार्डलैन्डर छुटने तक कुर्ते पहिने हुए दिखाये दिये तोपों की आवाज़ और रैयत की भीड़ और उन की खुशी को पुकार पोशाक की रंग बरंग की छवि आसपास के सुल्कों की शोभा और सब के पोछे बड़े बड़े पेड़ों से ढंपे हुए पहाड़ की खूबी बयान में नहीं आ सकती जैसा इतिहासों में सुना है वैसा ही मालूम हुआ कि मानों अगले ज़माने का बड़ा भारी सद्दार अपने बादशाह से मिलने आया है।

लार्ड और लेडीब्रेडल्वेनी हम लोगों को सीढ़ी के ऊपर लेगये बड़े कमरे और सीढ़ियां हार्डलैन्डर सिपाहियों की कतार से सजी थीं।

सीढ़ियां पथरी की बहुत सुन्दर और सारा मकान नये और बढ़ियां अस-बाब से सजा हुआ खास कर दरबार का मकान खूब सजा था इस कमरे से छतुबख़ाने का रास्ता हम लोगों के रहने के कमरों से मिला हुआ है आठ बजे हम लोगों ने रात का खाना खाया इस मकान में हम लोगों के सिवाय और जो लोग ठहरे थे वे ये हैं बोक्लियो का खान्दान और दो वज़ीर और डचेज़सर्दरलैन्ड और लेडी अलीजेब्थ लेवेसन्गीअर \* और एवरकन और राकम्बर्ग और किन्नौल् के खान्दान और लार्डलेडडेस और सरएम्नोमेट-लैन्ड और लार्डकोर्नी† और फ़ाक्समाकोस और वेल्ड्रेयन्स के खान्दान और विनियमरसज और उन की सोबी सर जे और लेडीअलीजेब्थ ले और लेडी प्रियंगल् की बेटो और दो बेनो साहिब और लेडीब्रेडल्वेनी के भाई। दो किता अलग अलग मकान हम लोगों को दिखाये मगर हम ने दाहिने हाथ का जो छतुबख़ाने से मिला था पसंद किया खाना खाने का कमरा बहुत नफ़ीस गाथिका डौल का बना था और जव से बना है आज तक किसी दूसरे का खाना उस में नहीं हुआ था जहां हम लोग टिके उस की भी आज हो साभत हुई बाद खाने के बाहर बहुत उमदा रोशनी हुई फ़ानूसों की एक कतार कोहे के जंगलों पर बराबर रोशन थी और ज़मीन की फ़ानूसों पर लिखा था कि “विक्टोरिया और आल्बर्ट को सुबारक”।

\* अब डचेज़आर्गाइल हुई हैं।

† हाल ड्यूकआर्गाइल।

एक छोटा सा किना भी जो कुछ दूर पर जंगल में था रोशन किया गया था और पहाड़ की चोटियों पर खूशी के लिये आग जलाई गयी थी मैं ने ऐसी परिस्थान की सी शोभा कभी नहीं देखी थी कुछ अच्छी अच्छी अति-शुबाज्जी कूटी और अंत को हार्डलैन्डर लोग बहुत अच्छी तरह बांसरियों की आवाज़ पर मशाल की रोशनी में मकान के साम्हने रोश का नाच नाच उस जंगल में इस नाच ने खुद का मचा दी ।

टेमथ, बृहस्पति, सितम्बर ८ ,

साढ़े नव बजे आलबर्ट लार्डनेडलवेनी के साथ शिकार की गये मैं डचे-कनाफ़ीक के साथ बाहर टहलने गये टे नदी दिवायी दी पानी इस नदी का पथरों में टकराकर चक्कर खाता और फेन निकलता था नदी के दूसरे किनारे ऊँचे पहाड़ बहुत खूबसूरत मालूम होते थे हम गोरसशाला में गये यह मकान क्लार्टज अर्थात् एक किस्म के पथरों का बहुत साफ़ और उमदा बना था इस के ऊपर से बहुत अच्छी सैर ने भोज की नज़र आती थी ।

जिस राह से आये थे उसी राह डेरे पर लौट गये पानी बराबर बरसता था बल्कि कुछ देर खूब जोर से बरसा आलबर्ट साढ़े तीन बजे फिर आये शिकार उन का बहुत खूब हुआ जो सब शिकार मार लाये थे मकान के आगे रखे गये उन्नीस हिरन बहुत से खरगोश और तीन जोड़ा ग्रैम चिड़िया और मुर्ग मिला था कैपरकेल्जी नाम एक चिड़िया घायल आयी थी उसे मैं ने पीछे से देखा तो बड़ी शानदार मालूम हुई ।

शिकार में तीन सौ हार्डलैन्डर गये थे लार्डनेडलवेनी खुद जंगल झांकने में था और आलबर्ट शिकार खेलते हुए ऐवर्फ़ेल्डो के निकट पैदल चले गये थे फिर हम लोग लीडोनेडलवेनी और डचेजसदरलैड के साथ पाँच बजे बाहर निकले टे भोज को देखा और उस के किनारे सुंदर पेड़ों की छाया में गाड़ी पर चले और लार्डनेडलवेनी के अमेरिका के भैंसों को देखा ।

शुक्र, सितम्बर ९ ।

नव के बाद आलबर्ट फिर शिकार की निकले थोड़ी देर में डचेकनाफ़ीक के साथ लोहे के पुल पर और टे के किनारे जहाँ बराबर घास जमी थी टहलते हुए गये ।

हार्डलैन्डर के पहरे की दो जवान पुराने दस्तूर के अनुसार नंगी तलवार

खींचे हम लोगों के साथ हुये हम लोग इसी सड़क पर रमने के एक छोटे से मकान में टहलते हुये गये एक मोटी नाटो खूब मिजाज औरत करोब चाखीस बरस की बिन की हम दोनों के लिये फूल तोड़ती हुई नज़र आयी उचेज़ ने उस की हमारे नाम से कुछ इनाम दिया वह औरत बड़े सचरज में हुई मेरे पास पहुँच कर बड़े आनंद से कहने लगी कि आप को प्रजा आप की स्काटलैन्ड में देख कर बड़ी मगन हुई है थोड़ी देर में बादल उमड़ आया पानी खूब बरसने लगा मगर हम लोग टहलते ही चले नदी के किनारे घुटने तक कपड़ा पहिने एक औरत की आलू धोते हुए देखा।

डिरे पर पहुँचते ही पानी बंद हो गया मगर जब तब बरसा भी किया पीने तीन बजे आलूबर्ट फिरे जन को दकदकी में शिकार खेलने में बड़ी मिहनत पड़ी कहीं कहीं घुटनी तक दकदकी में फंस जाते थे नौ जोड़े घोष चिड़िया मार लाये थे हम लोगों ने नाश्ता किया और दरबार के कमरे में जा बैठे खिडकी से हार्डलैन्डों की रीस नाच नाचते देखा मगर चफ़सोस कि बराबर पानी बरसता रहा किले में नव बांसरी बजानेवाले थे सभी एक और भी तीन मिनट के बजाते थे उन का दस्तूर था कि हाज़िरी के वक्त, एक बार फिर सुबह के नाश्ते के वक्त, और हम लोगों के बाहर आते जाते हुए और रात के खाने के समय बजाते थे हम दोनों की आवाज़ उस की बहुत भली मालूम होती थी।

सत्रा पाँच बजे उचेज़कीकलियो और उचेज़सदरलैन्ड के साथ गाडी पर हवा खाने निकले लेडीब्रेडल्वेनी की तबियत अच्छी नहीं थी लार्डब्रेडल्वेनी छोड़े पर सवार साथ रहे भील के किनारे और पहाड़ी के बीच से सवारी गयी ईश्वर की सृष्टि पहाड़ी में चमत्कार नज़र आयी छोटी छोटी नीची भोपड़ियाँ धुँएँ से ऐसी भरी थीं कि मारे अधिरे के कुछ भी दिखलायी नहीं देता था विन्नायस का पहाड़ जिस को चार हजार फुट ऊँचा कहते हैं अच्छी तरह देखा आगे बहुत दूर पर बिनमोर का पहाड़ और लायन पीग्ले गलियन नदी और बहुत सी टूनें दिखलायी दीं साढ़े सात बजे जब डिरे में कौट आये बिलकुल पंधेरा हो गया था आठ बजे खाना खाया साहँ और लेडीरतवेन और लार्ड और डेको डंकन ने यहीं खाना खाया खाना खाने के बाद नब्बे आदमी के करोब आये और नाच हुआ लार्डब्रेडल्वेनी के साथ हम ने ज़ादिल का नाच शुरू किया और आलूबर्ट उचेज़कीकलियो के साथ नाचे



रीस का कई नाच हुआ वह बहुत सुंदर और दिखानगी का मालूम होता था।

शनीचर, सितम्बर १० ।

हम लोग गोरमशाका तक टहलते हुए जा कर लौटे दो दिन के बाद आज सुबह को आकाश निर्मल हुआ खेडोब्रेडल्वेनी के साथ हम कुछ दूर गाड़ी पर और सब लोग पैदल गये उतर कर हम लोगों ने चोल और बलूत का पिड़ लगाया फिर गाड़ी पर सवार हो कर सब के सब भोज तक गये और किशो पर सवार हुए खेडोब्रेडल्वेनी डचेज़ सदरलैन्ड और खेडोब्रेडल्वेनी के साथ खुश हो गयीं और हम लोगों के संग डचेज़नार्फोका डचेज़बोकनियो और लार्डब्रेडल्वेनी थे दो बांसरीवाले किशो में एक जंजी जगह पर बैठ कर अक्सर बजाते रहे "खेडोब्रेडल्वेनी" नाम किताब जो हम ने इस घर से में पढ़ी तो उस में इस कवि ने हम को उस दिन की सैर ताज़ी याद दिलायी।

सवैया—देखहु ध्यान दै आगे जहान के गर्व भरे वर बेनु जजावत ।

धावत वेग सौं बीच समुद्र के तान पुरान डारलैन्ड को गावत ॥

बाजत वेनु के नीचे सरंग भूषा फहरात सदा छवि छावत ।

सुख तरङ्गनि सौं भरे सिन्धु के मध्य को मानो सुधारत आवत ॥

टे भोज से लार्डब्रेडल्वेनी के आचमोर बंगले तक जो ठीक भोज के किनारे पर है १६ मील को घेर बड़ी खुशी से हुई यहाँ दोनों तरफ बड़ी कौफियत नज़र आती थी बिनलायर्स का पहाड़ जंजे जंजे पेड़ों से लदे पहाड़ों के बीच छोटे छोटे झरने समेत और दूरसे केनमोर के पहाड़ की भाँक और भोज का फ़ैफ़ार बहुत ही सुंदर दिखायी दिया मक्काहीं ने बड़ी खुशी से अपने दो अनोखे गीत गाते उन को बोली बड़ी गलबल थी पर तौ भी बहुत ध्यारी कप्तान मैगडौगलने जो सर्दार मैगडौगल खान्दान का था और किशो को पतवार धामे था हम लोगों को असल कोरन् का ब्रूचज़ेवर दिखलाया जो उस के पुरखाओं ने लड़ाई में राबर्टब्रूम से लिया था आचमोर बड़े झीके पर है पहाड़ों के ऊपर से पेड़ सुंदर पानी तक झुके हैं और चारों ओर पहाड़ों का झलका होने से यह जगह बड़ी मनोहर हो गई है इस रम्य छोटी सी जगह में हम लोगों ने किशो से उतर कर कुछ नाश्ता किया आज आकाश बहुत निर्मल था आचमोर में हम लोग घौने तीन भजे पंचे और तीन बजने पर बीस मिनट तक वहाँ रहे डारलैन्ड लोग वहाँ फिर आये लार्ड और खेडोब्रेडल्वेनी की तबज़ुह और मिह्रवानी वेहद थी खेडोब्रेडल्वेनी बहुत

नालुका बदन है सुकाम किनिम् से हम लोगो का गुज़र हुआ यहाँ एक पहाड़ी नदी बड़े बड़े एयरो से टकराती हुई और भरनों की तरह गिरती हुई बह रही थी।

अब हम लोग बड़े जंगल में आये शुरू हम का डाकहार्ट की दून से हुआ डाकहार्ट नदी हमो में से बहतो है सिवाय दलदल और ऊँचे पथरो से पहाड़ों के और कुछ नहीं गुज़र जाता था एक छोटी सी भील के कगारे यैसो एक कैरगाह में आये कि वैसो कभो नहीं मसोब हुई थी इस भील का नाम मेरे अनुमान में सारागिनी है ग्लेन्बोम्स की लंबी घाटी देखने से खैर घाटी की तमबीर याद आती है सड़क कुछ दूर तक पहाड़ के ऊपर और नीचे बनी है विनबोर्लिक पहाड़ को भी देखा धर्महेड की भील पर छोड़े बदले गये लार्डब्रेडस्वेनी छोड़े पर सवार इस सुकाम तक आये थे इस के बाद बराबर पानी बरसता रहा हम लोगो की सवारी धानभील के पास से गयी यह भील सुन्दर लंबी और ऊँचे पहाड़ों के दामन में है लेकिन टे भील के बराबर लंबो नहीं है जब हम लोग फिर कार सेन्टफिलेक्स की तरफ गये भील अधिक सुन्दर दिखलाई देने लगी एक पहाड़ पेड़ों से ढरा भरा बहुत खूबसूरत गुज़र आया।

हम लोगो ने ग्लेनार्टेनो का पहाड़ भी देखा उस पर लार्डविन्नी का डिरम् का जंगल है कोमरो में आखिरी छोड़े बदले जान के पहिले सरडी-लंडस के डुनोरा नाम मकान के पास आये और तब विलियम सन् साहिब के मकान और सरडव्यू कोयमरे के आक्टरटायर मकान से गुज़र हुआ बहतीरो जगहों में फूल पत्ता के दरवाजे हमारे पहुँचने की खुशी में बनाये थे हम लोग छोफ में हो कर गये और सात बजने के थोड़ी देर बाद एक निहायत खड़े चढ़ाव को राह हो कर ड्रमंड के किसे में पहुँचे लार्डविन्नी ने दरवाजे तक इस्तिक्बाल किया और हम लोगो के बहने के कमरो तक ले गये हमारे छोटे थे मगर नफोस सिवाय लार्ड और लेडीविन्नी और उन की दो बेटो और खास हमारे आदमियों के खाले की मेज़ पर जो लोग थे उन के नाम ये हैं डेवेज़मदरलैन्ड और लेडीथकोजेवथ और लार्ड और लेडीकि-रिंगटन् और हीथकोट साहिब और उन की बीबी और लूकडीरीशव्यू और लार्डवैमल्टमटन् और ड्रमंड साहिब और गारद के अफसर लोग।

डमंड का किला, एतवार, सितेम्बर ११ ।

एक बाग की पैर की बड़ फ़ासदेग के पुराने बागों की तहर नहरों से आरास्त बहुत हो उमदा है पुराना किला और टूटा हुआ मिहराबी रास्ता देखा ।

बारह बजे दरबार के कमरे में नमाज़ हुई एक कम उमर पादरी ने बहुत अच्छा उपदेश किया ।

तीसरे पहर पानी बराबर बरसता रहा जब सुक़े लिखने से फ़रागत हुई आलवर्ट को "दिजे आफ़ दी लास्ट मिन्सट्रेन्" किताब का पढ़ना तीन शेर पढ़ कर सुनाया इसी हम लोगों का भी ख़ूब बहका फिर रेडनी-गर को बनायो हुई पुरानो छापी की तहवीरें जो बहुत उमदा और अजीब मालूम होती थीं देखीं पाठ बजे खाना खाया डचिज़मदरलैन्ड और लोडी कमीज़ेवय रखसत हो गयी थीं मगर लार्ड और लोडीएसरकार्न और लार्ड और लोडिकिन्सोन् अपनी लड़की समेत खाने में शरीक हुईं ।

सोमवार, सितेम्बर १२ ।

पांच बजे आलवर्ट डिरन् के शिकार को निकले और डचिज़ नाफ़ीक के साथ में टहलने गयी ।

कुल हाईलैन्डर मुलाज़िम विलीबी के लोगवाग को गिनती में एक सौ दस थे सहन में सफ़ बांधे खड़े थे विलीबी का लड़का और मेजर डमंड उन के सदाँर थे लोडिविलीबी के साथ में पैदल फिरती रही हथियार जो सिपाही बांधे थे बिलकुल लार्डविलीबी के थे उन में एक तलवार दोहरे कवज़े की थी जो वैनकबर्न की लड़ाई में काम आयी थी सुना कि डंकेन्ड में नौ सौ को करीब हाईलैन्डर थे जिस में पांच सौ पथोक के लोग थे और पहरा वगैरः सब लेकर हजार जवान हाउलैन्डर थे ।

आख़िर को तीन बजने से कुछ पहिले आलवर्ट ख़ूब धूप में जले भुने और निहायत थके हुए फिर सुक़ को उन के फिर आने की खुशी हुई एक बारहसिंघा शिकार कर लाये थे उन्ही ने कहा कि मिहमत बढ़ी हुई और मुशकिल बहुत उठायो एक किसान के घर में कपड़ा अपना बदल किया आ डमंड के किले से ब्लेनार्टनी दस मील धर है वहाँ तक वे गाड़ी पर गये थे सोना नाम एक मख़्म जिस का मकान वहाँ से निकल है काय गया था और

[ आलबर्ट ने कहा कि वह बड़ा चाचाक है आलबर्ट ने चार्ल्स \* को अपने इस अजीब शिकार का मुखसूर हास लिखा था उस का खुलासा यह है ।

“ कि निःसंदेह इस प्रकार का हिरन् का शिकार ओट में चलकर करना बड़ी मिहनत का है मगर दिनभरगी भी उस में बड़ी है वहाँ एक पेड़ या झाड़ी भी नहीं है कि जिस को ओट में छुप सकें इस लिये हिरनों को घेरने के लिये हमेशा चौकचा रहना पड़ता है पहाड़ की तराई में इस ढंग से रहना पड़ता है कि हवा के रुख से उन को दूग पड़ते घुटनों के बल चलना और बिलकुल अमीबा रंग का कपड़ा पहनना ज़रूर है ” ।

साढ़े चार बजे हम लोग लेंडो बिस्वीबी और डचेज़बोकलियो के साथ गाड़ी पर सवार हो कर निकले फर्नटावर में जो सरडीवेयर्ड की जगह है गाड़ी रुकी और फिर मेजरमोर के एक्कार्नी के सुकाम पर ठहरे यहाँ हम लोगों ने इस उमदा मकान को देखा जो मेजरमोर बनवा रहे हैं तब कैम्बलूमंजी और सरडबलूमरे के इलाकों की राह हो कर घर सौटते हुए हार्ड-लैंड पहाड़ों को खूब सैर हुई दिन आज का बहुत साफ़ था आठ बजे रात को खाना खाया बिलडेवन और सिफ्टन और क्रवेन कैम्बेल मंजो आदि लोग खाने में शरीक हुए खाने के बाद और भी लोग आये बहुत से घुटन तक कुर्ती पहिने हुए थे कई नाव रील् का हुआ मंजो का कैम्बेल नाचने में बड़ा होशियार है हम लोग भी देखाती तौर पर नाच में सार्डबिस्वीबी के साथ और आलबर्ट लेडीकोरिंगटन के साथ नाचे ।

मंगल, सितम्बर १३ ।

तड़के चलना था इस लिये सात बजतेही उठे और आठ बजे से पेशवर हाज़िरी खायी नव बजे रवाना हुए आज सुबह की कोहासा था लार्डस्ट्रेथ स्लोन के मकान के नज़दीक से नये और बूढ़ी लेडीस्ट्रेथस्लोन के पास नहलते भर ठहरे यहाँ तक लार्डबिस्वीबी घोड़े पर साथ आये थे बाद इसके सुकाम पार्डक् में आये जहाँ रुमो लोगों का बनवाया हुआ लिम्डम नाम एक अजीब लश्करगाड़ है आलबर्ट बाहर निकल आये मैं गाड़ी में बैठी रही मेजरमोरे ने उन को लश्करगाड़ दिखाया वह अब तक बखूबी काम है ।

\* मेरा सौतेला भाई शाहज़ादा लीनिगेन जो १८९३ ई० में परलोक को सिधारा है ।



ग्रीनलीफनींग में घोड़े बदले गये और डब्लेन् हो कर बारह बजे हम लोग स्टूरलिंग पहुँचे गलियें तंग और भीड़ बहुत ज़ियादा और इंतज़ाम बहुत कम होने से बारदात का खौफ़ था किले तक रास्ता इतना ऊँचा था कि डर मालूम होता था तमाम राह आगे जुलूम के लिये पैदलों की भीड़ का तांता था और गर्मी शिहत से मालूम होती थी किला बड़े मीके पर बना है मगर एडिन्बरा के किले की मैं ज़ियादा पसंद करती हूँ बूढ़े सरआर्चबाचडक्रिस्टी ने सब जगहों को बखूबी दिखाया वह कोठरी जिस में दूसरे जेम्स ने डग्लस् को मारा था और वह खिड़की जिस में से उसे फेंका था हम लोगों ने देखी छत इस कोठरी की अजीब किते की है भिफ़ पचोस वर्ष का अर्चा होता है कि इसी बाग़ में एक ठठरी मिली थी और अजब नहीं कि डग्लस् को रद्दी हो छत के ऊपर से बहुत दूर तक निगाह दी जाती है लेकिन दिन की इतना कोड़ासा था कि हार्डलेन्ड के पहाड़ बखूबी नज़र नहीं आये सरयेक्रिस्टी ने वैनक्वर्न कि लड़ाई का मैदान और नोल याने वह टोला किले की दीवारों के नीचे सटा हुआ दिखाया जहाँ से बीबी लोग फौज को कवाइद् और कसूरत देखती थीं बिलकुल पुष्टि अब तक काइस है नाक्स का बनाया हुआ मिस्वर भी देखने में आया ।

इस के बाद हम लोग फालकक होकर निकले कैलेन्डर में फ़ार्बम् साहिब के रमने पर घोड़े बदले गये फ़ार्बम् और सरमिचेल्वूस् ये दोनों स्टूरलिंग के भी उधर से घोड़े पर सवार हम लोगों के साथ थे रास्ते में लार्डजेट्लैण्ड से मुलाकात हुई और लिनलिथगो में जहाँ फिर घोड़े बदले गये पहुँचने से कुछ पहिले लार्डहीप्टीन् मिले अफ़सोस कि वह बादशाही महल जिस की बड़ी तारीफ़ सुनी थी देखने रद्द गया थोड़ी देर बाद लार्ड-बोक्लियो मिले और अपने बहुत से असामियों की साथ लिये हुए घोड़े पर सवार डालकीथ तक हमराह आये कर्कलिट्टन् में घोड़ों की डाक बदली गयी और फिर जाकर एडिन्बरा की सरहद्द पर घोड़े बदले एडिन्बरा में बहुत लोग जमा थे मगर हम लोग ठहर न सके साढ़े पाँच बजे डालकीथ में दाखिल हुए ।

६५ मील का सफ़र हुआ मैं बहुत थक गयी और यहाँ ख़ैरीयत से पहुँच जाने पर बड़ी खुशी हुई ।

डालकीथ, बुधवार, सितम्बर, १४ ।

स्नाटकौण्ड में हम लोग अब आज हो के दिन हैं' हकीकत में यह एक बड़ा रमणीय स्थान है सुभी इस के छोड़ने का बहुत बड़ा रंज है पैदल जाकर हम लोगों ने उस सुंदर बनस्पतिशाला को देखा जिसे छूक ने पाले से बचाने की पेड़ों के गमले रखने के लिये बिलबुल पत्थर का बनवाया है साढ़े सोन बजे डचेज़बोकलियो के साथ मैं बाहर निकली और सिर्फ़ कर्नेलबोवरी घोड़े पर सवार साथ रहे मेकबिल रक्षा और सोनहेड नाम एक गांव में हो कर जहाँ कोयले की खान है रोसलीन में आये डालकीथ के करीब २ बहुत से गांवों में कोयले की खान है ।

एक गिरा घर में उतरे यह भक्तान पन्द्रहवीं सदी का बना है और अब तक बहुत दुरुस्त रहा है और इस में काम भी निहायत खूब किया है लार्ड रोसलीन को खानदान का कब्रिस्तान है इसी बाइस लार्ड साहिब इस की मरम्मत रखते हैं रोसलीन खानदान के बीस बेरग ज़िरफ़ बकतर समेत यहां गाड़े गये हैं जब हम लोग गिरा के बाहर आये बड़ी भीड़ जमा थी ।

रोसलीन से हाथार्नडिन को गये वह सुंदर सुकाम नदी कनारें बहुत बलंदी पर है यहां पर भी बड़ी भीड़ देख कर तअज्जुब हुआ ज़रूर ये लोग रोसलीन से हम लोगों से मिलने के लिये दौड़े हुये आये होंगे ।

गाड़ी से उतर कर घड़ाई की अद्भुत खोहों को देखा वह निरी पत्थर की चट्टानों में है और उस में ऐलेग्जैण्डररेम्जे और उस के साइसो साथी बहुत दिनों तक छुपे रहे थे डचेज़ ने बयान किया कि नदी के किनारे किनारे रोसलीन तक इस प्रकार की बहुत सी गुफा है ।

बोनीरिंग नाम एक दूसरे कोयले की खान वाले गांव और डालकाथ में हो कर डेरे में आये ।

बृहस्पति, सितम्बर १५ ।

साढ़े सात बजे हम लोगों ने हाज़िरी खायो और आठ बजे कूच किया डचेज़बोकलियो और लार्डलिवरपूल और लार्डहार्डविक साथ हुए सेडियां और इक्केरी लोग पहिले ही धूप की लड़ाई पर सवार हो गये ये दिन आज का बहुत साफ़ और चमकीला था एडिन्बरा में हो कर हम लोग गये बर्डा की तैयारी बड़ी खूबी के साथ हुई थी और इन्तिज़ाम भी हमदा या गाड़ी से उतर कर वह पर से ड्राईडेन्ट नाम एक बड़े धूप की नाव पर भी "जेन-

रफ स्टीम नैविगेशन कम्पनी" का था सवार हुए झूक और डचेज़बोकलियो और लेडोजेस्काट एमकिनवाले और कार्ड बीडर और लेडोइम्सैम्वेल जहाज़ पर पाये और हम लोग उन से सम्मत हुए डचेज़ और झूक बड़ी मिहरबानी और खातिर से पेश पाये और हम लोगों की मिहमानदारी बहुत बढ़ के करते रहते उन के सबब डालकीथ मानी हम लोगों का घर हो गया था इस का शुकर अदा किया ।

ज्यों ज्यों स्काटलैन्ड का सुंदर किनारा पांखों से गाढ़ होता जाता था ऐसे दिनचर्य और दिवसों को सैर के खतम होने का खेद होता था हम लोगों को यह कभी न भूलेगा ट्राईडेन्ट जहाज़ पर बर्निम्बत रायलजार्ज के ज़ियादा सामान था और बहुत खूबसूरती से सजा था मोरबहर सरईबूष एक बूढ़ा खूश मिजाज़ आदमी और कैमैण्डरबुलाक और इन के सिवाय तीन और अफसर इस जहाज़ पर थे राडामानयुम् जहाज़ चन्द नौकर और गाड़ियों समेत और शीयरवाटर् जहाज़ जिसपर लार्डलिवरपूल और लार्डहार्डबिल सवार थे कल ही रात को खुल गया ।

सैनामण्डर जहाज़ जिन पर ऐनसन् माहिस और उनकी बीबी सवार थीं और फ़ोयरलेन् और रायलजार्ज हम लोगों के साथ ही खुले मगर हवा मुवाफ़िक थी इस लिये रायलजार्ज निगाह से गाढ़ हुआ फिर थोड़ी देर में और सब जहाज़ भी पोछे रह गये केवल मानक जहाज़ ने साथ न छोड़ा वह "जेनरल स्टीमनैविगेशन कम्पनी" का है और उस पर चौड़े घे डान्टेलन् के पुराने किले का खड़हर समुद्र के किनारे पर वासराक् से मिला हुआ है वासराक् पर समुद्र की एक नाम सुर्गाविये और टापू की बत्तकें चारों तरफ़ ऐसी छा गयी थीं कि बिलकुल भ्रष्ट हो गया था ।

दो बजे प्रमिड सैन्टएव्महेड की देखा जिस के पहिले मर्तवा कुक जाने का अफ़सोस था मारमिअन् नाम किताब खोल कर मैंने चंद शेर जो उस में संसारत्यागी औरतों के हाल में है पढ़े इन औरतों ने होली टापू तक समुद्र की राह सफ़र किया था और फिर उसी टापू पर एक संसार त्यागियों के रहने के सठ टूटे फूटे निशान को अपनी आंख से देखा तब इस के बाद बैम्बरा का क़िला और फ़िनी टापू नज़र आया पहिली मर्तवा जिस दिन हम लोग इधर से गये थे उस की पहिली रात को बेचारा प्रेसडार्कीज़ मर गया था यह ख़बर सुन कर अफ़सोस हुआ ।

शुक्र, सितम्बर १६ ।

जहाज़ के अंदर खबर पायी पाँच बजे सुबह को हम लोग फ्लाम्बराइड से आगे बढ़ आये हैं ब्लाकईग्ल नाम धूँएँ के जहाज़ को साढ़े आठ बजे रात को छोड़ आये थे और अब जहाज़ के सहन पर निकलने के वक्त तक सिर्फ़ उस का धूँआं नज़र आया साढ़े नव बजे आलबर्ट के बाद मैं भी सहन पर आयी आज का सुबह बहुत साफ़ और चमकीला था हम लोगों ने कुछ कहवा धिया और टहलते रहे अब हम लोग किनारे से बाहर अथाह समुद्र में आ गये थे तमाम दिन साफ़ था पाँच बजे राडामैनथम् के नज़दीक आये वह आज दिन भर नज़र आया किया है साढ़े पाँच बजे जहाज़ के सहन पर निशान और झंडियों का एक छोटा सा खेमा बना कर उस में हम लोगों ने बड़े मज़े से खाना खाया पौने छ के करीब यारमथ से आगे बढ़े यह जगह विशाल बराबर बटाटा था आलबर्ट ने देख कर कहा कि यह फ्लेम नगर का मालूम होता है सुंदर चांदनी लिखी हुई समुद्र पर झलक रही थी इस को सराहते हुए हम लोग सहन पर टहल रहे थे ।

साढ़े सात बजे जहाज़ के अंदर गये “दीले आज़दिलाह मिन्स्ट्रल” नाम किताब के चौथे और पाँचवें शीर को पढ़ कर आलबर्ट को सुनाया और फिर पियानो बजाया ।

शनीचर, सितम्बर १७ ।

तीन बजे सुबह को तोपों की धमक से नींद खुल गयी पर यह अवाज़ नागवार न थी क्योंकि नदी के सहाने पर सुकाम गौर में पहुँच गये थे छ के करीब मुना कि अभी हम लोग राडामैनथम् छोड़ आये हैं और सीधेन्द्र पर जहाज़ रुका है कि ब्लाकईग्ल साथ हो जाय आज का दिन साफ़ पर कुछ कुछ कुहामा भी था ।

नदी पर जहाज़ चलता हुआ भक्ता मालूम होता था दस बजने के दस मिनट बाद हम लोग किशती से ज़मीन पर उतरे डेजिज़नाफ़ोंक और मिस्मै-टिल्डायैगेट और इक्कोरी लोग यहाँ पर मौजूद थे मगर दूमरी का पता न था सरजेमकल्लाक ड्राईडेंट जहाज़ में हम लोगों के साथ थे स्टेशन में जा कर रेल गाड़ी पर सवार हुए और साढ़े बारह बजे विंज़र किले में पहुँच गये ।



## चंद की कविता ।

दोहा ।

श्रीगुरु नाथ प्रभाव तें , होत मनोरथ सिद्धि ।  
 घन तें ज्यों तरु बेनिदल , फूल फलन की वृद्धि ॥ १ ॥  
 किये हृदय प्रस्ताव के , दोहा सुगम बनाय ।  
 उक्ति अर्थ दृष्टांत करि , दृढ कै दिये बताय ॥ २ ॥  
 भाव सरस समझत सबै , भले लगै यह भाय ।  
 जैसे अवसर की कही , बानी सुनत सुहाय ॥ ३ ॥  
 नोकी ये फीकी लगै , बिन अवसर की बात ।  
 जैसे बरनत जुद्ध में , नहि सिंगार सुहाय ॥ ४ ॥  
 फोकी ये नोकी लगै , कहिये समै विचारि ।  
 सब की मन हरखित करै , ज्यों बिबाह में गारि ॥ ५ ॥  
 रोगी अवगुन ना गनत , यहै जगत की चाल ।  
 देखो सब ही श्याम कौं , कहत ग्याल सब लाल ॥ ६ ॥  
 जो जाकौं प्यारी लगै , सो तिहिं करत बखान ।  
 जैसे बिष कौं बिष भखी , मानत असुत समान ॥ ७ ॥  
 जो जाकौं गुन जानही , सो तिहिं आदर देत ।  
 कोकिश अंबडि खेत है , काग निंबीरी खेत ॥ ८ ॥  
 अन उद्यम ही एक कौ , यो हरि करत निबाह ।  
 ज्यों अजगर भख आनिकै , निकसत बाही राह ॥ ९ ॥  
 हलन चलन की सकति है , तीनों उद्यम ठानि ।  
 अजगर कौं सृगपति बदन , सृगन परतु है आनि ॥ १० ॥  
 कहा होय उद्यम किये , ज्यों प्रभुही प्रतिकूल ।  
 जैसे निपजे खेत कौ , करै सबभ निरमूल ॥ ११ ॥  
 जाही तें कहु पाइयै , करिये ताकी आस ।  
 रीते सरवर पै गयै , कैसें बुझत पियास ॥ १२ ॥  
 जो जाही के छे रहै , सो तिहिं पूरे आस ।  
 स्नाति बूंद बिन सघन में , चातक मरत पियास ॥ १३ ॥

गुनही तऊ मगाइये , जो जीवन सुख भौन ।  
 आग जरावत नगर तऊ , आग न आनत कौन ॥ १४ ॥  
 रस अनरस समझै न कहु , पड़े प्रेम की गाय ।  
 ओकु मंत्र न जानई , सांप पिटारे जाय ॥ १५ ॥  
 कैसे निबहै निबस जग , कर सबजन सीं गैर ।  
 जैसे बस सागर बिषै , करत मगर सीं बैर ॥ १६ ॥  
 कीजै समझ न कीजियै , बिन बिचारि बिबहार ।  
 आय रहत जानत नहीं , सिर की पायन भार ॥ १७ ॥  
 दोयी अवसर की भौं , लासों सुघरे काम ।  
 खेतो मूखे बरसवौ , घन को कौन काम ॥ १८ ॥  
 अपनी पड़च बिचारो कै , करतव करिये दौर ।  
 तेते पांव पसारिये , जेतो सांवी ठौर ॥ १९ ॥  
 पिसुन कृष्णी नर मूजन सीं , करत बिसासन चूकि ।  
 जैसे दाधो दूध की , पीवत छाछहि फूँकि ॥ २० ॥  
 प्राण लखातुर के रहै , थोरे हूं जलदाम ।  
 पीछे लक्ष्मर सहस घट , डारे मिलत न मान ॥ २१ ॥  
 विद्या धन उद्यम बिना , कही जु पावै कौन ।  
 बिना हुकाये ना मिलै , ज्यों पंखा की पीन ॥ २२ ॥  
 बनती देख बनाइये , परन न दीजै खोट ।  
 जैसी चलै बयार तब , तैसी दीजै खोट ॥ २३ ॥  
 ओछि नर की प्रीति की , दीनी रीति बताय ।  
 जैसे छोजर ताल जल , घटत घटत घट जाय ॥ २४ ॥  
 अन मिलती जोई करत , ताही की उपहास ।  
 जैसे जोगी जोग में , करत भोग की आस ॥ २५ ॥  
 बुरे लगत सिख के बचन , हिये बिचारो आप ।  
 करवे भेषज बिन पियै , मिटै न तन को ताप ॥ २६ ॥  
 बड़े बड़ेन को , दुख हस्त , पै न नीच यह थाप ।  
 घन मेटत पैना सरित , गिरवर ओषम ताप ॥ २७ ॥  
 गुरुता लघुता पुरुष की , आश्रय बसतें होय ।  
 करो वृंद में बिंध्य सौ , दरपन में लघु सोय ॥ २८ ॥

रहे समीप बडेन के , होत बडौ हित भेन ।  
 सबही जानत बढत है , वृक्ष बरानर बेन ॥ २८ ॥  
 उपकारी उपकार जग , सब सी करत प्रकास ।  
 ज्यों कटु मधुरे तरु मलय , मलयज करत सुवास ॥ २९ ॥  
 होय बडेहन हूँजिये , कठिन मलिन सुखरंग ।  
 सरदन बंधन छत सद्धत , कुच इन गुननि प्रसंग ॥ ३० ॥  
 कहूँ जाहु नाहिन मिटत , जो बिधि निख्यो निहार ।  
 अंकुस भय करि कुंभ कुच , भये तहां नख मार ॥ ३१ ॥  
 बिधिरुठै तूठै कवन , को करि सकै सहाय ।  
 बनदब भयंजनगत नलिन , तहं हिम देत जराय ॥ ३२ ॥  
 प्रेम पगत बरजोन क्यौ , अब बरजत बेकाज ।  
 रोम रोम बिष रमरह्यो , नाहिन वनत इलाज ॥ ३३ ॥  
 फेर न छै है कपट सौ , जो कीजै ध्योपार ।  
 जैसे हांडो काठ को , चटै न दूजी बार ॥ ३४ ॥  
 करिये मूखकों होत दुख , यह कहौ कौन सयान ।  
 या सौनेकों जारिये , जासौं टूठे कांन ॥ ३५ ॥  
 नैना देत बताय सब , हिय को हेत अहेत ।  
 जैसे निरमल आरसी , भली बुरी कह देत ॥ ३६ ॥  
 अति पर चैते होत है , अरुचि अनादर भाय ।  
 मलयगिरि की भीजनो , चंदन देत जराय ॥ ३७ ॥  
 सो ताके अवगुन कहै , जो जेहि चाहै नाहिं ।  
 तपत कलंकी बिष भख्यो , विरहिन ससिहि कहाहि ॥ ३८ ॥  
 सुखदाईये देत दुख , सौ सब दिन कौं फिर ।  
 ससि सीतल संजोग में , तपत विरह को बेर ॥ ३९ ॥  
 बिधि के विरचे सुजन हूं , दुरजन सम छै जात ।  
 दीपहि राखै घवन तें , अंचल बहै बुझात ॥ ४० ॥  
 जासो जैसी भाव सो , तैसी ठानत ताहि ।  
 ससिहि सुधाकर कहत कोउ , कहत कलंकी आहि ॥ ४१ ॥  
 आप बुरे जग है बुरों , भली भले जगजानि ।  
 तजत बहेरा छाहि सब , गहत आव की आनि ॥ ४२ ॥

सौ लु सयाने एक मति , यह कहवत है सांच ।  
 काचहि पांच कहन कीउ , पांचहि कहै न कांच ॥ ४४ ॥  
 भले बुरे सब एक सो , जो जौ बोलत नाहि ।  
 जान परतु है काक पिक , ऋतु बसंत के सांचि ॥ ४५ ॥  
 भाव भाव की सिद्धि है , भाव भाव में भेव ।  
 जो मानो तो देव है , नहीं भीत को लेव ॥ ४६ ॥  
 निरफल श्रौता मूढ पै , कविता बचन बिहास ।  
 हाव भाव औ तीय के , पति आंधि के पास ॥ ४७ ॥  
 भले बुरे जहां एक से , तहां न बसिये जाय ।  
 ज्यों अन्याय पुरमें बिकै , खर गुर एकै भाय ॥ ४८ ॥  
 न करि नाम रंग देखि सम , गुन बिन समझे बात ।  
 मात भात भीदूध तें , सेहड के तें घात ॥ ४९ ॥  
 बिन गुन कुल जाने बिना , मानन करि मनुहारि ।  
 ठगत फिरत सब जगत कौ , भेष भक्त कौ धारि ॥ ५० ॥  
 छितडू की कहिये न तिहिं , जो नर होय चघोष ।  
 ज्यों नकटे कौ आरसी , होत दिखाये क्रोध ॥ ५१ ॥  
 अति अनोति कहिये न धन , जो प्यारी मन होय ।  
 पाये सोने की लुगै , पेट न मारि कोय ॥ ५२ ॥  
 मूरख कौ पोथी दई , बांचन कौ गुन गाथ ।  
 जैसे निरमल आरसी , दई अंध के हाथ ॥ ५३ ॥  
 मधुर बचन तें जातु मिट , उत्तम जन अभिमान ।  
 तनक सीत जलसी मिटै , जैसे दूध उफान ॥ ५४ ॥  
 जासी रक्षा होत है , है ताही सौं घात ।  
 कहा करै कोऊ लबै , बार ककरिया खात ॥ ५५ ॥  
 सबै सहायक सबल के , कोउ न निबल सहाय ।  
 पवन जगावत आग कौ , दीपहि देत बुझाय ॥ ५६ ॥  
 कछु बसाय नहिं सबल सौं , करै निबल पर जोर ।  
 चलै न अचल उखारत , डारति पवन भकोर ॥ ५७ ॥  
 सबै समझ के कीजिये , काम वहे अमिराम ।  
 सैधव माग्यौ जैव तें , घोरा कौ कहा काम ॥ ५८ ॥



जो जाही सों रस रझी , तिहिं ताही सों काम ।  
 जैसे किरवा आक कौ , कहा करे बर आम ॥ ५८ ॥  
 जिय चाहै सोई मिलै , जियत भली हिय जागि ।  
 प्यासी चाहत नीर कौ , कहा करे लै आगि ॥ ५९ ॥  
 जिय पिय चाहै तुम करी , घन चन्दन उपचार ।  
 रोग कछू औषध कछू , कैसे होत करार ॥ ६० ॥  
 बिरह तपन पिय बात तै , उठत चौगुनी जागि ।  
 जल के सीचे चढत है , ज्यों सनेह की आगि ॥ ६१ ॥  
 रोस मिटे कैसे कहत , रिस उपजावन बात ।  
 इंधन डारे आग भी , कैसे आग बुझात ॥ ६२ ॥  
 अति हट मत कर हट बटे , बात ना करिहै कोय ।  
 ज्यों ज्यों भीजै कामरी , त्यों त्यों भारी होय ॥ ६३ ॥  
 लालच हू ऐसी भली , जासी पूरे आस ।  
 चाटे हू कहूं ओस के , मिटे काहु की प्यास ॥ ६४ ॥  
 विष हूं तें सरसी जगै , रस में रिस की भाख ।  
 जैसे पित्त ज्वरीन कौ , करवी जागति दाख ॥ ६५ ॥  
 जो जिहिं भावै सो भली , गुन कौ कहु न बिचार ।  
 तज गजसुकता भीखनी , पहरति गुंजा द्वार ॥ ६६ ॥  
 हरिरस हरिहरि विषयरस , संग्रह करत अजान ।  
 जैसे कोड करत है , छाडि मुधा विष पान ॥ ६७ ॥  
 कुल मारग छोडे न कोड , होइ बुद्धि के हानि ।  
 गज एक मारत दूसरो , चढत महाबत आनि ॥ ६८ ॥  
 जासी निमहै जीविका , करिये सो अभ्यास ।  
 वेष्टा पालै सोल तो , कैसे पूरे आस ॥ ६९ ॥  
 दुष्ट न छाडे दुष्टता , कैसेहू सुख देत ।  
 धोये हूं सौ बेर के , काजर होय न सेत ॥ ७० ॥  
 कहूं अवगुन सोइ होत गुन , कहूं गुन अवगुन होत ।  
 कुच काठोर त्यों है भली , कोमल बुरे उदोत ॥ ७१ ॥  
 असुभ करत सोइ होत सुभ , सज्जन बचन अनूप ।  
 सवन पिता दिय दसरथहि , साप भयो सर रूप ॥ ७२ ॥

एक भयो सब को भली , देखो सबद विवेक ।  
 जैसे सत हरिचंद के , उधरे जीव अनेक ॥ ७४ ॥  
 एक बुरे सब को बुरी , होत सबल के कोप ।  
 अवगुन अर्जुन के भयो , सब कृत्तिन की कोप ॥ ७५ ॥  
 बड़े न पै जाचे भली , जदपि होत अपमान ।  
 गिरत दंत गिरदाह तें , गज के तज बखान ॥ ७६ ॥  
 अवगुन करता औरही , देत और कौं मार ।  
 जौं पहुंचै नहि रुद्र कौं , जारत विरह निमार ॥ ७७ ॥  
 मान होत है गुननि तें , गुन बिन मान न होइ ।  
 सुकसारो राखैं सबै , काम न राखै कोइ ॥ ७८ ॥  
 आडंबर तज कीजिये , गुन संग्रह चित चाय ।  
 कीर रहत न बिकौ गज , आगिय घंठ बंधाय ॥ ७९ ॥  
 जैसी गुन दीनी दई , तैसी रूप निबंध ।  
 ये दोऊ कहां पायै , सीनी और सुगंध ॥ ८० ॥  
 अभिजापी एक बात के , तिन में होय विरोध ।  
 काज राज के राज सुत , शरत भिरत करि क्रोध ॥ ८१ ॥  
 जो जाकी चाहे भली , सो ताही की पीर ।  
 नीर बुझावै आग कौं , सोखे ताहि समीर ॥ ८२ ॥  
 अहित कियेहू हित करे , सज्जन परम सधीर ।  
 सोखें हूं सीतल करे , जैसे नीर समीर ॥ ८३ ॥  
 है सहाय हित हू करे , तज दुष्ट दुष्ट देत ।  
 जैसे पावक पवन कौं , मिलैं जराये सैत ॥ ८४ ॥  
 अपनी अपनी ठौर पर , शोभा कहत विशेष ।  
 चरन महावर ही भली , नैनन अंजन रेख ॥ ८५ ॥  
 जो चाही सोई करी , मेरी कहु न कहाव ।  
 जंत्री के कर जंत्र है , जो भावै सो वजाव ॥ ८६ ॥  
 जाकी जैसी उचित तिहिं , करिये सोइ विचारी ।  
 गोदर कैसे ल्याई है , गज सुक्ता गज मारि ॥ ८७ ॥  
 जुदे न जैसे लहत है , मिले बिरंगहु रंग ।  
 काय संग चूनी परत , होत जास मिल संग ॥ ८८ ॥

गहि इलाज देख्यौ सुन्यौ , जासों मिटत सुभाव ।  
 मधु पुट कोटिक देत तऊ , विष न तजत विषभाव ॥ ८८ ॥  
 जाकी जासों मन लग्यौ , सो तिहिं आवै दाय ।  
 भान भस्म विष मुंड शिव , तोहूँ शिवा मुहाय ॥ ८९ ॥  
 होय कछू समझै कछू , जाकी मति बिपरीत ।  
 कानक भखी जैसै जखै , स्याम सेत कौ पीत ॥ ९० ॥  
 प्रेम निबाहन कठन है , समझ कीजियौ कोय ।  
 भांग भखन है मुगम पै , जहर कठिन ही होय ॥ ९१ ॥  
 कोउ बिन देखे बिन मुनै , कौसै कहै विचार ।  
 कूप भेख जाने कहा , सागर की बिस्तार ॥ ९२ ॥  
 देव सेव फल देत है , जाकी जैसी भाय ।  
 जैसै सुख करि पारसो , देखी सोइ दिखाय ॥ ९३ ॥  
 कुल बल जैसौ होय सो , तैसो करि है बात ।  
 बनि क पुत्र जाने कहा , गढ लेवे की घात ॥ ९४ ॥  
 जाकी ओर न जाइयै , कौसै मिलि है सोइ ।  
 जैसे पक्षिम दिस गये , पुरब काज न होइ ॥ ९५ ॥  
 जैसी बंधन प्रेम की , तैसो बंध न ओर ।  
 काठहि भेदै कमल कौ , छेद न निकरै भोर ॥ ९६ ॥  
 जे उदार ते देत है , रिझत जिहिं तिहिंकाश ।  
 गाल बजायै हूँ करै , गौरीकंत निहाल ॥ ९७ ॥  
 अपनी अपनी गरज सब , बोलत करत निहोर ।  
 बिन गरजै बोलै नहीं , गिरवर हूँ कौ मोर ॥ ९८ ॥  
 जो सयही कौ देत है , दाता कहियै सोइ ।  
 जलधर वरषत सम विषम , यल न बिचारत कोइ ॥ ९९ ॥  
 तिन सों बिमुख न हूजिये , जे उपकार समेत ।  
 मोर ताल जल पान करि , जैसै पीठ न देत ॥ १०० ॥  
 जो समझै जा बात कौ , सो तिहिं कहै विचार ।  
 होम न जानै ज्योतिषी , वैद्य ग्रहन की चार ॥ १०१ ॥  
 नवल नेह आनंद उमंग , दुर्गे न सुखचख ओर ।  
 तबही जान्यौ जात है , ज्यो मुगंध की ओर ॥ १०२ ॥

प्रकृत मिली मन मिलत है , अन मिलतें न मिलाय ।  
 दूध दही तें जमत है , कांजी तें फटजाय ॥ १०४ ॥  
 बात कहन की रीति में , है अंतर अधिकाय ।  
 एक वचन तें रिध बढे , एक वचन तें जाय ॥ १०५ ॥  
 एक वस्तु गुन होत है , भिन्न प्रकृत के भाय ।  
 भंटा एक कौं पित करत , करत एक कौं बाय ॥ १०६ ॥  
 सुख में होत सरीक सी , दुख सरीक सो होय ।  
 जाकौ सीठी खाइये , कटुक खाइये सोय ॥ १०७ ॥  
 स्वारथ के सबही सरी , बिन स्वारथ कोउ नाहिं ।  
 जैसे पंखी सरस तरु , निरस भये उडजाहिं ॥ १०८ ॥  
 जो लायक जिनि भांति कौ , तासों तैसी होय ।  
 सज्जन सों न बुरी करै , दुरजन भस्मी न कोय ॥ १०९ ॥  
 सुख बीते दुख होत है , दुख बीते सुख होत ।  
 दिवस गये ज्यों निरस उदित , निरस गत दिवस उदोत ॥ ११० ॥  
 जो भाखें सोई सही , बड़े पुरुष सुख खानि ।  
 है अनंग ताकौं कहै , महा रूप की खानि ॥ १११ ॥  
 दोष भरी न उचारिये , जदपि जथारथ बात ।  
 कहे अंध कौं आंधरी , मान बुरी सतरात ॥ ११२ ॥  
 पर घर कबहुं न जाइये , गये घटत है जोति ।  
 रविमंडल में जातु सभि , कीन कला कबि होति ॥ ११३ ॥  
 ओरहि तें कीमल प्रकृति , सज्जन परम दयाल ।  
 कीन सिखावत है कही , राज हंस कौं चाल ॥ ११४ ॥  
 सज्जन अंगीकृत किए , ताकौं छेड़ि निवाहि ।  
 करई कलंकी कुटिल शशि , तउ शिव तजत न ताहि ॥ ११५ ॥  
 जिन पंडित विद्यातजह , धन सुरख अवरेख ।  
 कुलजा सील न पर हवे , कुलटा भूषित देख ॥ ११६ ॥  
 एक दसा निवहै नहीं , जिन पकटावहु कोय ।  
 रविहुं की एक दिवस में , तीन अवस्था होय ॥ ११७ ॥  
 होय शुद्ध मिटि कलुषता , सतसंगति कौं पाय ।  
 जैसे पारस कौं परस , सोह कनक है जाय ॥ ११८ ॥

## प्रेमगङ्ग तरङ्ग ।

( विशेष मिश्ररनी छंद । )

जय जयति जय सीता रमन;  
 जय जय रमा पति, सुख सदन;  
 जय राम, सन्सृति दुख शमन;  
 भवभय हरन, अशरन शरन ।  
 जय अवधपति, रघुकुल मनी;  
 निज दास वश, त्रिभुवन धनी;  
 आनन्दकन्द कृपायतन;  
 भवभय हरन, अशरन शरन ।  
 अव्यक्तमेकमगोचरम् ;  
 विज्ञान घन, धरणीधरम् ;  
 मण्डन मही, निशिचर दमन;  
 भवभय हरन अशरन शरन ।  
 लावण्य निधि, राजिव नयन;  
 तपसीसुखद, करुणा अयन;  
 कलिमल दबन, मङ्गल भवन;  
 भवभय हरन अशरन शरन ॥

( विचित्र छंद । )

नमामी जानकीरमनं नमामी ।



भजामी भक्तभै शमनं भजामी ॥  
 कृपासागर, मुनीरंजन, गुणागार ।  
 शरासनवानधर, भंजनमहीभार ॥  
 उमावरप्रिय, राजिवनैन, रघुवीर ।  
 खरारी, रावणारी, धीर, गम्भीर ॥  
 कमलकर, पद्मपद, नवकंजलोचन !  
 महा भौ भीर हर, त्रैताप मोचन ॥  
 विरज, रघुवंशभूषण, भूमिमण्डल ।  
 परशुधर मोहहर, हरचापखण्डन ॥  
 नृकेहरि, मीन, कछ, बाराह, बावन ।  
 विविधतनुधर, सदानवचरितपावन ॥  
 विभीषणराजप्रद, अवधेश, सुखधाम ।  
 निरखिलावण्य, लज्जतकोटिशतकाम ॥  
 पतितपावन, शरणभौपीरहर्ता ।  
 चराचरस्वामि, रघुवर, विश्वभर्ता ॥  
 अमित, अज, निर्विकाराव्यक्त, जगदीश ।  
 दिवाकर कुलकमलवनरवि, तपस्वीश ॥  
 सहस्रफन शारदा सकुचायं जिसमें ।  
 तो आस्तुतिशक्ति है फिर और किसमें ॥  
 प्रभो ! तव पद्मपद तजि, सुख कहीं है । ?

नहीं ही है, नहीं ही है नहीं है ॥  
 परम विश्राम है नित एक किस्को ।  
 तुम्हारी ही है अबिरलप्रीति जिसको ॥  
 किया सब ने यही सिद्धान्त अपना ।  
 'सिया रघुवीर सीताराम' जपना ॥  
 प्रबल कलिकाल, और माया प्रबलतर ।  
 अबला सब जीव, औ तपसी अबलतर ॥  
 प्रणतपरितापभक्षक ! पाहि रघुवीर ।  
 धनुषधर, दीनरक्षक ! त्राहि रघुवीर ॥  
 अब अबिरलभक्ति अपनी मुझ को दीजे ।  
 मुझे सब भांति से अपनाय लीजे ॥

( अनूप छंद । )

"जयराम, रूपराशि, कृपासिन्धु, सुखसदन ।  
 सीतानयनचकोरि शरदपूरससिवदन ॥  
 राजीवनैन, नीलसरोरुह तमाल सतन ।  
 लावण्यताविलोकि लजित कोटिशतमदन ॥  
 दशरथतनय, प्रमोदविहारी, रमारमन ।  
 गौरीशप्रिय विरडिज अमर सेव्य, स्यामघन ॥  
 दशसीसरिपु खरारि, स्वभक्तापदादलन ।  
 मुनि, विप्र, सन्त, धेनु धरा देव दुख दमन ॥  
 करकंजचापवान मनोहर जलज नयन ।

सौन्दर्यस्वान मूरति माधुर्य्य छवि अयन ॥  
 केवल कृपा तुम्हारि है कलिकालमलशमन ।  
 विनुतवभजन सुखीनहि करिकोउशतयतन ॥  
 हिय हेरि नाथ ! एक तुम्ही सर्वभयहरन ।  
 सीता सवेरे आयउ प्रभुपद्मपदशरन ॥

( विशेषतोटक छंद । )

“जय अशरणशरण, राम दशरथकिशोर ।  
 जनकनन्दनी मुखविधू बरचकोर ॥  
 सियाप्राणपति, भक्तवत्सज, हरी ।  
 कृपासिन्धु, भगवन्त, रावणअरी ॥  
 कौशल्यातनय, दीनहित, भयशमन ।  
 महीदेव, गो, देव, महि दुखदमन ॥  
 उमानाथ ब्रह्मादि सेवित, उदार ।  
 उरे द्विज चरण चिन्ह, प्रभुताअपार ॥  
 त्रिविधतापहर, कारुणीक, अघहरन ।  
 बिनाहेतु सुखदाइ, मंगलकरन ॥  
 अलख, सञ्चिदानन्द, छविमूर्तिमान ।  
 पतितपावन, अवधेश, करुणानिधान ॥  
 विभुव्यापकानन्त, विज्ञानभूष ।  
 धरे सुर धरा धेनु हित नर स्वरूप ॥



प्रभु स्तुति तेरी मुझसे किसभांति हो ।  
 बड़े से बड़े भी सकेकर न जो ॥  
 न देखी किसूने गिरा थाह लेति ।  
 कही शेष औ वेदोंने “ नेतिनेति ॥  
 मैं बालक, प्रभो ! अल्प अति मति मेरी ।  
 अपार और अकथनीय महिमा तेरी ॥  
 अमित है, अमित है, अमित है, अमित ।  
 अधिक और क्या कह सके रामहित ॥  
 तेरे पद्मपद छुट, नहीं और ठौर ।  
 न तव भक्तिछुट जगमें कछु सार और ॥

### प्रासङ्गिक कविता ।

परिणतवर श्रीदुर्गादत्त कवि कृत ।

धिग जीवन है जग में तिनको जिन शास्त्र  
 को भेद कछू नहीं जानो । धिग जीवन दत्त कह्यो  
 तिनको जिनको कहूं उद्यम को न ठिकानो ॥ धिग  
 जीवन जाति के बाहिर को जिन को न कछू मर  
 जाद को बानो । सब व्यर्थ मनोरथ हैं जिन के  
 धिग जीवन तो तिनहूँ को बखानो ॥ १ ॥

चंचल बीजुरी को चमको जिमि बादर खण्ड

को चंचल छाया । चंचल है जिमि पीपर पात  
 औ चंचल दीप को सीस बताया ॥ चंचल है  
 जिमि फूल की आगि धुजाहु को कोन ज्यों चंचल  
 गाया । दत्त जू तैसोई चंचल जोवन तैसिये  
 चंचल है यह काया ॥ २ ॥

जनम सुधारिबे कों आपनो जो चाहै है तो  
 मानैं मति मतो मित्र अब तू अपर को । मूढ़ तो  
 मुड़ै है घर के नतें छुड़ै हैं कहैं गिरि को निवासी  
 कै भिखारी घर घर को ॥ दत्त कवि तेरो सुभ  
 चिन्तक सदा को कहै नरक निवारि पद पाय है  
 अमर को । धामहूँ सम्हारि निज काम जनि टारि  
 पर द्वै घरी उचारि नित नाम हरीहर को ॥ ३ ॥

देव को मन्दिर हू किन होइ पै चोर रहै नित  
 चोरि के तार मैं । कामु के चेला जु कामी अहैं  
 तिन को मन जैसे रहै पर दार मैं ॥ भक्तन को  
 भगवन्त के माहि त्यों दत्त गृही को रहै गृह  
 कार मैं । त्योंही महान सुजानन को मन सान्यो  
 रहै पर के उपकार मैं ॥ ४ ॥

बाह वा खाई न जाति अहै पहिरी नहि जाति  
 या नीकै पतीजिये । बेचन याहि गयो सो बिको

नहि नाहि गिरों धरी का अब कीजिये ॥ जो कुछ  
आप की है सरधा तो सुदत्त दया करि द्रव्यहि  
दीजिये । तो यह बाहवा राखिहों मैं न तो  
आपनो बाहवा आपुहि लीजिये ॥ ५ ॥

कैसेहु पण्डित होय गुनी बरु कैसेहु वेद करो  
जु उचारन । कैसेहु जोगी जती किन होहु  
चढ़ाय करो बरु पान को धारन ॥ आपने धाम  
अजाचक द्वै रहै दत्त यहै सनमान को कारन ।  
औसि लहैगो अनादर सो नर जांचि है जाय  
जोई पर द्वारन ॥ ६ ॥

होत नाहि जौन मनोरथ दिक्पाल सेये दियो  
जात काहु भांति नाहि जो दिगीस तें । वेद औ  
पुरान हूँ के पढ़े ते मिलत नाहि सिद्ध होत नाहि  
जोपै जोधा दस बीस तें ॥ बुद्धि बल देह बल  
सबै थकि जाँहि जहाँ पायो नहि जात जोई  
विद्याहू छतीस तें । होत सोई वांछित सहज में  
बतावै दत्त तोषिस किये पै एक बिप्र की असीसतें ॥ ७ ॥

काहे दहै तन कों सुपचागिन इन्द्रिय कों अति  
संजम नाँथै । त्यागि के भूषन बास सुवास तपै  
तप ऊरध कों करि हाथै ॥ क्यों बहु तीरथ कों

भरमें पुनि गावत औरन के गुन गाथे । सुद्ध भयो  
चहे तो तू धरे किन मात पिता चरनोदक माथे ॥८॥

जग्य न आदि करै करमें तन धूनी लगाय करै  
गर में । धारत है मृग के चरमें कंहु बैठत है  
बरषा झर में ॥ औरही और रचै धरमें नहिं  
बूझत बेदन के मरमें । नाहक तू जग में भरमें  
तब तीरथ मात पिता घर में ॥ ९ ॥

आछे गजराज आछे घोरे सुभ सजेसाज पैगति  
सिपाहि को त्यों जुद्ध में सुहाति है । आछे सुक  
सारिकादि आछी गऊ आछे बृष आछी तिया जापै  
छवि खानि सरसाति है । आछे कवि पण्डित गवैया  
गुनी जन आछे बानी दत्तकवि जूकी साँची ही लखाति  
है । ल्याय ल्याय गृह माँहि राखिबो सकल चाहें  
तिन के निवाहिबे में बाई पचिजाति है ॥ १० ॥

मानुख जनम कों सुधान्यों तिन नीको भाँति  
तिनने सुधान्यों सब परलोक साज है । अरथ  
धरम काम सकल सुधान्यो तिन तिन नै सुधान्यो  
सब सुख को समाज है ॥ देव ऋषि पित्रन को  
काजह सुधान्यो दत्त तिनने सुधान्यो दुहुँ लोकन  
को राज है । सरग सुधान्यो अप वर्गन सुधान्यो



तिन जिन मन लाय कै सुधान्यो पर काज है ॥११॥

तन हूँ धन हूँ न रहै जग में सुख साज समाज  
रहै दिन चारहि । अह पुत्र कलत्र सदा न रहै  
बय हू लय होय कै रूप बिगारहि ॥ यह धाम  
अराम रहै न कहूँ अरु औरहु वस्तु सकै कछु  
ना रहि । लखि दत्त कहै रहि जात अहै जग  
माँहि सदा पर को उपकारहि ॥ १२ ॥

मेरु विंध्य आदि गिरि धरा के धरनिहार वेऊ  
कोउ समय मै थान तें हलत हैं । दिग्गज दराज  
देह दावे रहैं भूमि कों जे तेउ काल पाय निज  
दिसा तें टलत हैं ॥ छिति थहरात जो पचास  
कोटि जोजन की तरुहू को मूल कबों दत्त दहलत  
हैं । बड़े बड़े अचल चलाय मान होय जौ पै सजन  
के बैन कढ़े नैक न चलत हैं ॥ १३ ॥

सोमल को संख्या को विरच्यो धतूराहू को  
हीरा की कनी को ना अफीम घुरे पानी को ।  
सकुची की पूँछ को न सिंह हू की मूछ को न विष  
माहि बोरि पेसंकबज घुसानी को ॥ दत्त कवि  
कहै स्वान हूं को एतो विष नाहि एतो विष  
नाहि मधुमाछी के डसानी को । गोहरा को सांप

को सु बीछू हू को सुन्यो नाहि जैसो कछु चढ़ि  
जात जहर जुवानी को ॥ १४ ॥

### कविता ।

महासहोपाध्याय कविराज श्यामल दासकृत ।

पंकज इच्छन तैं कबि भृंग महा रस दीधिति  
के मिस लेत हैं । चोर लवार उलूकन कों निरवार  
प्रजा गन रागन हेत हैं ॥ सभ्यन के खटके तम  
तोम मिटाय किये सब कों मुद पेट हैं । सज्जन  
आज के द्यौस प्रकास प्रभाकर रूप सबैं सुख  
देत हैं ॥ १ ॥

सोवत खोल कपाट प्रजाभय छोर निसंक  
बिधान सुभाय की । सावन की निस बीथिन बीच  
सुनी न कथा पद ठोकर खाय की ॥ सेवत जो  
तन तैं मन तैं निधि उन्नति होत दिनोत्तर छाये  
की । सज्जन रान के राज की रीति भई सब  
नीति ज्यों कोशल राय की ॥ २ ॥

मेद पाठ उदयाद्रि पै, सज्जन सूर प्रकास ।  
होत भये कवि कुल कमल, सरस सवास बिकास ॥

## जानकीमङ्गल नाटक ।

नान्दी ।

पुष्पेभ्यो विचरन् विदेहनृपतेः क्रीडा बन् सानुजो ।  
दृष्ट्वा तत्ततनयां हृदि प्रमुदितोऽलङ्कारभूतां भुवः ॥  
प्राप्तो रङ्गमहीं महेश्वरधनुर्भङ्क्त्वा वृतः सीतया ।  
जित्वा भार्गवमर्चितः सुरगणैः श्रीराघवः पातु वः ॥ १ ॥

अपिच ।

या पूर्णचन्द्राधिकसुन्दरास्या या शुद्धचामीकरदेहकान्तिः ।  
या रामचक्राऽमृतपानलुब्धा सा जानकी मङ्गलमातनोतु ॥ २ ॥

नान्दी पाठ के अनन्तर ।

सूत्रधार ।—( नेपथ्य की ओर देखकर ) प्यारी ? सिंगार कर चुकी हो और  
बस्त्र आभूषण पहिन लिये हो तो यहाँ आओ ।

नटी ।—( आकर ) प्राणनाथ ? क्या आज्ञा होती है ।

सूत्र० ।—प्यारी ? आज अयुतमहाराजाधिराजकाशिराज विजराज, श्रीरक्षो  
प्रसाद नारायण सिंह बहादुर की इस सभा में बड़े २ विद्यावान् बुद्धिमान्  
गुणशाली महाशय एकट्ठे हुए हैं । इन लोगों ने परम अनुग्रह कर के  
हम लोगों को आज्ञा दी है कि किसी अपूर्व नाटक की लीला-कर के  
दिखावो । प्यारी ! देखो कैसे आनन्द की बात है यह नाटक की लीला  
पहिले हमारे इस भारतखण्ड के सकल लीलाओं में शिरोमणि मानी  
जाती थी । और महाराज विक्रम आदि बड़े बड़े राजाओं की सभा में  
इसी की लीला होती थी । और कालिदास आदि बड़े बड़े कवियों ने  
इस विषय पर ही अनक द्रष्टु प्रबन्ध निर्माण किये हैं सो अब तक  
वर्त्तमान हैं परन्तु काल के मांहात्म्य से हम लोगों का यह परम सुख-  
दायक विद्यासुदहुत दिनों से लोप हो गया था और इस का व्यवहार  
भी सम्पूर्ण रूप से उठ गया था आज परम सुदिन है कि इन महाशयों  
के अनुग्रह से फिर इस का नवीन अवतार हुआ चाहता है । प्यारी ! मैं  
तुम से यह बात पूछता हूँ कि आज हम लोग कौन से नाटक की लीला  
करें जिसे देखकर इन महाशयों के चित्त को आनन्द हो ।

नटी ।—प्राणप्रिये ! मेरी बुद्धि में यह बात आती है कि इन महाशयों के

संमुख रघुनाथ के चरित्रावृत की कीर्ति हो तो बहुत अच्छा ।

सूत्र० ।—प्राणप्रिये ! रघुनाथ के चरित्र तो अनंत हैं । और कवियों ने अनेक चरित्रों पर अनेक प्रकार के नाटक के ग्रन्थ रचे हैं हम किस नाटक की कीर्ति करें ।

नटी ।—प्राणनाथ ! रघुनाथ के सकल चरित्र आनन्द के खान और भक्त जनों के मन की सुखदान हैं परन्तु मुझे तो जनकनन्दिनी के विवाह की कथा अति प्रिय लगती है और दृढ़ विश्वास है कि इन सभासद लोगों के हृदय को भी अति सुख दायक होगी ।

सूत्र० ।—( अति प्रसन्न होकर ) प्राण प्रिये ! वाह ! तुम ने बहुत अच्छी बात कही रघुनाथ के विवाह के चरित्र मेरे भी मन की अति भावते हैं । इस लिये हम लोग आज काशी बामो कविवर श्रीयुत पण्डित शीतला प्रसाद त्रिपाठी जी की लेखनी से निर्गत जानकी मंगल नाम नाटक की कीर्ति इस सभा में करेंगे ।

( नेपथ्य में कीर्ताहल )

नटी ।—प्राणनाथ ! यह क्या कीर्ताहल होता है ।

सूत्र० ।—प्यारी ! मैं ने ध्यान नहीं दिया ।

( फिर नेपथ्य में कीर्ताहल )

सूत्र० ।—हाँ ! समझाओ अबधेश महाराजाधिराज के राजकुमार राम और लक्ष्मण जनका महाराज का धनुर्यज्ञ देखने की मिथिला नगर में आये हैं इस समय विश्वामित्र मुनि से आज्ञा लेकर पुष्प वाटिका में फूल लेने को जाते हैं हर एक गली और सड़को में लोग उनकी अद्भुत सुन्दरता देखने को इकट्ठे हुए हैं वहीं का कीर्ताहल हो रहा है ।

नटी ।—प्राणनाथ ! चलिए हम लोग भी उन राजकुमारों का दर्शन कर जन्म सुफल करें ।

सूत्र० ।—प्राणप्यारी शीघ्र चलो ।

( दोनों नेपथ्य में जाते हैं )

इति प्रस्तावना ।



## अङ्क पहिला ।

( स्थली बाटिका मध्य में सरोवर और उस के तट पर गिरिजा का मंदिर  
माली बाग सुधारते और गाते हैं )

गीत—आजु जानकी केर बिबाहू । आये इहाँ सकल नर नाहू ॥  
माखी घर घर परम उकाहू । सब मिलि भूप दुघारे जाहू ॥  
होइहैं हमें बहुत कहु जाहू । दधि चूरा भर दखा खाहू ॥

( राम और लक्ष्मण का प्रवेश )

राम ।—लक्ष्मण ! देखो यह कैसी सुन्दर बाटिका है इसमें कैसी मनोहर लक्ष्मी  
हूए है इन पर चातक कोकिला चकोर इत्यादि पक्षी कैसी मीठी-मीठियाँ  
बोला रहे हैं और देखो इस के मध्य में यह सरोवर कैसा रमणीय है इसमें  
अनेक रङ्ग के कमल खिल रहे हैं और हंस सारस इत्यादि जल के पक्षी  
कलोल कर रहे हैं वृक्षों पर ठीर ठीर भौरें जैसे मधुर स्वर से गूँज रहे हैं ।  
लक्ष्मण ।—भैया ! सत्य है ! भैया ! हमने सुना है कि इस समय जनक राज-  
किशोरी इस बाग में गिरिजा पूजन आवेगीं इस लिये फूल जल्दी छे  
तोड़ लीजिये तो अच्छा ।

राम ।—अच्छा पहिले इन मालियों से पूछ लो ।

लक्ष्मण ।—क्यों जी हम लोग इस बाग में से कुछ फूल ले लें ?

माखी ।—राजकुमार ? यह बाटिका आप ही की है चाहिये कितना फूल  
फल लीजिये ।

( दोनों भाई फूल तोड़ते हैं गाती हुई सखियों समेत सीता का प्रवेश )

गीत—। जय जय जम जननि देवि सुर नर सुनि असुर सेवि भुक्तिमुक्ति  
दायिनि भय हरनि कालिका १ मङ्गल सुद सिद्धि सदा नि पर्व सर्वरीश बदनि  
ताप तिमिर तरुन तनुनि किरन मालिका २ वर्म चर्म कर कपान सूल सेन  
धनुष बान धरिनि दलनि दावन दल रन कालिका ३ पूतना पिशाच प्रेत  
शाकिनि डांकिनि समेत भूत यह वेताल खल सृगालि जालिका ४ जय महेश  
भामिनि अनेक रूप नामिनि समस्त लोक स्वामिनि हिम शैल बालिका ५  
सुन्दर बर सुभ संयोग मांगति सब कुंचरि लोग देह ते प्रसन्न पाहि प्रणत  
पालिका ॥ ६ ॥

( सीता सरोवर में मार्जन कर के गिरिजा के मन्दिर में जाकर पूजन करती हैं  
प्रेमसखी बाग देखने जाती है और राम लक्ष्मण को देख कर अति  
आनन्द से भरी हुई जानकी के पास लौट आती है )

चतुरसखी ।—ये सखी ! तू इतनी मगन क्यों देख पड़ती है ।

प्रेमसखी ।—हे आजी ! दो राजकुंभर इस बागमें आये हैं मैं उनकी सुन्दरता  
का वर्णन कहाँ तक करूँ जब से मैं ने देखा तन मन की सुध भूल गई  
है उन की अवस्था किशोर सब भाँति से सुंदर और सोहावने है ।

चौ०—स्याम गौर किमि कहाँ बखानी । गिरा अनयन नयन बिनु बानो ॥

कवित्त—जुगल कुमार सुकुमार महा मारुत तें आई चेरि आजी जिन्हें  
शोभा त्रिभुवन को । अधर ललाई दृग देखे बनि आवै जिन जीतो है  
ललाई चौ कोनाई प्रदमन की ॥ फूल फुलवाई में चुनत दोउ भाई प्रेम  
सखि लखिवाई गहे कतिका द्रुमन की । चकत सोहायं मीर निपरा  
डिराय हाय गडि जनि जाय पाय पाँखुरी मुमन की ॥ १ ॥

( सब सखी जानकी की ओर देख कर मुसकाती हैं )

रहस्य सखी ।—हे आजी ! मैं जानती हूँ कि ये वेई राजकुमार हैं जो मुनि की  
साथ कलह हमारे नगर में आये हैं । और जिन्हों ने सारे नगर में अपने  
रूप की मोहनो डाल दी है और सकल तर नारियोंको बस कर लिया है ।  
आजी ? आज कलह हर जगह इन की सुंदरता की धूम है । और जहाँ  
तहाँ सब लोग उन्हीं की छवि का वर्णन करते हैं । सखी हम सब उन्हें  
देख पावें वे देखने योग्य हैं ।

चतुरसखी ।—( कवित्त ) परी सखी रामरूप देखिवे की चाहती ही बूझी तो  
बुझाय काहुँ जुवती सयानी सों । मिथिला शहर बीच कहर पखौ है भईं  
घायलें घनेरी कहुँ मूठ ना जवानो सों ॥ बेधो परी प्यारी नारी गयलन  
घटारिन पैं तीखे नयन बान मारे भौंड़ धनु तानो सों । अति मंजु मंद  
हाँसी फाँसी गर डारि डारि कीन्ही कतलाम केतो जुलुफ कपानी सों ।

( सीता अत्यन्त प्रसन्न होकर उसी प्रिय सखी को आगे करके चलती हैं और  
आगे बढ़ के सचकित हो इधर उधर देखती हैं )

राम—( आभूषण का शब्द सुनकर ) लक्ष्मण ! सुनो यह कैसा मधुर मधुर  
शब्द सुनाई देता है मानो कामदेव डंका बजाता चला आता है । और  
सारे जगत को जीता चाहता है ।

( यह कह कर उस ओर देखते हैं और एकाएक जानकी को मुखारविंद पर दृष्टि पड़ती है एक टक देख कर )

( स्वगत ) बाह ! यह कैसा रूप है मानो ब्रह्मा ने इसे प्रगट कर के अपनी सारी शक्तियाँ जगत को दिखाई है ! यह बाला सुन्दरता को भी सुन्दर कर रही है और कवि के गृह में दीप शिखा सी बर रही है ।

( प्रकाश ) हे तात ! यह यही जनकनन्दनी है जिस के लिये अचर्यञ्च होता है । सखियों को संग ले गौरी का पूजन करने आई है । इस पुष्प बाटिका को प्रकाश करती फिरती है इस को अपूर्व शोभा को देख मेरे स्वाभाविक पुनीत मन को भी लोभ होता है इस का कारण बिधाता जाने मेरे दाढ़िने भंग फरकते हैं । लक्ष्मण ! श्रुवश्रियों का यह सङ्ग ही सुभाव है कि उन में से कोई भी कभी कुपंथ पर पांव नहीं रखता । मुझे अपने मन का परम विश्वास है जिस ने सपने में भी पर स्त्री की ओर नहीं देखा । लक्ष्मण ! जो संभ्राम में शत्रु को पीठ नहीं दिखाते और पर स्त्री की ओर मन और दृष्टि को नहीं लगाते जिन के द्वार से मंगल फल नहीं पाते ऐसे उत्तम पुरुष संसार में बहुत थोड़े होते हैं ।

लक्ष्मण ।—भैया यथार्थ है ।

( सीता इधर उधर देखती हैं । प्रेमसखी लता के ओट में रामचन्द्र को देखाती है । राम को देख कर आनन्द से मग्न होकर नेत्र को मूँद लेती हैं । दोनों भाई लता के ओट से निकल आते हैं ! )

एक सखी ।—( हंस कर ) आली गौरी का ध्यान फिर कीजिओ इस समय राजकुमार का आंख भर देख लो ।

सीता ।—(सुकुच कर आंखें खोल देती हैं )

( स्वगत ) हाय ! यह कोमल मूर्ति और पिता का वह कठोर प्रण )

( सब सखी हंसती हैं )

एक सखी ।—आली आज शक्तिकर देवी का पूजन करो कल्ह फिर इसी समय यहाँ आवेंगी ।

सीता ।—( सुन कर लज्जित हो के पकड़ताती हुई चलती हैं और गिरिजा के सम्मुख जाकर प्रणाम कर के हाथ जोड़ के स्तुति करती हैं )

श्री०—जय जय जय गिरिराजकिशोरी । जय महेस मुख चंद चकीरी ॥

जय गजवदन खड्गानन माता । जगत जननि दामिनि दुति गाता ॥  
नहिं तब आदि मध्य अवसाना । अमित प्र भाव वेद नहिं जाना ॥  
भव भव विभव पराभव कारिनि । विश्व विमोहनि स्वयं विहारिनि ॥  
दोहा—पति देवता सुतीय महं . मातु प्रथम तब रेष ।

महिमा अमित न कहि सकहिं . सहस शारदा शेष ॥

श्री.—सेवत तोहि सुकल फल चारी । वरदायिनि त्रिपुरारी पियारी ॥

देवि पूजि पद कमल तुम्हारे . सुर नर सुनि सब होहि सुखारे ॥

( गौरी के कंठ से माळा गिरती है सीता प्रणाम करके माळा उठा कर  
गले में पहिन लेती हैं । )

गौरी ।—सुनो जानकी ! मेरा आशीर्वाद सच है तुम्हारे मन की कामना पूर्ण  
होगी नारद का वचन कभी मिथ्या नहीं होता तुम को बह बर  
मिलीगा जिस पर तुम्हारा मन लगा है ।

छन्द—मन जाहि राखी मिमिहि सो वर सहज सुन्दर सांवरो ।

करुणानिधान सुजान शील सनेह जानत राखरो ।

( जानकी यह सुनकर प्रसन्न होकर सखियों के साथ बायें अंग का फरकना  
देखती हुई एक ओर से और राम लक्ष्मण दूसरे ओर से जाते हैं )

( जयनिष्ठा गिरती है )

प्रथम अङ्क समाप्त ।

## अङ्क दूसरा ।

स्थली २ ।

( राजसभा, राजाओं का सिंहासन, मध्य में सब सिंहासनों से उत्तम और ऊंचा  
एक सिंहासन, धनुष, रानियों का महल, राजा जनक सतानन्द बन्दीजन )

जनक ।—( सतानन्द जी से ) पुरोहित जी ! महाराज दशरथ के राजकुमार  
राम और लक्ष्मण विश्वामित्र मुनि के साथ हमारे नगर में धनुषयज्ञ  
देखने को आये हैं । चैत्ररथ बाग में डेरा किया है । आप जा कर उन को  
यज्ञशाला में ले आइये ।

सतानन्द ।—महाराज ! जैसी आज्ञा ।

( नेपथ्य में जाते हैं )

बाजा जाता है ।



( प्रथम राजा का प्रवेश । )

बन्दी ।—( आगे बढ़ के राजा को ले आता है )

( जनक से ) महाराजाधिराज ! यह मगध देश के राजा प्रताप सुकुट हैं ।

इन का यश और प्रताप पृथ्वी मंडल में छाया रहा है इन के भय से शत्रु, लोग रात दिन थर थर कांपते हैं ।

( दूसरे राजा का प्रवेश )

बन्दी ।—महाराज ! यह उज्जैन के राजा हैं जब इन की सवारी निकलती है तो घोड़ों के टाप की धूर बड़े बड़े राजाओं के सुकुट के मणि की चमक को छिपा देती है ।

( तीसरे राजा का प्रवेश )

बन्दी ।—महाराज ! यह कश्मीर के राजा हैं सब विद्याओं में निपुण और सर्वदा पंडितों का सत्कार करते हैं इन्होंने लक्ष्मी की चक्षुसता के दुर्घट को दूर कर दिया है क्योंकि लक्ष्मी कभी इनका परित्याग नहीं करती । यह कैसे आश्चर्य की बात है कि लक्ष्मी और सरस्वती दोनों एक ही पुरुष के आधीन हों ।

( चौथे राजा का प्रवेश । )

बन्दी ।—महाराज ! यह सुजैन नाम मथुरा के राजा हैं यह अपने दोनों कुल के दीपक हैं और इन के शरीर की कान्ति मियों को पूर्ण चन्द्र को नाई मुखदाई और शत्रुओं को शीघ्र ऋतु के बूझ को नाई दुस्साह है ।

( पाचवें राजा का प्रवेश । )

बन्दी ।—महाराज ! यह हेमांगद नाम राजा हैं महाबली और बड़े प्रतापी हैं महेन्द्र पर्वत और समुद्र इन दोनों पर इन का अधिकार है ।

( छठे राजा का प्रवेश । )

बन्दी ।—महाराजाधिराज ! यह नागपुर के राजा हैं गल्ले में मोतियों का डार पहिरे हुए ऐसे शोभायमान हैं कि जैसे तारों से चन्द्रमा की शोभा होती है । महाराज ! जब लंका पति रावण इन्द्र लोक के दिव्य को जाने लगा तब उस की यह भय हुआ कि यह राजा कहीं हमारे पीछे लंका पर चढ़ाई न करे इस लिये वह इन से मित्रा कर की सब गया ।

( सातवें राजा का प्रवेश । )

बन्दी ।—महाराज यह पंजाब देश के राजा हैं इन का यश स्वर्ग नृत्यलोक

और पाताल इन तीनों स्थानों में फैल रहा है इन के राज्य में ऐसा प्रवन्ध है कि जब विष्णुमित्रों बाटिका में बिहार कर के घर को फिरती है और जो आनन्द से कहीं मार्ग ही में निद्रा आ जाती है तो वायु को भी सामर्थ्य नहीं कि उनके वस्त्र को स्पर्श कर सके और मनुष्य की तो क्या गतो है।

( आठवें राजा का प्रवेश )

बंदो—महाराज ! यह नैपाक्ष देश के राजा हैं इन की मंदरता पर अप्सरा लोग मोहित होती हैं इनके यहाँ ऐसे ऊँचे और मतबारे हाथी हैं कि जिन के आगे ऐरावत भी कुछ नहीं।

( नववें राजा का प्रवेश )

बंदो ।—महाराज ! यह गुजरात देश के राजा हैं यह प्रजा का ऐसे पालन करते हैं जैसे पिता पुत्र का पालन करे इनके यश के आगे चन्द्रमा मलिन और प्रताप के आगे सूर्य ठंढा मालूम होता है।

( दशवें राजा का प्रवेश )

बंदो ।—महाराज ! यह बंगदेश के राजा हैं इनके ऐश्वर्य को देखकर शत्रु भी नञ्जित होता है बड़े गुणो बड़े, प्रतापो, बड़े मुशीन हैं जमा के ती समुद्र हैं शत्रु पर भी जमा करना इन्हीं का काम है।

( नेपथ्य में कोलाहल रावण का प्रवेश । )

( जनक और सब राजा घबड़ा कर उठ खड़े होते हैं, जनक अचम्भित और भयातुर होकर देखते हैं, रावण सिर उठा के क्रोध से उन की ओर देखता है, वह आँख नीची कर लेते हैं रावण धनुष की ओर बढ़ता है )

बंदो ।—महाराज ! महाराज ! यह वह लंकापति रावण हैं जिनके भुज बल को कैलाश पर्वत जानता है और जिनने अपने मस्तकी को अपने हाथ से काट काट कर फूल के बदले महादेव को चढ़ाये हैं, इन के पराक्रम को देवता लोग भली भाँति जानते हैं, उन के हृदय में इन का पराक्रम शूच से समान आज तक चुभता है, महाराज ! इन की क्रांती की कड़ाई को दिग्गज जानते हैं, जब यह उनसे जा कर मिड़ते हैं और अपनी क्रांती से उन के दाँतों में टूटकर मरते हैं तब उन के दाँत मूली की नाई पट्ट से उखड़ जाते हैं इन के चलने के समय पृथ्वी ऐसे उगमग करती है जैसे हाथी के चलने से झटो डोंगी।

(रावण धनुष के पास जा कर देखता है और फिर नीचा सिर किये  
आ कर बैठ जाता है)

( बाणासुर का प्रवेश । )

बन्दी ।—महाराज ! यह बलि के पुत्र और शोणितपुर के राजा बाणासुर हैं,  
त्रिकोको को जीत सब देवताओं को बस कर अपने नगर के चारों ओर  
जल को चुआन चोड़ी खाई और अग्नि पवन के कोट के बनाय निर्भय  
राज करते हैं त्रिभुवन में इन का सामना करने वाला कोई नहीं है ।

रावण ।—( बन्दी से चुप रह । )

( फिर बाणासुर में, तुम क्या आये हो )

( बाणासुर इस धनुष को तोड़ जानकी को विवाह ले जाऊंगा बड़ घमंड से  
धनुष के पास जाकर उसे देख कर सिर नीचा कर के पीछे हट आता है )

बाणासुर ।—लंकेश ! हम तुम से कुछ कहना चाहते हैं ।

( दोनों नेपथ्य में जाते हैं )

राम लक्ष्मण और विश्वामित्र का प्रवेश ।

जनक ।—( उठ कर सुनि का चरण छू कर बंगशास्त्रा दिखाते हुए धनुष के  
पास ले जा कर )

सुनिराज ! सुनिये किसी समय त्रिपुरारि त्रिपुरासुरकी भारि मिथिला  
पुर पधारि यह धनुष यहाँ धर गये पड़ले यह धनुष हमारे मन्दिर से दूर  
रहा और मैं नित्य इस की पूजा करने को जाता था एक दिन कुमारी  
मेरे साथ गई और जब मैं पूजा कर के चला आया तो उस के मन में यह  
बात आई कि मेरे पिता को यहाँ आने में बड़ा श्रम होता है सो धनुष  
उठा कर मेरे पास ले आई और पूछा कि जहाँ आजा हो वहाँ रख दूँ  
आप इसी महल में इस धनुष की पूजा कर लिया करें, हे सुनिराज उस  
दिन से मैंने यह प्रतिज्ञा की है कि जो कोई इस धनुष को तोड़ेगा मैं  
कुमारी का विवाह उसी से करूँगा इसी कारण से देश देश के नरेश इस  
रंगभूमि में आज इकट्ठे हुए हैं । आप लोग इस आसन पर बिराजें ।

( राम लक्ष्मण विश्वामित्र बैठते हैं आकाश से पुष्पवृष्टि होती है )

जनक ।—( बन्दी से ) मंजीरक ! जाओ सीता को लै आओ ।

बन्दी ।—महाराज ! जैसी आज्ञा ।

बन्दी।—( नेपथ्य में जाता है )

( सखियों समेत हाथ में जयमाला लिये जानकी का प्रवेश )

सखियों का गीत ।

जयमान जानकी जलज कर कई है । सुमन सुमंगला सगुन की बनाय  
मल्लु मानहु सदन मालो घाप निरमई है ।

( आकाश में दुन्दुभी बजती है और पुष्प की वृष्टि होती है । )

( सब राजा जानकी को घोर चक्रवक्ता कर देखते हैं )

( सीता नेच उठा कर इधर उधर देखती है )

( रामचन्द्र को देख कर सुस्करा कर सिर नीचा कर लेती है ) ( जनक  
बन्दी को निकट बुला कर धीरे से )

( मन्त्रोरक ! हमारी प्रतिज्ञा इन राजा लोगों को सुना दो )

बन्दी।—महाराज ! जैसी आज्ञा ( हाथ उठा कर )

है सक्ता मदिपाल ! इस बात को ध्यान दे कर सुनो ! यह शिव जी का  
धनुष राजाओं के भुजवक्त्ररूपी चंद्र का प्रसने वाला राहु है और सब  
कोई जानते हैं कि यह कौसा भारी और कौसा कठोर है । रावण बाणासुर  
ऐसे भारी भट भी दूले देख कर गर्व से चल दिवें इस किये हमारे महा-  
राज जनक को यह प्रतिज्ञा है कि जो कोई इस राजसभा में आज इस  
धनुषको तोड़ेगा विभुवनके विजय समेत कन्या उसको निस्स'देह मिलेगी ।

( आठ राजा बारी बारी से उठ कर कमर बाध कर अपने इष्टदेवता को प्रणाम  
कर के धनुष के पास जाते हैं और तमकि के उठाने लगते हैं जब नहीं

उठता तब अपने आसन पर फिर आते हैं । इस के पश्चात् कई राजा

एक ही बार उठाने लगते हैं और जब नहीं उठता तो लजा के

अपने आसन पर आ कर मस्तक नीचा कर के बैठ जाते हैं )

जनक।—( राजाओं को देख क्रोधित कर के ) हमारी प्रतिज्ञा को सुन कर ऐसा  
कौन सा देश है कि जिस का राजा आज यहां नहीं आया । और कहा  
तक कहें ! देवता और दैत्य भी मनुष्य का रूप धरके आये । बड़े बड़े वीर  
और रणधीर इस रंगभूमि में विशजमान हैं ! कुंभरि मनोहर और बड़ी  
विजय और कीरति अति कमनीय इन तीनों अद्भुत पदार्थों का पावने  
वाला वह पुरुष होता जो धनुष तोड़ता सो इस के योग्य पुरुष भारत



कोई विधाता ने रचा नहीं। इस बड़े लाभ में कोभ किस को नहीं है। भला तोड़ना तो क्षिणारे रहा, कोई पृथ्वी से तिक भर हटा भी न सका तो अब कोई न धोला सठे कि मैं बाकी हूँ तोड़ने को। हमने निश्चय किया कि अब पृथ्वी पर कोई वीर न रह गया। इस क्षिणे आप लोग आशा की परित्याग कर के अपने अपने घर जाइये क्या कोजियेगा मर्यादा ने जानकी का विश्वास ही नहीं लिखा है। यदि अपनी प्रतिज्ञा छोड़ दूँ तो धर्म जाता है। कुंभरि कुम्भारी रहैगो इस को मैं क्या करूँ। यदि मैं जानता कि पृथ्वी पर कोई वीर नहीं है तो ऐसी प्रतिज्ञा कर के अपनी हंसी न कराता।

लक्ष्मण।—(उठ कर क्रोध से) जिस संभा में एक भी रघुवंशी होगा वहाँ ऐसी अनुचित बानी जैसी जनक ने अभी रघुकुल मणि के सामने कही है कोई नहीं कहेगा। (रामचन्द्र से हाथ जोड़ कर) हे भानुकुल कमल दिवाकर ? मुनिये मैं समझ नहीं करता अपना स्वभाव झड़ता हूँ यदि आपकी आज्ञा पावीं सारे मर्यादा को गेंद के सामान उठाकर कच्चे घड़े की तरह फोर डालूँ। और मुरैर पर्वत की मूली की तरह तोड़ डालूँ। हे स्वामी ? आप के प्रताप और महिमा से इस विचारे पुराने धनुष की क्या भुगत। हे नाथ ! यह जान के आप आज्ञा दे दें और मैं भी कौतुक करता हूँ इस को देख लें। कमल की डंटी की नाईं इस धनुष की चढ़ा लूँ और चार सौ कोस तक दौड़ता चला जाऊँ। हे नाथ कृते की डंटी की नाईं इस धनुष की आप के प्रताप से तोड़ डालूँ और भी यह न करूँ तो हे स्वामी, आप की चरण कमल की सपत है फिर धनुष बाण हाथ से न छूजें।

जनक।—(मिर नीचा कर लेते हैं) (रामचन्द्र लक्ष्मण को नेत्र का इशारा कर के पास बैठा लेते हैं)

विश्वामित्र जी।—(रामचन्द्र से) रघुनाथ ! बैठा उठो शिव के धनुष की तोड़ कर राजा जनक का दुःख दूर करो।

(रामचन्द्र उठ के गुरु के चरण कमल को प्रणाम करके मञ्च पर खड़े होते हैं पुष्प की वृष्टि और जय जय का शब्द होता है। फिर गुरु के चरण को प्रणाम करके मंद मंद चलते हैं और धनुष के पास जाकर खड़े होते हैं)

सुमयना।—(स्त्रियों की बुलाकर) हे आजी ! देखो जी लोग हमारे हितु कहते हैं वो भी सब तमाशा देख रहे हैं। हाय ! यह बात राजा से

समझा कर कोई नहीं कहता कि ये बालक है और इन के साथ ऐसा  
 झूठ करना अच्छा नहीं। जिस की रावण और बाणामुर ने भी हाथ से  
 नहीं कुआ और सारे राजा गर्व कर करके हारे वृद्ध धनुष इस राजकुमार  
 को देते हैं। भला हंस के बच्चे कहीं मन्दराचल को उठाते हैं। आओ !  
 आज न जाने राजा की सारी चतुराई कहाँ गई ब्रह्मा की गति जानो  
 नहीं जाती।

एक सखी।—महारानी ! तेजवंत की छोटा न समझना चाड़िये। कहाँ  
 अगस्त्य मुनि और कहाँ अपार समुद्र अगस्त्य ने समुद्र को सोखा यह बात  
 सारे संसार में प्रसिद्ध है। सूर्य का मण्डल देखने में कैसा छोटा जान  
 पड़ता है परन्तु उस के उदय होते त्रिभुवन का अन्धकार दूर हो जाता  
 है। महारानी मंत्र कैसे छोटे होते हैं परन्तु ब्रह्मा विष्णु महेश इत्यादि  
 बड़े बड़े देवता उनके आधीन रहते हैं। छोटा भी अंकुश बड़े मतवारे  
 गजराज को अपने वश में रखता है। कामदेव के हाथ में धनुष और बाण  
 फूल के हैं परन्तु उस ने सारे जगत को बस कर लिया है। हे महारानी  
 आप संशय को अपने मन से दूर कर दें रामचन्द्र इस धनुष को निःसंदेह  
 तोड़ेंगे।

सोता।—( रामचन्द्र की ओर देख कर करुणा से )

( स्वगत ) हे महेश ! हे भवानो ! प्रसन्न हो कर आज अपनी सेवा का  
 फल दीजिये हम पर कृपाकर के इस धनुष की गरुआई को दूर कीजिये।  
 हे गण नायक बरदायक ! तुम्हारी सेवा मैंने आज ही की लिये की थी  
 मैं बार बार बिन्ती करती हूँ इस धनुष की गरुआई दूर हो जाय। ( बार  
 बार रामचन्द्र की ओर दे कर ) हाय ! पिता ने यह कैसा दारुण झूठ  
 ठाना है लाभ और हानि का कुछ भी विचार नहीं है। कोई मंत्री मारे  
 डर के समझा कर नहीं कहता हाय विद्वानों की सभा में यह बड़ा  
 अनुचित होता है। कहाँ वज्र ऐसा धनुष कहाँ कमल ऐसे कोमल श्याम  
 किशोर। हे बिधाता मैं कैसे धीरज धरूँ भला सिरिस के फूल भी कहीं  
 हीरे को बेधते हैं। जो कदाचित् तन मन वचन से मेरी प्रीति श्याम मुन्दर  
 के चरण कमल में सखी होगी तो घट घट के अन्तर्यामी भगवान इस की  
 रघुनाथ की दासी बनावेंगे।

चौपाई—जाकर आपर सख्य मनेहू । मिलें सी ताहि न कहु संदेहू ॥

कवित्त—मो मन में निहचौ सजनो यह तातहु तें पन मेरो महा है ।

सुन्दर प्यारो सुजान शिरोमणि मो मन में रमि राम रहा है ।

रोत पतिव्रत राखि चुकी मुख भाखि चुकी अपनौ दुलहा है ।

चाप निगोड़ी अबै जरिजाव चढ़ी तो कहा न चढ़ी तो कहा है ।

कवित्त—( एक पैर टेक के ) हे दशों दिशा के दिग्गज ! हे कमठ ! हे सेष  
हे शूकर ! तुम धोरज धर के पृथ्वी को अच्छो तरह संभाले रहो जिस में  
हिम्मत न पावै । श्रीरामचन्द्र शङ्कर का धनुष तोड़ा चाहते हैं तुम  
लोग हमारी आत्मा से सावधान हो जाओ ।

( रामचन्द्र चारों ओर देखते हैं और धनुष उठा लेते हैं बढ़ाके

तोड़ डालते हैं बड़ा शब्द होता है )

( जयजय मचता है )

पुष्प की वृष्टि होती है और बाजा बजता है

सतानन्द ।—( सीता से ) राज किशोरी ! राज कुंभर को जयमान पहराओ ।

( सीता जयमाल लेकर सखियों के साथ रामचन्द्र के पास जाकर खड़ी होती है )

सखियों की गीत

मन में मञ्जु मनोरथ होरो । मो हर गौरि प्रसाद एकतें कौशिक कृपा  
चौगुनी भोरी ॥ पन परिताप चाप चिन्ता निशि सोच सकोच तिमिर  
नहिं थोरी । रविकुल रवि अवलोकि सभा सर हितचित्त वारिज बन  
विकसोरी ॥ कुंभर कुंभरि दोउ मंगल मूरति नृप दोउ धर्म धुरन्धर धोरो ।  
राजसमाज भ्रि भागी जिन लोचन लाहु लह्यौ इकठोरो ॥ व्याह उकाह  
रामभीता को मुक्त सकल विरंचि रच्योरी । घर घर सुद मंगल मिथिला  
पुर चिरजीवो यह सुंदर जोरो ।

( जानकी जयमाल पहराती है )

सखियों की गीत ।

लेहू री लोचननि को लाहु । कुंभर सुन्दर सांवरौ सखि मुमुखि सादर  
चाहु ॥ खण्डि हरकोदण्ड ठाटी जानु लखितवाहु ॥ रचिर घर जयमाल  
राजति देति मुख मुख काहु । चितै चित हित सहित नखसिख अंग अंग  
निवाहु ॥ मुक्त निज सिय राम रूप विरञ्चि-मतिहिं सराहु । सुदित मन

बर बदन सीमा उदित अधिक उछाड़ ॥ मनहु दूर कलङ्ककरि ससि भर  
मूँधी राहु । नयन सुखमा भयन हरत सरोज सुन्दर ताहु ॥ बसहु इहि  
छवि सदा उर पुर जानकी को नाहु ॥

( सीता सखियों समेत नेपथ्य में जाती हैं )

( रामचन्द्र विश्वामित्र के पास जाते हैं )

दूसरा अङ्क समाप्त ।

तीसरा अङ्क ।

स्थानी पक्षी की

( नेपथ्य में कोलाहल )

( परशुराम का प्रवेश )

( उस राजा खड़े होते हैं )

एक राजा ।—महाराजा ! मैं अमुक देश का राजा हूँ आप के चरण कमल  
को प्रणाम करता हूँ ।

दूसरा राजा ।—महाराज मैं अमुक देश का राजा हूँ ।

( इस प्रकार से सब उठ उठ कर क्रम क्रम से प्रणाम कराते हैं )

( जनक आप प्रणाम कर के सीता की बोलाय प्रणाम कराते हैं )

परशुराम ।—पुत्री तेरा कल्याण हो ।

( सीता सखियों समेत नेपथ्य में जाती हैं ) ( विश्वामित्र राम लक्ष्मण  
को चरण पर गिराते हैं )

परशुराम ।—राजकुमार सुखी रहो । ( जनक की ओर देख के क्रोध से )

आज क्यों इतनी भीड़ है ?

जनक ।—( हाथ जोड़ कर ) महाराज ? हम ने प्रतिज्ञा की थी कि जी कोई  
शिव का धनुष तोड़ेगा ।

परशुराम ।—( चारों ओर देखते हैं धनुष टूटा देख कर क्रोध से ) अरे जड़  
जनक यह धनुष किस ने तोड़ा है । अरे मूढ़ इस को जल्दी दिखानहीं  
तो जहा तक तेरा राज है उतनी पृथ्वी आज उलट दूंगा ।

( जनक थरथर काँपते हैं और सिर नीचा किये खड़े रहते हैं । )

एक राजा ।—( दूसरे राजा से ) क्यों जी धनुष का तोड़ना तो सहज था



दूमरा राजा ।—अब जानकी विराह से जांय तो जाने ।

तीसरा राजा ।—यह कहके तो कुछ भी नहीं है जो काल भी होता तो इस उस के एक बार सामना करते ।

मुनयना ।—(स्वगत) हाय ! बिधाता ने सब बनी बनाई बिगाड़ी ।

रामचंद्र ।—(परशुराम से) हे स्वामी ! शिव के धनुष का तोड़ने वाला कोई आप का दास ही होगा । क्या आज्ञा है सो कहिये ।

परशुराम ।—(क्रोध से) दास उस को कहते हैं जो दास का काम करे और जो शत्रु को करनी करे उस को लड़ना चाहिये । हे राम ! मुनो, जिन ने शिव के धनुष को तोड़ा है वह सख्खबाहु के समान मेरा बैरी है । वह इस समाज में उठ कर किनारे खड़ा हो नहीं तो जितने राजा हैं सब को सब मारे जायेंगे ।

कच्छप ।—(सुस्करा कर) हे गोसाईं हमने कड़कपन में ऐसी बहुत धनुही तोड़ी परन्तु आप ने ऐसा क्रोध कभी नहीं किया इस धनुष पर आप की इतनी ममता का कारण क्या है ।

परशुराम ।—(क्रोध से तड़प के) अरे राजकिशोर काल के बस हुआ है संभाल के नहीं बोलता यह त्रिपुरारि का धनुष जो सारे संसार में विदित है धनुही के समान है रे !

कच्छप ।—(हंस कर) हमारे जान में तो महाराज ! सब धनुष बराबर हैं इस पुराने धनुष के तोड़नेसे हमारी क्या हानि और क्या लाभ है । रघुनाथ ने तो गये के भूल से इसे देखा । और यह उनके छूते ही टूट गया । हे मुनि राय इसमें रघुपति का भी कुछ दोष नहीं है । आप क्यों व्यर्थ क्रोध करते हैं ।

परशुराम ।—(फरसा की ओर देख कर) अरे मूर्ख ! तूने मेरे स्वभाव को नहीं सुना है मैं तुम्हें बालक ज्ञान के नहीं मारता हूँ । अरे जड़ तू मुझ को केवल मुनि जानता है यद्यपि मैं बालव्रद्धाचारी हूँ तो भी यह बात जगत में विदित है कि मैं ब्रह्म कुल का द्रोही और परम क्रोधी हूँ मैंने अपने भुजों के बल से कई बार राजाओं को मार मार पृथ्वी ब्राह्मणों को देदी । ए राजा के छोकरे ! मेरे फरसे को देख मैंने इसी से सख्खबाहु के भुज को काटा था । ए राजा के लड़के ! तू अपने माता पिता को शोक बस क्यों करता है मेरे इस फरसे ने गर्भ के बालकों को भी नहीं छोड़ा है ।

कच्छप ।—(हंस कर) अही महा भट मांजी मुनिश ! तुम मुझे बारबार

फरसा दिखाते हो। तुम फूँक कर पहाड़ उड़ाया चाहते हो यहाँ कोई कोहड़ा की बातें नहीं है कि छंगकी दिखाने से सुरभूता जायगा। हे सुनील मैंने तुम्हारा फरसा और धनुष बाण देख कर कुछ अभिमान की बातें कहीं अब तुम्हारे सून के कनेऊ से जाना कि तुम भृगु मुनि के वंश में हो। अब चाहें जो कष्टों में क्रोध की रोककर सभी कुछ सहूँगा। सुनील मुनिराय हमारे वंश में देवता ब्राह्मण साधु और गौ इन पर क्रूरताई नहीं होती तुम को मारने से पाप और तुम से हारने में अपकीर्ति है इस किये तुम चाहें हम को मारो भी पर हम तुम्हारे पैर ही पड़ेंगे तुम्हारा तो बचन ही कोटि बज्र के समान है धनुष बाण और फरसा तो व्यर्थ धारण करते हो मैंने इन चिन्हों को देख कर जो कुछ अनुचित कहा हो सो क्षमा कीजिये आप धीर धीर महा मुनि हो।

परशुराम।—(क्रोध से) विश्वामित्र! सुनी, यह बालक अतिमन्द है यह कुटिल काल के वंश हुआ है। यह अपने वंश भर का नाश करेगा। यह सूर्यवंश रूपी चंद्रमा में कलङ्क उत्पन्न भया है। हम के मिर पर कोई नहीं है यह महा मूर्ख और अत्यन्त निर्भय जान पड़ता है। यह जण भर में काल का कल्ला होगा। मैं पुकार के कहता हूँ। पीछे कोई सुके दोष न दे। तुम बचाया चाहो तो हमारा प्रताप बल और क्रोध सुनाकर इसे मना करो।

कृष्ण।—हे मुनि! आप के रहते आप का सुयश दूसरा कौन बर्णन कर सकता है आप ने अपने करनी कई बार कई तरह से अपने ही मुँह से बरनी। जो इतने पर भी आप को सन्तोष न हो तो फिर कुछ क्यों नहीं कहते। रिश की रोक के आप क्यों दुसह दुःख सहते हैं। आप तो बीर अतधारी धीर और निर्भय हैं गाली देते आप शोभा नहीं पाते। बीर लोग समर में जो काम करते हैं वह अपने मुँह से आप नहीं कहते फिरते। शत्रु की रण में पा कर कादर लोग डींग मारते हैं। आप तो मानों काल को हाँक लाये हैं और बार बार हमारे वास्ते पुकार पुकार के बुलाते हैं।

( परशुराम फरसा को उठा कर एक पैर आगे बढ़ा के )

अब हमको लोग दोष न दें यह कटुवादी बालक बध के योग्य है। लड़का जान के मैंने इसे अब तक छोड़ा था अब यह सचमुच मरने पर भया है।

कृष्ण।—हे भृगुवर तुम क्या बारबार सुके फरसा दिखाते हो हे नृपद्रोही

मैं केवल ब्राह्मण जान कर तुम्हें छोड़ता हूँ कभी किसी मुभट से रणभूमि में सामना नहीं पड़ा ब्राह्मण और देवता घर ही के बड़े हुए हैं ।

जनक ।—राजकुमार ! ऐसा न चाहिये ।

सभा के लोग ।—हाँ हाँ यह बात अनुचित है ।

रामचन्द्र ।—( सुसकरा कर लक्ष्मण की हाथ के इसारे से मना करते हैं )

यह सिर नीचा कर के पीछे छुट जाते हैं ( परशुराम से हाथ जोड़कर ) है नाथ । बालक पर क्षमा कीजिये अभी तो इसके दूध के दाँत भी नहीं टूटे हैं । आप को इसपर क्रोध करना अनुचित है । आप यह तो विचार करें कि जो यह कुछ भी आपके प्रभावकी जानता तो क्या यह अज्ञान आपकी धरावरी करता । जो लड़के खेल में कुछ अनुचित करते हैं तो गुरु माता पिता उन पर क्रोध नहीं करते परन्तु प्रसन्न होते हैं । आपतो सुशील धीर और ज्ञानी सुनि हैं । आप इसकी बालक और अपना सेवक समझ के इसपर दया करें ।

( परशुराम ) ( पीछे पैर छटा कर फरसा नीचा कर खेत हैं )

लक्ष्मण ।—( हाँ और क्या ) ( यह कह के सुस्कराते हैं ) ।

परशुराम ।—( भुंभुला कर ) राम ! तेरा भाई बड़ा पापी है देखने में तो गोरा परन्तु भीतर से काला है । और इस की जीभ से जलाजल विषय बरसता है । यह स्वाभाविक कुटिल और तेरे योग्य भाई नहीं है यह नोच हम को अपने काल के समान नहीं देखता ।

लक्ष्मण ।—( सुस्करा के ) है सुनि ! क्रोध नहीं करना चाहिये क्रोध पाप का मूल है । इस से बड़े बड़े पाप होते हैं । अच्छे २ सज्जन भी क्रोध के बश में हो कर अनुचित काम कर के सारे संसार को अपना द्रोही जानते हैं । हे सुनिराय ! मैं तो आप का सेवक हूँ अब कोप छोड़ के मेरे क्षण दया कीजिये । यह टूटा हुआ धनुष क्रोध करने से जुड़ेगा भी नहीं । आप बहुत देर से खड़े हैं पाँव दुखते हगि क्षमा कीजिये बैठ जाइये । और जो यह धनुष आप की बड़ा प्यारा है तो उपाय कीजिये कोई बड़ा कारिगर बुलाकर बनवाइये ।

जनक ।—राजकुमार चुप रहिये यह बात अच्छी नहीं है ।

परशुराम ।—( राम से ) तेरा छोटा भाई जान के मैं इसे छोड़ता हूँ यह मन का मैला और तन का सुन्दर है । जैसे सोने के घड़े में विष भरा होय ।

( लक्ष्मण सुस्कराते हैं ) ( राम चन्द्र भौं चढ़ा कर लक्ष्मण की ओर देखते हैं )

( यह गुरु के पास घले जाते हैं )

राम ।—( अति नस्त्रता से हाथ जोड़ कर ) हे प्रभु ! सुनिये आप तो सहज सुजान हैं आप की बालक की बात पर ध्यान न देना चाहिये । वरेंय और बालक का एक स्वभाव होता है यह छिड़ने से दुःख देते हैं बुद्धिमान इन को दोष नहीं देते । हे नाथ ! उसने कुछ आप का नहीं बिगड़ा है अपराधी तो आप का मैं हूँ । अपनी दास की नाईं मेरे ऊपर कृपा अथवा क्रोध कीजिये चाहिये मारिये चाहिये बांधिये । मैं तो आप का सेवक हूँ । हे सुनिनायक ! आप जल्दी बतावें मैं वही उपाय करूँगा जिस में आप का क्रोध जाता रहे ।

परशुराम ।—राम ! मेरा क्रोध कैसे जाय देख तेरा भाई अभी तक मेरी ओर ऐसे देखता है मानों मैं कुछ पदार्थ ही नहीं हूँ जो इस के गले में कुठार न दिया तो मैंने क्रोध कर के क्या किया । इस कुठार के घोर शब्द से रागियों के गर्भ गिर जाते थे । और यही फरमा मेरे हाथ में ही और मैं अपने बड़े भूप किशोर को जीता देखूँ । हाय ! हाय हाथ तो चलाता नहीं और मारे क्रोध के छाती जली जाती है इस से मालूम होता है कि आज इस नृपचाती कुठार की धार जाती रही । बिधाता के बाम होने से मेरा स्वभाव भी बदल गया नहीं तो मेरे हृदय में कब किसी पर कृपा होने वाली थी । दया ने आज मुझे दुसह दुख सहाया ।

कच्छप ।—( हंस के छिर नीचा कर लेते हैं । ) ( स्वगत ) बाह ! क्या बात है कृपा को तो आप मूर्ति हैं बचन जो बोलते हैं सो मानो फूल झड़ते हैं । जो कृपा से मुनि की देह जलती है तो क्रोध से ब्रह्मा इन के तन को रक्षा करें ।

परशुराम ।—अरे जनक ! देख यह बालक दृढ़ कर के जमपुरी को जाया चाहता है । जल्दी इसको हमारी आंखों की ओट में क्यों नहीं ले जाता । यह नृप बालक देखने में छोटा पर बड़ा खोटा है ।

कच्छप ।—( हंस कर ) ( स्वगत ) आप ही अपनी आंख मूंद कीजिये कहीं कोई नहीं दीख पड़ेगा ।

परशुराम ।—( राम से क्रोध कर के ) क्यों रे शठ ! शिव का धनुष तोड़ के हम को बातें बना के समझाता है । तेरा भाई तेरी सलाह से टेढ़ी टेढ़ी बातें बोलता है और बिपद्गलता है और तू छल से हाथ जोड़ के विनती करता है । अब संयाम में हमारा सन्तोष कर नहीं तो आज से राम कहना छोड़



दे। रे ! शिवद्वीहो सुनता है कि नहीं छल छोड़ कर हम से युद्ध कर नहीं तो भाई समेत तुझ को अभी मार डालता हूँ।

( परशुराम ) फरसा उठाते हैं।

राम।—( नम्र हो कर ) ( स्वगत ) हँ कछ्मण से तो कुछ न चल सकी अब वह क्रोध हमारे ऊपर निकाला चाहते हैं। हाय ! सुधाई भी कहीं कहीं दुखदाई होता है टेढ़ा जान के सब किसी को भय होता है टेढ़े चन्द्रमा को राहु भी नहीं भयता।

( प्रकाश ) हे सुनीश ! रिस को छोड़ दोजिये आप के हाथ में कुठार है और यह मेरा सिर आप के आगे है। स्वामी ! मुझ को अपना दास जान के जिस में रिस जाय सो कीजिये सेवक और स्वामी ! मे युद्ध कैसा ! हे विप्रवर ! क्रोध को परित्याग कीजिये। आप का ज्ञानो भेष देख के बाजक ने कुछ कहा उस का भी दोष नहीं है। कुठार धनुष और बाण हाथ में देख के हमारे भाई ने आप को वीर समझा। और इस से उस की कुछ क्रोध आ गया। आप का नाम जानता था परन्तु आप की पहचानता न था मुना था पर देखा न था। कुछ के स्वभाव से उस ने आप की बातों का उत्तर दिया है स्वामी ! जो आप मुनि की नाईं आते तो वह आप के चरण कमल की धूर अपने सिर में लगाता ! अनजान की चूक क्षमा कीजिये। ब्राह्मण के घर में घनेरी कृपा होनी चाहिये। हे नाथ ! हम आप को बराबरी कैसे कर सकते हैं। कहां सिर और कहां पैर केवल राम यह छोटा सा नाम हमारा है और उस में परशु लगने से आप का नाम बढ़ा है महाराज हमारे पास तो एक गुण का धनुष है और आप के बाण में तो परम पुनीत नव गुण हैं इस लिये हम तो सब तरह से आप से हारे हैं हे विप्र ! आप क्षमा करके हमारे अपराध की क्षमा कीजिये।

परशुराम।—( क्रोध से ) तैं भी अपने भाई की तरह कुटिल है। क्यों रे ? हम को निपट ब्राह्मण ही समझता है। तू मुन में जैसा ब्राह्मण हूँ। मेरा धनुष युवा था और मेरे बाण आहुति थे मेरा कोप प्रवक्त अग्नि था। और चतुरङ्गिनी सेना ईधन थी और बड़े बड़े राजा आकर पशु रूप में ने इसी फरसे से काट काट के उन को बल दे दिया। और इस प्रकार से संसार में कड़ोरीं समर रूपी यज्ञ किये। तू ने मेरा यह प्रभाव न मुना था। नहीं तो केवल ब्राह्मण के भरोसे इतना टेंटे न करता। क्या

एक धनुष को तोड़ने से ऐसा घमंड हो गया तूं समझता है कि हम ने  
हारे जगत को ओत लिया ।

रामचन्द्र ।—( हाथ जोड़ के ) हे सुनिराय ! विचार के बोलो । आप का क्रोध  
बहुत बड़ा है और हमारी चूक बहुत थोड़ी है । हमारे छूते ही तो यह  
पुराना धनुष टूट गया हम घमंड किस बात का करेंगे । भस्मा मुनिये तो  
जो हम ब्राह्मण ज्ञान के आप का निरादर करते हैं तो फिर संसार में  
ऐसा कौन सुभट होगा जिससे डरकर सिर झुकावेंगे । और मुनिये ऋषि-  
राय ? देवता हो या दैत्य राजा हो या प्रजा चाहै हमारे बराबर हो या  
हम से बलवान परन्तु जो कोई लड़ाई में हम को ललकारेगा हम  
अवश्य उस का सामना करेंगे वह काल क्यों न हो । चलो शरीर धारण  
कर के जो लड़ाई में डरा वह अपने कुल का कलंक है हम अपने कुल  
की कुछ प्रशंसा नहीं करते परन्तु स्वभाव कहते हैं कि रघुवंशी युद्ध में  
काल को भी नहीं डरते । और जो आप यह पूछें कि हम से क्यों इतना  
दबते हो । तो इस का कारण यह है कि विप्रवंश की यही प्रभुता है कि  
जो आप से डरे वह फिर किसी से न डरे ।

परशुराम ।—( भैंसवाही और पीछे हट कर ) हे राम ! यह नारायण का  
धनुष है । इस को लीजिये और आप इस को चढ़ाकर खींचिये तो हमारे  
मन का सन्देह जाता रहे ।

( परशुराम धनुष देते हैं वह आप चढ़ जाता है )

परशुराम ।—( अति गद्गद हो कर हाथ जोड़ कर )

जय रघुवंश बलज बल भानू ! गहन दनुज वन दहन लसानू ॥  
जय सुर विप्र धेनु हितकारी । जय मद मोह कोह भ्रम हारी ॥  
विनय सील कल्याणसागर । जयति वचन रचना अति नागर ॥  
सेवक सखद सुभग सब बांछा । जय सरोर छवि कोटि अनंगा ॥  
करी कहा 'सुख एक प्रशंसा । जय सहस्र मन मानस हंसा ॥  
अनुवित बहुत कहै उ अज्ञाता । हमहु महा मंदिर दोउ भ्राता ॥

( प्रणाम कर के नेपथ्य में जाते हैं )

( राजा लोग भी धीरे धीरे नेपथ्य में जाते हैं ) ( बाजा बजता है फूल  
बरसते हैं ) ( सब नेपथ्य में चले जाते हैं ) ( परदा गिरता है )

इति जानकी मङ्गल प्रभात ।

## ऋणी होने के दुःख ।

( स्पेक्टेटर से )

एक दिन का हाल यह है कि मैं एक जेलखाने के पास से जहाँ दीवानों के कैदी रहते थे जाता था कि यकायक मेरे कान में एक ऐसा शब्द आया जैसे कोई भीख मांगता हो। दर्वाजे के पास पहुँचने पर कैदी ने मेरा नाम ले कर पुकारा और कहा कि मुझे कुछ दान देते जाय। मुझे जो उसे देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ और उस की प्रार्थना के अनुसार एक रुपया दे कर चला आया। राह में मैं कई लोगों की चित्तवृत्ति पर विचार करने लगा कि वह हर हाल में नीचता और निर्लज्जता क्यों कर बरत सकते हैं। जिस मनुष्य ने मुझ से भी भीख मांगी थी उस की अवस्था इस समय पचास बरस की होगी और जब उस की अवस्था पच्चीस बरस की थी तब मैं उसे भली भाँति जानता था। उस काल में उस के एक सम्बन्धी के मर जाने से एक बड़ी सम्पत्ति उस के हाथ लगी थी जिस के पाते उस ने सब बातों में वह धूम मचाई और इतना धन लुटाया कि नाक में दम कर दो। जब देखिये इज़रत नशि में चूर रहते थे, बात बात में काड़ पड़ते थे, झूठी कुसंज्ञा कीम पर रहती थीं, अपने बड़ों का सब मर्यादा और विचार उठा दिया था, और छोटी का नाक में दम कर रक्खा था। इन्हीं बातों को जो मेरी आँखों की देखी थी सोचकर मेरे मन में विचार उत्पन्न हुआ कि यह वही नीचता है जो दोनों हालत में अपना रंग दिखाती है और यह वही छोटी चित्तवृत्ति है जो सम्पन्नता काल में लोगों से अभिमान के साथ वर्तती थी और अब भयमंगलों में निर्लज्जतासे काम लेती है।

इस हाल को देख कर मैं अपने जी में एक तो ऋणी होने की दशा दूसरे इस बात पर विचार करने लगा कि किस स्वभाव के मनुष्य इस प्रकार की भूल करते हैं और ऋणी होने से उन को क्या क्या आपत्तियाँ सङ्गती पड़ती हैं। अपने विषय में तो मैं यह कहता हूँ कि मुझे अभिमान के साथ चलाचला कर ऐसी बातचीत करनी कि जिससे औरों की दृष्टि में हम बहुत कुछ मालूम हों सदा से बुरी लगती है और इसी कारण मैं मुझे बहुत व्यय करने को आवश्यकता नहीं पड़ती। इसके सिवा मुझे कबल इतने ही काम करने पड़ते हैं कि एक विश्वास योग मनुष्य को जो मेरी सम्पत्ति का प्रबन्ध करता है तैसाच

किस्ती को जिस समय तहसील होकर आवें रसीद दे दूं और जितना कपड़ा भरी धोवन धो कर लावे उन्हें गिन कर अपना बोध कर लूं। इस में भी मुझे कुछ बड़ा पचड़ा करना नहीं पड़ता क्यों कि मेरा कारम्मा रसीद तैयार कर के मेरे पास लाता है और मैं केवल हस्ताक्षर कर देता हूं और कपड़ों के लिये रुमाज, कुर्ते, दस्ताने भोजे इत्यादि की एक सूची छपी रखी है जिस में हर एक कपड़े की गिनती भर देना हूं और जब वह धोकर आते हैं मिकान कर लेता हूं। अतः जब मेरा निज का काम केवल इतना ठहरा तो मैं अपने सारे अवकाश के समय को दूसरों की सज्जज और व्यय इत्यादि देखने में बिताता हूं। मैं जिधर दृष्टि डालता हूं हर मनुष्य को अपनी धुन में बाधला पाता हूं परन्तु जो लोग धन की खोज में मारे फिरते हैं उन को देख कर इतना आश्चर्य नहीं होता जितना उन लोगों पर जो ऋण सेन के लिये काम कैसे प्रस्तुत रहते हैं। यह बात असम्भव है कि जो मनुष्य ऋण लेता हो वह यह न जानता हो कि जिस समय वह प्रतिज्ञा से झूठा हुआ उसी समय से ऋणदाता को ऋण के परिमाण अनुसार उस मनुष्य की प्रतिष्ठा, स्वतंत्रता और धन पर स्वत्व प्राप्त हो गया। प्रकाश में तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानी वह इस बात को जानता हो नहीं कि ऋणदाता उस के विषय में कठोर से कठोर बात अर्थात् "तुम अधर्मी हो" निकाल सकता है और उस का हाथ पकड़ सकता है तो भी उस के लिये प्रतिज्ञा भंग या बलात्कार करने का दीव स्थिर नहीं होसकता। परन्तु कोई २ लोगों का चित्त ऐसा भाप होता है कि यद्यपि इन बातों का भय उन को दिन रात सताए रहता है फिर भी वह इन के प्रधान कारण को बढ़ाये जाते हैं। अब बताइये कि इस से बुरी कौन सी अवस्था मनुष्य को होगी कि जहां उसने एक मनुष्य को देखा डर के भावे चिहरे पर हवाई उड़ने लगी, कज्जा से आंखें नीची कर लीं और मुंह छिपा कर घर में जा छुसा, न कि जो मनुष्य अधिक ऋणग्रस्त होता है उस को तो यह दशा बीघों मनुष्यों के साथ दिखलाई देती है। इस स्थान पर हमारा यह तात्पर्य नहीं है कि सब लोग जो ऋणी हो जाते हैं वह अपनी व्यय व्यर्थ या अभिमान के कारण होते हैं बल्कि कोई २ अच्छे लोग भी अपने किसी काम के बिगड़ जाने या दूसरे मनुष्य को जमानत करने या इसी प्रकार के दूसरे कारणों से इस आपत्ति में फंस जाते हैं परन्तु यह बात किसी अवसरों और दशाओं में यह बात पाई जाती है इस लिये साधारण रीति पर



उस के विषय कुछ नहीं कहा जा सकता। जहाँ एक मनुष्य इस भांति पर  
 ऋणी हो जाता है वहाँ दश मनुष्य ऐसे दृष्टि पाते हैं जो लोगो के दिखाने के  
 लिये धनिकों का सा धूमधाम करने के कारण ऋणी बनते हैं और ऋणदाता  
 का नाम सुन कर हर समय डरते हैं। सच पूछिये तो ऋणी ऋणदाता का  
 अपराधी है और सब सर्कारी पदाधिकारी और अनुचर जिन का लोग इतना  
 रोब और डर मानते हैं इसी लिये हैं कि ऋणदाता का देन ऋणी से जिस  
 भांति हो दिखवाएँ। यह बात समाज की भलाई से सम्बन्ध रखती है कि  
 इस विषय में जो कुछ न्याय का उद्देश्य हो वह पूरे तौर पर काम में लाया  
 जाय अतः ऐसी अवस्था में ऋणी की स्वतंत्रता ऋणदाता के हाथ में है जैसे  
 बधिक का जीवन उस के बादशाह के वश में रहती है।

## कनरपी घाट लड़ाई।

श्रीयुत लात्तकवि रचित और मान्यवर जी० ए० गियर्सन

साहिब बहादुर संग्रहित।

दोहा—राम नारायण भूपतें, कहाँ मुखालिफ जाय ।  
 हाकिम को मिथिलेश ने, दीन्हो बदल उठाय ॥  
 सोर करो तिरहुति को, ता के रची उपाय ।  
 फौजदार महथा भय, सङ्ग सलावति राय ॥  
 बखत सिद्ध कुल उद्धरन, रोड़ मल्ल दिल पूर ।  
 चौमान भानु भानु सुकुल, एक एक तें मूर ॥  
 याही सभ तैनाथ करि, फौजे पांच हजार ।  
 दिगसुल सन्मुख जोगिनी, महथा उतरे पार ॥ १ ॥

छंद भुजंगप्रयात ।

चले फौज नाजिम को बाजत नगारे । सभे खुल गए तोपखाने सकारे ॥  
 घटा गज के ऊपर सौं गाजत निशानें । जजायिल धमका लसे चन्द्रबानें ॥  
 अही धर मही कोल दिक्पाल कर्णें । उड़े गई अम्बर भरे सूर झम्पें ॥  
 दमामा नफीरी ओ कर्नाल बोलें । बड़े दलदले रे सभे दीप डोलें ॥  
 खड्गें खड़े खूब खामिन के आगें । बड़े रङ्ग तें जङ्ग के जोर पागें ॥

बड़े मोद ले खुल गए द्वार आवें । जो पक्खर लिए शेख सैअद सवारें ॥  
 जो आगे छड़ाबोन के दल विराजें । बरच्छा के छाहें किए रङ्ग साजें ॥  
 चलो जो शिताबी लगी दूर जाना । लदे साथ छक्कर में केते खजाना ॥  
 बड़ी दाप तें कूच दूर कूच आवें । कहों सान को नाहि मघवान पावें ॥  
 सभैं तो पीटि बान्हि कस्मार जड़ावा । पुछे राह में दूर केते भड़ावा ॥२॥

दोहा—खबरदार ने खबरि करि, त्रिप सैं कछुड बुझाय ।

पांच हजार सवार ले, महथा पहुंचे आया ॥

त्रिपति बोलाए ज्योतखी, कीजे कोटि बिचार ।

इहां तो लड़ना है नहीं, बड़ी बलान के पार ॥

भूष ममूरति सकल करि, बाहिर बैठे आय ।

कीजे फौज तयार तू, कहाँ नकीब बोलाय ॥ ३ ॥

छंद नाराय ।

कह्यौ नकीब धाय धाय फौज बीच जाय कै ।

तयार हो बहादुरो सभे सिलाह लाय कै ॥

तयार होन को लगे जमातिदार गजई ।

देसो दिसा अनोर सोर घोर बम्ब बजई ॥

कहू कमान बान सान भांतै भांति देखिए ।

निदान मो मैदान बीच भीम से बिसेखिए ॥

चले महा बली तयार होय भौन भौन सैं ।

तुरङ्ग छेड़ छाड़ में तुलै न पौन गौन तैं ॥ ४ ॥

दोहा—खारियात दै सभनि को, करि के बिबिध बिलास ।

चले सिपाह महा बली, मिथिला पति के पास ॥

द्वारपार भूपाल तैं, अर्ज कियो है जाय ।

हालबन्द तैयार है, हाजिर पहुंचे आय ॥

एक एक करि मोजरा, सब को लीन्ह सलाम ।

हाल महा कवि बैठि गौ, तहां तहां सुख धाम ॥

दच्छिन बैठे त्रिपति को, बाबू और दिमान ।

उत्तर ओझा बैठि गौ, साथ लिए मतिमान ॥

पश्चिम सकल सिपाह गन, बकसी बैठे पास ।

बने बनाए देखिए, पीछे खास खवास ।  
 रीने दिवस हाजिर रहे, रतन रतन सो जान ।  
 मोतसदी तलिका करै, तोफा बान कमान ॥  
 बैठे सभ के बीच मों, महाराज नरइन्द्र ।  
 सोभा बरनो जात नहि, ज्यों तारन मों चन्द्र ॥ ९ ॥

छन्द भुजङ्ग प्रयात ।

सुपण्डित कहूं पच्छ रच्छा संभारे । कहूं चारु बैदिक पढ़े बेद सारें ।  
 कहूं ज्योतखी सो घड़ी नेक साथैं । कहूं आगभी यन्त्र के मन्त्र लाधैं ॥  
 कबीश्वर लों सौ कंड़ाखा बनावैं । कहूं भांट बैठे कबित्यें सुनावैं ।  
 कहूं सर्व जानै कहें सर्व जाने । कहूं कोष साहित्य हूं को बखाने ॥  
 कहूं मोलना सैं करैं बैत बातें । कहूं मोनसी पारसी रङ्ग रातें ।  
 कहूं बल्लभी सो दही द्वार लावैं । लिए गागरी नागरी रङ्ग लावैं ॥ ६ ॥

दोहा—राज सभा रजपूत गन, बरनत हैं कवि लाल ।

बैठे त्रिप चहुओर सैं, लिए ढाल तलवाल ॥ ७ ॥

छन्द चिभंगो ।

राउत रजपूतें सभैं सपूतें लखि पूरहुते सबल डरैं ।  
 सुर बैस बुनेला बीर चनेला लसैं धधेला खड्ग धरैं ॥  
 चौभान बिसेना सन्बर सेना रायठौर दल बीर भरैं ।  
 हाडा कछवाहा लाय सिलाहा हा हा करि कै झुकि परैं ॥  
 दब्यै अरिदम्मा जाति निकुम्भा औ गन्धवरिआ सूर भला ।  
 सेंगर परिबाहा हैहरबाहा हैहयवन्सी भीम भला ॥  
 गौतम बिजहरिआ औ सरवरिआ रघुवन्सी नरनाह कला ।  
 मौडा बछगोती सुजस सुमोती गडवार निज साजिदला ॥  
 सिरमोरक कन्दा कौसिक चन्दा बडगैआं करचोडलिआ ।  
 जो सगरबार सरदार सिपाही गोड अमैठी चौघरिआ ॥  
 तोमर गहनौता गुजर समेता रानावन्सी सिधौटिआ ।  
 मौनस बिजहरिआ त्रिप नमपुरिआ बूड महरीडी सतौडिआ ॥ ८ ॥

छन्द पदाकुलक ।

करम्बार पम्मार कटेला बटहरिआ सुरनेक सिपाही ।



तहँ लाल महा कवि जान महा छवि अरि गन सिर में असि बाही ॥  
दोहा—तुझ तुरङ्गम तरल गति, प्रबल जङ्ग में जोर ।  
ले ले आवत खोलि कै, गहँ बाग की डोर ॥ १० ॥

छन्द भुजङ्गप्रयात ।

तुरकी अरब्बी इराकी सुकच्छी । दरायी खन्हारी जितें मीन लच्छी ॥  
चलै तेज ताजी मुजन्नस पिठानी । करै चारु बाजी कहां लौ वखानी ॥  
भलो चारु कम्बोज अम्बू बनाई । मनो थार पारा धैर चञ्चलाई ॥  
तुरङ्गा सुरङ्गा लसै मीन रङ्गा । पिलङ्गा सबै सों महा नील रङ्गा ॥  
जरदा मुसकी समुन्दा छबीला । हराबोज सबजाओ लीला ओ तीला ॥  
सुरकखाऽवलकखा मनो वायु सकखा । सु उच्चैस्त्रवा को दले दर्प देखा ॥  
खड़े पञ्च कल्यान कल्यान कारी । कपोतच्छबी ज्यों धितेरे समारी ॥  
हजारें हजारें लगे हंगे तारि । चुनी से जड़ी जीन पट्टा समारि ॥ ११ ॥

दोहा—सुमैं सिपाह सलाम करि, चढ्यौ तुरङ्गम खास ।  
किल्लाहूँ तें मिसि लगी, कमला जी के पास ॥  
छेमङ्गरनि निहारि नभ, भौ बिकासित मुख चन्द्र ।  
लम्बोदर बिधेस काहि, बहराए नरइन्द्र ॥  
मच्छ पुच्छ के तिलक करि, पैन्ह कुसुम के मान ।  
कौ प्रनाम बिधेस कै, बहराने भूपाल ॥ १२ ॥

छन्द चिभङ्गी ।

सुर पुर के राजा सङ्कीर्ण भाजा मेरु समाजा जाथ परैं ।  
तहां करत बड़ाइ दुर्गा माई लेहु बचाई अधिक डरैं ॥  
को गनति महीसा रङ्गाधीसा लावें सीसा सुनि ठहरैं ।  
धूली के दर्पें दिनकर झपैं मेदनि कम्पैं को ठहरैं ॥  
बीजापुर बङ्गा और सुरङ्गा जित त्रिप सङ्गा जोग भरैं ।  
हुगली कलकत्ता त्रिपतनि सत्ता तेजहि लत्ता फिरति फिरैं ॥  
दच्छिन नर नाहा तेजि सिलाहा भेजहि बाहा को ठहरैं ।  
ढक्का के रानी फिरहि देवानी ओ मकमानी त्रिप हहरैं ॥  
डिह्ली सगबगी कासी भग्गी बेतिआ टग्गी को ठहरैं ।  
दोनन सभ के गाति डरत सकल आति गैथिल भूपति को बहरैं ॥

दोहा—किलाहूँ तें कूच करि, कर मैं गहो कमान ।  
महाराज डेरा दियो, हरिना के मैदान ॥ १४ ॥

छन्द नराच ।

बड़ी बड़ी वनात की कनात जाहि राउटी ।  
तहां तहा जमाहिरे जड़ाउ लाल तें जटी ॥  
लगे लगे हजार हेम-तार कोर सो भरे ।  
कहू कहू बितान आसमान ल्यो रहै खरे ॥  
कहू अनेक रूप की बिचित्र पालकी पड़ी ।  
कहू हजार के सिलाही और लालकी धड़ी ॥  
कहू तुरङ्ग और मतङ्ग सों धरें हजारहीं ।  
कहू कमान और बेस बान बेसुमारही ॥  
कहू अनेक दुन्दुभी भिदङ्ग रङ्ग रङ्ग के ।  
कहू सिपाह तुङ्गदार जेतवार जङ्ग के ॥ १५ ॥

दोहा—उरदू नृप मिथिलेस को, बरनत हैं कवि लाल ।  
अमर नगर तें चौगुनौ, लागत अधिक बिलास ॥

छन्द भुजङ्ग प्रयात ।

फुहाड़ा गड़े ओ वने चारु हटा । हजारी बेपारी चले बाग्नि टंटा ॥  
घनेरे जहां जाचि की जाचि आबैं । नयी अङ्गना सो बनी गीत गाबैं ॥  
कहू कन्द चीनी बिकै नोन गटा । कि जाके चखे तें सुधा होत खटा ॥  
कहू तें बंतासा बने ओ मिठाई । कहू आनि मेवा धरे हैं बनाई ॥  
कहू मीसरी ओ जिवेवी पके हैं । करैं मोल जोलें बहुतो खड़े हैं ॥  
कहू सकरे औ बिकै गूड़ चक्की । कहू तें सोहारी धरी घीउ पक्की ॥  
जबाड़ा सरीही कहू तेग बिकैं । बाहू जोहरे मोहरे देत सिकैं ॥  
कहू तोसखाने लगी भीर भारी । तुरङ्गे बिकै लच्छ कच्छी खन्हारी ॥  
कहू मत्त मातङ्ग ऊंचे घनेरा । कहू चित्र लेखत खड़े हैं चितेरा ॥  
कहू दाख लाखैं कहू हैं छोहाड़ा । कहू हौज में बेस छूटत फोहाड़ा ॥  
कहू बादला साल बाफी, दोसाला । कहू लाल मोती बिकै कण्ठ माला ॥  
कहू बाफदा धान खासा पोसाकी । कहू नाहि जाने कोउ मोल जाकी ॥

दोहा—रामपटी तैं कूचकरि, पड़ी अचानक जाय ।  
तव डङ्गा भूपति सुन्यो, नाजिम पहुंचै आय ॥ १८ ॥

कन्द भुजङ्ग प्रयात ।

दोऊ ओर फौजें भयी हैं तयारी । तहां बीचदरम्यान दरिआओ भारी ॥  
चलै बान कम्मान गोला हजारै । सभैं एक हो कै गिरै जो सितारे ॥  
छड़ीबाम छूटै गजब के घड़ी सी । छकी आसमानो लगी फुलझड़ी सी ॥  
पहुंच के बहेलिनै ने गोली सैं मारी । हटी जाय पीछे लटी फौज सारी ॥  
जो घाइल पड़े सो चढ़न जाय खाटें । कहूं कोउ आओ न सके नाहि बाटें ॥ १९ ॥

दोहा—बकसी सै भूपति कह्यौ , चढ़ि देखो मैदान ।  
रही सभै होसिआर सैं , करि हैं दगा निदान ॥  
जाफर खां को साथ करि, दूजै हाला राय ।  
डङ्गा दै बकसी चलैं , चढ़ै खेत पर जाय ॥  
महथा पैच खेलाय कै , काहु देखायो बाट ।  
चढ़ी सवारी पार है , गङ्गदुआर के घाट ॥  
धाबा करि कै आए गौ, बिष्णु पूर है टोल ।  
हलकारे त्रिप सैं कहीं , भयी मोहबिल गोल ॥  
आए दोउ महा बली , मित्रजीत उमराओ ।  
भूपति को परनाम करि , दियौ रिकेबनि पांओ ॥ २० ॥

कन्द भुजङ्ग प्रयात ।

चलें बैस अघेल बछबौत हाड़ा । लिए हाथ के बीच तेगा जड़ावा ॥  
बनै सूर के सूर हाड़ा बिराजैं । चहु ओर सै दुन्दुभी जोर बाजैं ॥  
चलै बान कम्मान गोला हजारैं । बहादुर दोऊ बाग को नाहि फेरैं ॥  
कदम दर कदम तैं पड़ी फौज जाई । महा अष्टमी को लगी है लड़ाई ॥  
दमामा नफीरी घने सङ्ग बाजैं । अनोरे पड़ी राम चङ्गै अवाजैं ॥  
उठाई सलावति ने घोड़े के बागैं । भय सिङ्घ उमराओ आड़े हो आगैं ॥  
बहादुर कोऊ कते कहां ल्यो बड़ाई । पड़ी कनै पारथ के ऐसी लड़ाई ।  
निकालि खाप तैं खूब तेगा चली है । महा घनघटा दामिनी जो भयी है ॥  
जखम खाय पीछे भए हैं नचारा । पकड़ा कै सलावति को नीचे दैमारा ॥  
चूले धाय कै देखि आगे भिखारी । पहुंच तो सके नाहि हौदे को मारी ॥

लगी आनि गोली गिरै बीर बङ्गा । भरी सी पुरन्दर पुरी जाय सङ्गा ॥  
चहूँओर जाको छकी कीर्ति जाई । लिए फूल माला परी पास आई ॥  
बड़ी वीर साथी हजारैं हजारैं । सबै छाडि घोडा भयो हैं उतारैं ॥२१॥

छन्द नाराच ।

पड़े उठाय धाय धाय एक एक सैं लडैं ।  
मनो गजेन्द्र सो गजेन्द्र जङ्ग जोर को धरैं ॥  
महीप मित्रजीत राओ बखत सिद्ध को धरैं ।  
चखा चखी चपेट चोट लोट पोट द्वै गिरैं ॥  
सनासनो घनाघनी सुनी न जात तीर के ।  
पड़े जो खूब रङ्ग रङ्ग जङ्ग जो अमीर के ॥  
जमातिदार और चोट को करैं निरन्तरा ।  
पड़े कमान बान सैं मही अकास अन्तरा ॥  
सुन्यो बिपच्छ पच्छ लच्छ धीरता तबै गयी ।  
धड़ा धड़ी हजार बार तोप की जवै भयी ॥  
उठे अनोर घोर सोर ढाल की चटा चटी ।  
जहां तहां चहूँ दिसा क्रिपान की खटा खटी ॥  
भला भला हला करैं लडैं जो वीर कोप सैं ।  
बदा बदी गिरैं जो मुण्ड कोटि २ धोप तैं ॥  
कटैं कवन्ध भूमि घूमि घोर भाउरी भैं ।  
हहा गिराय कै हलाल केहु काहु को करैं ॥  
सुमुण्ड कज्ज रक्त पानि ओ सेमार केस के ।  
नदी वही जहां तहां मैदान मीथिलेस के ॥  
भयो फतेह धैरि जाल को निदान भोगिनी ।  
गयी अघाए खाय खाय गण्ड मुण्ड जोगिनी ॥  
असेख मुण्ड माल जाल कालिका के आउती ।  
कराल भूत साथ भूतनाथ को पेन्हाउती ॥  
सबै फिरै मैदान छाडि फौजदार भागि गौ ।  
भयो फतेह भूप को सुकीर्ति वम्ब बाणि गौ ॥ २१ ॥



दोहा—रन फतेह भौ भूप को, फौजदार गौ भागि ।  
चौगुन द्वै तिरहुति को, कीर्ति उठी है भागि ॥  
छाड़्यौ हाकिम जानि कै, फक्त भिखारी एक ।  
राखि लियौ जगदम्ब ने, महाराज के टेक ॥ २३ ॥

कन्द भुजङ्ग प्रयात ।

जो पीछे लगे हैं सभैं राखो राने । लुटे तोसखाने नगारे निसाने ॥  
कहूं पालकी लालकी कोटि हीरा । लुटे तोसदानें भैं खास बीरा ॥  
ओ तम्बू कनातें लुटे ऊंट गाड़ी । लुटे हैं कहुं केहुं काहुं पिछाड़ी ।  
बरच्छी धमाका लुटे सांमि नेजा । गथे हैं कहुं केहुं काहुं करेजा ॥  
कहुं बाजि हाथी लुटे बैस धाई । महाराज जू को फिरी हैं दोहाई ॥  
दोहा—लूटि कूटि लौट्यो सभनि, लिधुर लपेटे अङ्ग ।  
लाल सुकानि एह भांति भौ, समर भिखारी भङ्ग ॥ २४ ॥

## कवित्त रामायण ।

तुलसीदास कृत ।

वासव वरुन विधि बनते सोहानो दसानन को कानन बसंत को सिंगार सो ।  
समय पुराने पात परत डरत बात पालत लालत रति मार को बिहार सो ।  
देखे वर वापिका तडाग बाग को बनाव रागवस भो बिरागी पवन कुमार सो ।  
सीय की दसा बिलोकि बिटप असोक्ततर तुलसी बिलोक्यो सो तिलोक सोक सोर सो । १  
माली मेघमाल बनपाल बिकराल भट नीके सम काल सींचैं सुधासार नीर को ।  
मेघनाद ते दुलारो प्रान ते पियारो बाग अति अनुराग जिय जातुधान धीर को ।  
दुलसी सो जानि सुनि सीयको दरस पाइ पैठो वाटिका बजाय बल रघुवीर को ।  
विद्यामान देखत दसानन को कानन सो तहसनहस कियो साहसी समीर को । २  
वसन वटोरि बोरि बोरि तेल तभीचर खोरि खोरि धाड़ु आइ बांधत लँगूर हैं ।  
तैसो कपि कौतुकी डरात डीलो गात कैकै लात के अघात सहै जी में कहै कूर है ।  
बाल किलकारी कै कै तारी दै दै गारी दैत पाछे लागे बाजत निसान ढोल तूर हैं ।  
बालधी बढन लागि ठौर ठौर दीन्ही आगि विंध की दवारि कैधौ कोटि शत सूर है । ३  
लाइ लाइ आगि भागे बाल जात जहां तहां लघु द्वै निबुकि गिरि मेरु ते विसाल भो ।

कौतुकी कपीस कूदि कनक कँगूरा चढ्यो रावन भवन चाढि ठाढो त्यहि काल भो.  
 तुलसी बिराज्यो ब्योम बाळधी पसारि भारी देखे हहरात भट काल सों कराळ भो.  
 तेज को निधान मानों कोटिक कृशानु भानु नख विकराळ मुख तैसो रिस लाल भो. ४  
 बाळधी विसाळ विकराळ ज्वाळ जाळ मानों लंक लीलिवे को काल रसना पसारी है.  
 कैधों ब्योम वीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु वीर रस वीर तरवारि सी उधारी है.  
 तुलसी सुरेस चाप कैधों दामिनी कलाप कैधों चली मेरु ते कृशानु सरि भारी है.  
 देखें जातुधान जातुधानी अकुलानी कहैं कानन उजारे अब नगर प्रजारी है. ५  
 जहां तहां बुबुक विलोकि बुबुकारी देत जरत निकेत धाओ धाओ लागि आगि रे.  
 कहां तात मात भ्रात भगिनी भामिनी भाभी ढोटा छोटे छोहरा अभागे भोरे भागि रे.  
 हाथी छोरो घोरा छोरो महिष वृषभ छोरो छेरी छोरी सोवै सो जगावो जागि जागि रे.  
 तुलसी विलोकि अकुलानी जातुधानी कहै बारबार कह्यो पिय कपि से न लागि रे. ६  
 देखि ज्वाळ जाळ हाहाकार दसकंध सुनि कह्यो धरो धरो धौं धी वीर बलवान हैं.  
 लिये सूल सैल पासु परिध प्रचण्ड दण्ड भाजन सनीर धीर धरे धनुवान हैं.  
 तुलसी समिध सौज लंक जज्ञ कुण्ड कखि जातुधान पुंगी फल जव तिल धान हैं. ७  
 श्रुवा सो लँगूल बल मूल प्रतिकूल हवि स्वाहा महा हांकि हांकि हुने हनुमान हैं. ८  
 गाज्यो कपि गाज्यो विराज्यो ज्वाला जालजुत भाज्यो बीर धीर अकुलाइ उठ्यो रावनो.  
 धावो धावो धरो सुनिधायो जातुधान धारि वारि धारा उलचै जलद जौन सावनो.  
 कपट झपट झहराने हहराने बात भहराने भट परे प्रबल परावनो.  
 ढकनि ढकोलि पेलि सचिव चले कै ठेलि नाथ न चलैगो बल अनल भयावनो. ९  
 बड़ो बिकराळ बेख देखि सुनि सिंह नाद उठे मेघनाद सविखाद कहै रावनो.  
 बेग जीतो मारुत प्रताप मारतण्ड कोटि कालऊ करालता वड़ाई जीतो बावनो.  
 तुलसी सयाने जातुधाने पछिताने कहैं जाको ऐसो दूत सो तौ साहेब अबै आवनो.  
 काहे को कुसल रोखे राम वामदेव हू की बिखम बली सो बादि घैर को वदावनो.  
 पानी पानी पानी सब रानी अकुलानी कहैं जाति है परानी गति जानी गज चालि है.  
 बसन बिसरै मनि भूषन सँभारत न आनन सुखाने कहैं क्यों हू कोउ पालि है.  
 तुलसी मदोवैं मीजि हाथ धुनि माथ कहै काहू कान कियो न मैं कह्यो केतौ कालि है.  
 बापुरो बिभीषन पुकारि बारबार कह्यो वानर वड़ो बलाय घने घर घालि है. १०  
 कानन उजाय्यो तौ उजाय्यो न विगाय्यो कलु वानर विचारो बांधि आनो हठि हार सों.  
 निपट निडर देखि काहू न लख्यो बिसेखि दीन्हो न लुड्डाइ काहि कुल के कुठार सों.

छाटे औ बड़े मेरे पूतऊ अनेरे सब सांपनि सो खेलैं मेळैं गेरे छुरा धार सों.  
 • तुलसी मदेवै रोइ रोइ कै बिगोवै आपु बारबार कछो मैं पुकारि दादी नार सों. ११  
 रानी अकुलानी सब डाढ़त परानी जाहि सकैं न बिलोकि बेख केसरीकुमार को.  
 भौंजि भौंजि हाथ धुनि माथ दसमाथ तिय तुलसी तिलोन भयो बाहिर अगार को.  
 सब असबाब डाढ़ो मैं न काढ़ो तैं न काढ़ो जिय की परी सँभारैं सहन भँडार को.  
 खीझति मदेवै सबिखाद देखि मेघनाद वयोलुनियत सब याही दादी नार को. १२  
 रावन की रानी बिलग्लानी कहै जातुधानी हाहा कोइ कहै बीसबाहु दसमाथ सों.  
 काहे मेघनाद काहे काहेरे महोदर तू धीरज न देत लाइ लेत क्यों न हाथ सों.  
 काहे अतिकाय काहे काहेरे अकंपन अभागे तिय त्यागे भोंडे भागे जात साथ सों.  
 तुलसी बदाय बाद सालते बिसाल बाहैं याही बल बालिसों बिरोध रघुनाथ सों. १३  
 हाट बाट कोट ओट अटनि अगार पौरि खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है.  
 आरत पुकारत सँभरत न कोऊ काहू व्याकुल जहां सो तहां लोग चले भागि है.  
 बालची फिरावै बारबार झहरावै झरे बूंदिया सी लंक पधिलाइ पाग पागि है.  
 तुलसी बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं चित हू के कपि सों निसाचरन लागि है. १४  
 लागि लागि आगि भागि भागि चले जहां तहां धीय को न माय वाप पूत न संभारहीं.  
 छूटे वार बसन उघारे धूम धुंध अंध कहैं बारे बूढ़े बारि बारि बारबारहीं.  
 हय हिहिनात भागे जात घहरात गज भारी भीर डेलि पेलि रौंदि खौंदि डारही.  
 नाम कै चिलात बिलालत अकुलात आति तात तात तौसियत शौसियत झारहीं. १५  
 लपट कराल ज्वाल जालमाल दुहुं दिसि धूम अकुलाने पहिचानै कौन काहिरे.  
 पानी को ललात बिललात जरे गात जात परे पाइ माल जात भ्रात तू निवाहिरे.  
 प्रिया तू पराहि नाथ नाथ तू पराहि बाप बाप तू पराहि पूत पूत तू पराहिरे.  
 तुलसी बिलोकि लोक व्याकुल विट्ठाल कहैं लेहि दससीस अव बीस चख चाहिरे. १६  
 बीथिका बजार प्रति अटन अगार प्रति पँवरि पगार प्रति बानर बिलोकिये.  
 अर्द्ध उर्द्ध बानर बिदिसि दिसि बानर है मानो रखी है भरि बानर तिलोकिबे.  
 भूंदे आंखि हीये में उघारे आंखिआगे ठाढ़ो धाड़ जाइ जहां तहां और कोऊ कोकिये.  
 लेहु अव लेहु तव कोऊन सिखावो मानो सोई सतराइ जाइ जाहि जाहि रोकिये. १७  
 एक करै धौज एक कहै काढ़ो सौज एक औजि पानी पीकै कहै बनत न आवनो.  
 एक पर गाढ़े एक डाढ़तही काढ़े एक देखत हैं ठाढ़े कहैं पावक भयावनो.  
 तुलसी कहत एक नीके हाथ लाये कपि अज हूं न छांडे वाल गाल को बजावनो.



धावरे बुझावरे कि वावरे जिआवरे हो औरि आगि लागि न बुझावै सिंधु सावनो, १८  
 कोपि दसकंध तब प्रलय पयोद बोले रावन रजाइ धाइ आये जूथ जोरि कै.  
 कछो लंकपति लंकबरत बुतावो बेगि बानर बहाइ गारी महावारि बोरि कै.  
 भले नाथ नाइ माथ चले पाथप्रदनाथ बरखै मुसलधार बारवार घोरि कै.  
 जीवन ते जागी आगि चपरि चौगुनी लागी तुलसी भभरि मेघभागे मुख मोरि कै. १९  
 इहां ज्वाल जरे जात उहां ग्लानि गरे गात सूखे सकुचात सब कहत पुकार है.  
 जुग पट भानु देखे प्रलय कृशानु देखे सेसमुख अमल बिलोके बारवार है.  
 तुलसी सुन्यो न कान सलिल सर्पी समान अति अचरज कियो केसरी कुमार है.  
 बारिद बचन सुनि धुनै सीस सचिवन कहै दससीस ईस बामता बिकार है. २०  
 पावक पवन पानी भानु हिमवान जम काल लोकपाल मेरे डर डावां डोक है.  
 साहब महेस सदा संकित रमेस मोहिं महातप साहस बिरंचि लीन्हें मोल है.  
 तुलसी त्रिलोक आजु दूजो न बिराजै राज बाजे बाजे राजन के बेटा बेटा ओल है.  
 को है ईस नाम को जो बाम होत मोहूं से को मालवान रावरे के बावरे से बोल है. २१  
 भूमि भूमिपाल ब्यालपालक पताल नाकपाल लोकपाल जेते सुभट समाजु है.  
 कहै मालवान जातुधान पति रावरे को मनहुं अकाज आने ऐसो कौन आजु है.  
 राम कोह पावक समीर सीय स्वास कीस ईस बामता बिलोकी बानर को ब्याजु है.  
 जारत प्रचारि फेरि फेरि सो निसंकलंक जहां बांको वीर तो सों सूर सिरताजु है. २२  
 पान पकवान बिधि नाना कै संधानो सीधो बिबिधि बिधान धान बरत बखारही.  
 कनक किरीट कोटि पलंग पेटारे पीठ काढ़त कहार सब जरे भरे भारही.  
 प्रबल पावक बाढ़े जहां काढ़े तहां डाढ़े झपट लपट भरे भवन भंडारही.  
 तुलसी अंगारन पंगारन बजार बच्यो हाथी हथसार जरे घोरे घोरसारही. २३  
 हाट बाट हाटक पिघिलि चलो घीसो घनो कनक कराही लंक तलफत जायसों.  
 नाना पकवान जातुधान बलवान सब पागि पागि ढेरी कीन्हीं भली भांति भायसों.  
 पाहुने कृशानु पवमान सो परोसो हनुमान सनमानिकै जेवाये चित्त चायसों.  
 तुलसी निहारि अरि नारि दैद गारि कहैं बावरे सुरारि बैर कीन्हों राम रायसों. २४  
 रावन सों राज रोग बाढ़त विराट सर दिन दिन बिकल सकल सुखरौं कसो.  
 नाना उपचार करि हारे सुर सिद्ध मुनि होत न बिसोक औत पावै न मनौं कसो.  
 राम की रजाय ते रसायनी समीरसूनु उतरि पयोधि पार सोधिसर बांक्सों.  
 जातुधान बूटपुटपाक लंक जातरूप रतन जूतन जारि कियो है मृगांकसो. २५

जारि बारि कै बिधूम बारिधि बताइ लूम नाइ माथो पगनि भो ठाढ़ो करजोरिकै.  
मातु कृपा कीजै साहि दान दीजै सुनि सीय दीन्हीं है असीस चारु चूड़ामनि छोरिकै.  
कहा कहौ तात देखे जात जो बिहान दिन बड़ी अवलंबही सो चले तुम तोरिकै.  
तुलसी सनीर नैन नेह सों सिथिल बैन बिकल बिलोकि कपि कहत निहोरिकै. २६  
दिवस छसात्त जात जानबे न मातु धरु धीर अरि अन्त की अवाधि रही थोरिकै.  
बारिधि बंधाय सेतु ऐहैं भानुकुलकेतु सानुज कुसल कपि कटक बटोरिकै.  
बचन विनीत कहि साता को प्रबोध करि तुलसी त्रिकूट चाढि कहत डफोरिकै.  
जैजै जानकीस दससीस करि केसरी कपीस कूद्यो बात घात उदधि हलोरिकै. २७

सवैया—वेद पढ़ै बिधि सम्भु समीत पुजावन रावन सो नित आवैं ।  
दानव देव दयावने दीन दुखी दिन दूरहि ते सिर नावैं ॥  
ऐसेहु भाग भगे दसभाल ते जो प्रभुता कवि कोबिद गावैं ।  
रामसे बाम भये लहि बांमहिबाम सबै सुख सम्पाति लावैं ॥ २ ॥  
वेद बिरुद्ध मही मुनि साधु संसोक किये सुरलोक उजाग्यो ।  
और कहा कहौ तीय हरी तबहुं करुनाकर कोप निवाग्यो ॥  
सेवक छोहरे छाँडि छमा तुलसी लख्यो रामसुभाव तिहाग्यो ।  
तौलौ न दापदल्यो दसकन्धर जौलौं बिभीषन लात न माग्यो ॥ ३ ॥  
सोक समुद्र निमज्जत काढि कपीस कियो जग जानत जैसो ।  
नीच निसाचर बैरी को बन्धु बिभीषन कीन्ह पुरन्दर सैसो ॥  
नाम लिये अपनाय लियो तुलसी सो कही जग कौन अनैसो ।  
आरत आरतिभंजन राम गरीब निवाज न दूसर ऐसो ॥ ४ ॥  
भीत पुनीत किये कपिभालु को पाल्यो ज्यों काहु न बाल तनूजो ।  
सज्जन सीध बिभीषन भो अजहूँ बिलसै बर बन्धु बधूजो ॥  
कौसल पाल बिना तुलसी सरनागत पाल कृपाल न दूजो ।  
कूर कुजाति कपूत-अघी सब की सुधरै जो करै नर पूजो ॥ ५ ॥  
तीय सिरोमनि सीय तजी ज्यहि पावक की कलुखाई दही है ।  
धर्म धुरन्धर बन्धु तज्यो पुरलोगन की विधि बोळि कही है ॥  
कीस निसाचर की करनी न सुनी न बिलोकि न चित्त रही है ।  
राम सदा सरनागत की अनखौही अनैसी सुभाय सही है ॥ ६ ॥

छप्पय—जाइ सो सुभट समर्थ पाइ रन रारि न मंडै ।

जाय सो जती कहाय विषय बासना न छंडे ॥  
जाइ धनिक बिन दान जाइ निर्धन बिन धर्महि ।  
जाइ सो पंडित पढ़ि पुरान जो रत न सुकर्महि ॥  
सुत जाइ मातुपितु भक्ति बिन तिय सो जाइ जेहि पति न हित ।  
सब जाइ दास तुलसी कहै जौ न राम पद नेह नित ॥११०॥

सवैया—भौंह कमान सुधान सुठान जे नारि बिलोकन बान तें बाँचे ।  
कोप कृशानु गुमान अँवौघट ज्यों जिनके मन आँचन आँचे ॥  
लोभ सबै नट के बस है कपि ज्यों जग में बहु नाच न नाँचे ।  
नीके हैं साधु सबै तुलसी पै तेई रघुवीर के सेवक साँचे ॥१११॥  
बालक बोलि दिये बाल कालको कायर कोटि कुचाल चलाई ।  
पापी है बाप बड़े परिताप ते आपनी ओर ते खोरि न लाई ॥  
भूरि दर्ई बिप मूरि भई प्रह्लाद सुधाई सुधा की मलाई ।  
राम कृपा तुलसी जन को जग होत भले को भलोई भलाई ॥११४॥  
कंस करी ब्रजवासिन पै करतूति कुभांति चली न चलाई ।  
पाण्डु के पूत सपूत कपूत सुजोधन भो कलि छोटी छलाई ॥  
कान्ह कृपाल बड़े नतपाल गये खलखेचर खीस खलाई ।  
ठीक प्रतीति कहै तुलसी जग होइ भले को भलोई भलाई ॥११५॥  
अवनीस अनेक भये अवनी जिनके डरते सुर सोच सुखाहीं ।  
मानव दानव देव सतावम रावन घाटि रच्यो जगमाहीं ॥  
ते मिलते धरि धूरि सुजोधन जे चलते बहु छत्र कि छाहीं ।  
वेद पुरान कहैं जग जान गुमान गोविंदहि भावत नाहीं ॥११६॥

घनाचरी ।

जहां बन पावनो सुहावने बिहंग मृग देखि अति लागत अनंद खेत खूंट सो ।  
सीता राम लखन निवास बास मुनिन को सिद्ध साधु साधक सबै बिबेक बूट सो ॥  
झरना झरत झार सीतल पुनीत बारि मंदाकिनि मंजुल महेस जटा जूट सो ।  
तुलसी जो रामसों सनेह सांचो चाहिये तौ सेइये सनेह सों बिचित्र चित्रकूट सो ३३५॥  
मोह बन कलिमल पलपीन जानिजिय साधु गाइ बिप्रन के भय को नेवारि है ।  
दीन्हि है रजाय राम पाइ सो सहाय लाललखन समर्थ वीर हेरि हेरि मारि है ॥  
मंदाकिनी मंजुल कमानु आसिवान जहां बारिधार धीर धरी सुकर सुधारि है ।

चित्रकूट अचल अहेरी बैठयो घात मानों पातक के ब्रात घोर सावज संहारि है ॥१३६॥  
 सबैया—लागि दवारि पहार ढही लहकी कपि लंक जथा खर खोकी ।  
 चारु चुवा चहुंओर चली लपटैं झपटैं सो तमीचर तोकी ॥  
 क्यों कहि जात महा सुखमा उपमा तकि ताकत है कबिकोकी ।  
 मानो लसी तुलसी हनुमान हिये जग जीति जराय की चौकी ॥१३७॥

### आर्यावर्त का विलाप ।

हाय ! पीड़ित न रहै जो मेरा किस भात निदान,  
 क्यों न फट जाय हृदय और निकलने प' हो प्रान ।  
 शोक-सागर में भला डूब न क्यों लुप्त हो ज्ञान,  
 मिल बैरो पड़े दुःख, अपना पराया, अनजान ।  
 देश की हो य' दशा और य' गति लोगों की,  
 बिना संदेह है मारी गइ मति लोगों की ॥ १ ॥  
 हाय ! कन भर न विस्तरता है तेरा दुख मन मे ।  
 खे गया कौन बदल रंग-भवन को धन से ?  
 किस लुटेरे को हुआ राज तेरे धन धन से ?  
 कौन सा रोग गया तुझ में सभा यों सन से ?  
 आर्यावर्त ! तु क्यों करति है, दिन रात, विलाप,  
 कौन से कृपण हृदय ने किया है यह सन्ताप ॥ २ ॥  
 दुर्दशा तेरि है जब ध्यान में आती एक बार,  
 भांसु भाखों में समझ जाता है, संघ जाता है तार ।  
 सोच यों व्यग्र है धारता कि न रहता है विचार,  
 सर्वथा जो से विस्तर जाता है जग का व्यवहार ।  
 सोना खप जाता है, अच्छा नहिं धन लगता है,  
 शोष को आग से भस्म होने लगता है ॥ ३ ॥  
 एक दिन वो' ये कि था नाम तेरा हो निकला,  
 तेरिहो शीत कि हर देश में फिरतो थो धना ।  
 थो न धन धन कि कमी, सब का सबहिं था पूरा,  
 पाखें जिस ओर थिं उठती बस उधर सब कुह था ।  
 या' जो शोभा थी, कहीं देख नहीं पड़ती थी,  
 अमरा स्वर्ग के आने के सिये सरतो थी ॥



## मेघदूत ( पूर्वार्द्ध )

सवैया—कारण मैं उनमत्त भएँ इक जज दई सब खोई बड़ाई ।

नारि तजै निज हादश मास को सोई बड़ी यह नाथ खड़ाई ॥

जाइ बस्यो गिरिराम को आश्रम शीतल छाँड़ मैं रोई बनाई ।

जानकी स्नान को पावन नीर बहे चहुँ ओर जहाँ सुखदाई ॥ १ ॥

बसि ताही महीधर में बिरही कितने एक मास बिताइ गयो ।

भुजबन्द गए गिर सोरन के इतनी थकि दूबर गात भयो ॥

फिर जागत मास असाढ़ कश्यो गिरि पै घन सोइनी पाइ क्यो ।

सुक के मनहुँ गजराजबनि गढ़टावन खिल मचाइ रह्यो ॥ २ ॥

कोतकी फूल पुलावनहार वा मेघ पै दास कुविर गयो ।

अक्षर में असुवा भरके कहुँ बेर कीं सोचत ठाडो भयो ॥

कंठ लगी सुखियानहुँ के चित धीरज दुखि घटा न रह्यो ।

बात कहा फिर ऐमेन को जिन भीत तें दूर बसेरो क्यो ॥ ३ ॥

सावन के ठिग आवन में बह नारि के प्रान बसावन काज ।

बादरदूत बनावन को कुशलात संदेश पठावन काज ॥

को कर कूटजफूल नए मनकसिपत अर्घ बनावन काज ।

खोशन प्रीति के बोल लग्यो हंसतंसुख नेह बटावन काज ॥ ४ ॥

घनाधरी—घाम धूम नीर औ समीरन को सन्निपात ऐसी जड़ मेघ  
कहा दूत काज करिहै । नेह को संदेशो हाथ चातुर पठैवे जोग बादर  
बिचारो कीन रीति से छचरिहै ॥ बाढी छत्कंठा जल बुझि बिचरानी सब  
बाही सो निहोरे जानि काज यातें सरिहैं । काम के सताए मतिहीन हैं  
सदाईं तिन्हें चेत औ अचेत कहा मेढ़ जानि परिहै ॥ ५ ॥

पुष्करावर्तक हैं प्रसिद्ध लोक लोकन में वंश तिनही के नीके तैंने जन्म  
पायो है । इच्छारूप धारन को गति है दर्ई ने दर्ई मन्त्री सुरराज हूने आपनी  
बनायो है ॥ एते गुन जानि तोपै संगिता भयोहुँ मेघ बन्धुन तें दूर मोहि  
विधि ने बसायो है । सज्जन पै माँगिबो बिनाहुँ सरें काज भयो नीच पै सरें हूँ  
काज पाछो ना बनायो है ॥ ६ ॥

तू तो है सदाईं तनताप के सताएन को भयो हूँ वियोगी मैं कुविर कोप  
पाई के । जेम को संदेशो यातें मेरो प्रानप्यारी पास अककापुरी में भीत दोनो

पहं चार्ह के ॥ देखन ही भोग आछी नगरी बनी है वह कीनी जचराजम  
सुवास जहाँ जाइ के । वागन में बाहरें विगजें चन्दचूड़ जाके निजही अटाय  
रहे चन्दकटा छाइ के ॥ ७ ॥

यातपथ जात तोहि नागी परदेसिन की देखेंगी बार केशन कर सी  
उठाइ । बालम के भावन को आसा उर साइ जाइ धीरज धरेंगी पीर नैक  
जिय सी बिहाइ ॥ आपं सो समीप कोई नारि की विभारि नाहिं बिरहा  
विधा में नर जीपे अपनी बसाइ । ऐसी मंद भागी में हूँ दूसरी न पीर होइ  
पराधीनवृत्ति हेत बैठी सुख हूँ नसाइ ॥ ८ ॥

दोहा—मन्द मन्द मारत बहै , जैसी तोहि सुहाइ ।

हरषित यह चातक मधुर , बापें बोली आइ ॥

वसुन्धी हूँ नभ में सुभग , आईं बांधि कतार ।

गरभदान समरथ समुक्ति , देन तोहि मनुहार ॥ ९ ॥

मग में तू रुकिए नहीं , खिखि है भोजि जाइ ।

छोवात दिन गिनती करति , पति भरता चितलाइ ॥

नेही हिरदी नारि की , कोमल जैसी फूल ।

बिरह मांझि आसा करति , ताहि ककुब डढ़ मूल ॥ १० ॥

छद्रवती छिति की करति , उच्छ्वसिन्घ उपजाइ ।

ऐसी तेरी गरज सुनि , हंस दियो हुलसाइ ॥

मानमरोवर अलन की , कमल नाल लै पाथ ।

उडि है धुर कैलास की , राजहंस तो साथ ॥ ११ ॥

मांगि सीख गिरि तंग पै , अब मोतहि भरि अंक ।

पावन रघुपति चरन सी , अंकित याको लंक ॥

जब जब तू यातें मिलत , बहुत दिनन में आइ ।

प्रोति प्रगट तो में करत , आंसू तम बहाइ ॥ १२ ॥

कंठलिया—गैल बताऊं मेघ अब जिहिं चलि पावे चैन ।

फिर सुनियो संदेश सम कानन अति सुखदैन ॥

कानन अति सुखदैन थके वा मग में जब तू ।

चलियो धरि धरि पांव शिखर ऊंचिन पै तब तू ॥

भूख बगी सीता मिलें उथरि अरु बिन मैल ।

पो तिन की पानी तुरत कीजी अपनी गैल ॥ १३ ॥

## रुक्मिणी परिणय ।

( कवित्त दंडका । )

कारे नाग मेघ राजें दुन्दभी अवाजें गाजें बाजें  
 बेस बांसुरी विराजें मोर सोर है । चमकें कृपान  
 तेई दामिनी दमड्डै दौरि बान बृन्द बूंदन की  
 भई दृष्टि घोर है ॥ फहरें पताके व्योम डहरें ते  
 बकपांति मांगें पानी घायल तेचातृक वा ठौर है ।  
 इन्द्रचाप चाप झिल्ली झिलीम झनझुति हैं  
 फैली रन पावस की सोभा चहुँ ओर है ॥ १ ॥

सोनित सरीर छाये किसुक सुहाये भट लतिका  
 कृपानहीं की लोनी लहराती है । रतन अनेक ते  
 प्रसून रंग रंग राजें कोप छाये बीर मुख कोक  
 नदपाती है ॥ बाजत मृदङ्ग संख कोकिला कलापें  
 तेई बानन की गांसी अलि औलि दरसाती है ।  
 बीर औ बराङ्गना बिमान में विनोद करें समर  
 बसन्त बेस सोभा सरसाती है ॥ २ ॥

तल के प्रहार होते तेई मनो ताल देते दुन्दुभी  
 मृदङ्ग ढाढ़ी मारु गान करते । गदा के अवाज ते  
 मैजीरा मनो बाजि रहे तेग की ठनाक ते तमरा  
 सुर भरते ॥ जोगनी जमाति भांति भांति दौरै  
 ठौर ठौर तेई नाचि गनिका के गुन मन हरते ।  
 संगर, सभा में संगीत सांचो सौहि रह्यो बीर प्रान  
 के इनाम दै दै नहिं टरते ॥ ३ ॥



पिचका तमश्चा अहै सोनित को रंग बहै धुरि-  
की अवीर चहुँ ओर दरसाय है । दुन्दुभी धुकार  
सो मृदंग ठनकार होती भिडिपाल केरे कुमकुमा  
त्यो सुहाय है ॥ जोगिनी जमाति भूत औ पिसाच  
प्रेत पांति नाचि नाचि भांति भांति बोलै धाय  
धाय है । बीर जदुबंसी शत्रु सेना सुन्दरी के संग  
खेलें फागु जंग अंग अंग रंग छाय है ॥ ४ ॥

बानन के माड़ो छाये कुम्भ मुण्डही के भाये  
केटे केस तेई कुस सोनित सु नीर है । भटन के  
पीठिन की पीठि पील पेट बेदी प्रेत औ पिसाच  
ते पुरोहित की भीर है ॥ जोगिनी जमाति नारी  
मंगल को गानवारी दन्तन के लाजा अरु मेदन  
की खीर है । कोप को कृसान त्योंहीं सुरुवा कृपा-  
नहीं को बधूवै बरांगनानि व्याह ते प्रवीर है ॥ ५ ॥

एक ओर गूद एक ओर केस मध्यरक्त सुरसरि  
सूरसुता सरस्वती भावै है । छत्र वटवक्षतरे  
लोथिन के घाटन में मोदित मुनीसन ते प्रेतद्वान-  
नहावै है ॥ क्रीड़ा करें जोगिनी अनेक देवनारी  
सम मुण्ड पुण्डरीक लै लै खेल को मचावै है । शम्भु  
को चढ़ाय सीस प्रान दान दै दै तहां समर  
विषेनी न्हाय स्वर्ग सूर जावै है ॥ ६ ॥

## भाषासार पहला भाग ।

यह पुस्तक मिडल स्कूली और जिन्हा स्कूली में पढ़ाई जाती है लड़के और मास्टर लोग बराबर भाषासार की ( टीका ) मांगते थे पर अब तक यह कपो न थी अब सातवीं एडिशन में बहुत कुछ घटा बढ़ाकर छापी गई है मैंने संशुद्ध करता की राय ली कर इस के कई एक विषय की उत्तम उत्तम टीका बनवाई है । यदि मास्टर और विद्यार्थियों को इस से कुछ भी लाभ हुआ तो और और विषय जो कविता में बाकी रह गई है उस को भी टीका बनवा कर छपवा दूंगा ।

## बालकांड सटीक ।

'बंदो राम नाम रघुवर की' से लेकर 'दुमिरि भवानी संकरहि कह कवि कथा सहाय' तक का अर्थ अपूर्व रीति से छापा गया है । क्योंकि भाषासार को कोर्स की पुस्तक है उस में यह प्रकरण दिया गया है और इस का अर्थ ऐसा उत्तम रीति से लिखा है जिस से उत्तम होना ही दुर्लभ है । पाठकों की और वर्नेकुलर के हरेक विद्यार्थियों को एक एक प्रति अपने पास रखना चाहिये यह ऐसा है कि जिस से पाठकों के पास पढ़ने की आवश्यकता नहीं थाप से थाप अर्थ मालूम हो जायगा और इस टीका के पढ़ने से इतनी चतु-राई होगी कि साधारण लोगों में अच्छा पंडित गिना जायगा । यह पुस्तक बड़ी है । दाम भी साधारण लोगों के सुभीते के लिये ॥१॥ आना रक्खा गया है ।

## सूरसागर सटीक ।

पचासी कूट के सूरसार का अर्थ भली भांति से किया गया है एक बार पढ़ने से अर्थ भली भांति से आ जायगा इस में कुछ सन्देह नहीं और इस के बिना क्या विद्यार्थियों और क्या पाठकों सभी को अव्यक्त कष्ट होगा इसलिये आठ आना स्वर्च कीजिये नहीं तो फिर यीहीं रहियेगा । यह टीका भारतेंदु हरिश्चन्द्र संशुद्धित है ।